स्वानुभवसारका सूचीपत्र

प्रथमभाग समाप्ति।

द्वितीय भाग समाप्ति

सूचीपत्र

तृतिय भाग समाप्ति

॥ भूमिका ॥

श्री कृष्णोजयति ॥

स्वानुभवसार उपोद्घात ॥

विदित होकि ये शरीर सम्वत् १९८६ में श्रावण कृष्ण २ के दिन ब्राह्म मुहूर्त्त में उत्पन्न हुवा है मेरी जननी हरिभक्ति में तत्पर रही यातें मेरो प्रतिदिन शङ्खोदक तें प्रोक्षण करावती और श्रीभगवत्स्नानोदक का मोकूं पान करावती ऐसें जब मैं पाँच वर्षकी अवस्थाकूं प्राप्त हुया तब माता के साथ ही श्रीमहाभारत और श्रीमद्भागवत इनका श्रवण करता रहा जब कथा समाप्त होती तब मेरी माता श्रुतकथाका मोकूं पुनः श्रवण करावती और मेरे मुखतें यथातथा श्रवण भी करती और मेरे पास श्रीकृष्ण के गुणों का गान करती यातें बाल्यावस्था सें हीं मेरी प्रीति श्रीकृष्णमें दृढ होगई और मेरे ज्येष्ठ भ्राता मोकूं अध्ययन करावते इस प्रकारतें ७वर्षकी अवस्था मेरी होगई और जब अष्टम वर्षका प्रवेश हुवा तब मेरा शरीर नाना विध रोगों करिकें आक्रांत होगया जिन रोगोंकूं वैद्यों नैं असाध्य कहे और ज्योतिर्विदों नें मेरे पिताजीनैं निश्चय किया सो उननें भी इस वर्ष के अष्टम मासमें मेरे शरीरपातका दिन निश्चित करदिया जब वो निश्चित दिन प्राप्त हुवा उसके प्रहर रात्रि शेष समय में दोय यमदूतोंका दर्शन हुवा सो सूर्योदय पर्यन्त होता रहा सो मैं मेरी माताकूं कहता रहा और उनतें भीत होकरिकें विलाप करता रहा जब सूर्योदय हुवा तब वे दृष्टि पथतें दूर भये उस ही समयमें मेरे शरीर के सकल रोग निवृत्त होगये यातें मेरी माता परमेश्वर का परम अनुग्रह मानि करिकें अति आनन्दित भई ।

अब उस दिन तैं मेरी ये व्यवस्था भई कि दिनमैं तो पठन औ नानाविध बालक्रीडा इनमैं प्रवृत्ति होणैं तैं कुछ भी स्मरण होवै नहीं औ जब रात्रि होय तब उन पुरुषोंका स्मरण हो करिकैं अत्यन्त भय होवै तब मैं ऐसैं प्रार्थना करूँ कि हे कृष्णचन्द्र उन भयानक पुरुषों तैं मेरी रक्षा आप ही करोगे और मेरा कल्याण मोकूँ आपही दिखावोगे और कोई समय मैं अतिभय होवै तब शयन स्थान मेरे अश्रुप्रवाहतैं आर्द्र भी हो जावै इस व्यवस्था तैं कालक्षेप होतैं मेरी अष्टादश वर्षकी अवस्था होगई जिसमैं मेरे कोश व्याकरण पञ्चकाव्य छन्दोग्रन्थ नायिकाभेद अलङ्कार रस नाटक श्रीमद्भागवत इनका तो अध्ययन होगया और नवीन काव्य निर्माण की शक्ति भी हो गई पीछैं मैंनैं न्यायशास्त्रका अध्ययन किया तो तर्कों करकै विद्वानों का आक्षेप करणैं लगा पीछैं सम्वत् १९१६ मैं स्वतः सद्गुरुतैं प्रसिद्ध मन्त्र की दीक्षा भई जिससैं मेरी ये व्यवस्था भई कि शास्त्रोंमैं तैं बुद्धि सङ्कुचित हो करिकैं कल्याण की चिन्तामैं मग्न होगई सो १९१८के सम्वत् पर्यन्त नवीन शास्त्रका सङ्ग्रह हुआ नहीं पीछैं चित्तमैं ऐसी स्फूर्ति भई कि वेदान्तशास्त्र परमात्माका साक्षात्कार करावै है यातैं इस का अध्ययन करणां चाहिये तो मैं वेदान्तका अध्ययन करणैं लगा और यथाशक्ति वेदान्तशास्त्र अवगत किया परन्तु मेरा मन सन्तुष्ट हुआ नहीं काहेतैं कि मेरै वेदान्त का पठन केवल पण्डित कहावणैं की कामना करिकैं ही नहीं रहा किन्तु आत्मज्ञान सिद्ध करणैंकी कामना करिकैं हुया सो आत्मज्ञान हुआ नहीं ये ही मनके असन्तोष मैं हेतु रहा ।

अब मेरी ये गति भई कि इधर तो यौवनका प्रवेश यातैं तो कामादिक शत्रुओं की प्रबलता और इधर गृहमैं सङ्कोच यातैं उपार्जन की आवश्यकता और उन भयानक पुरुषोंका स्मरण होय यातैं अत्यन्त भय औ आत्मज्ञान की लालसा यातैं मेरा मन अत्यन्त आतुर रहै एक समय का वृत्तान्त है कि श्रीकृष्ण के अनुग्रह तैं कोई महात्मा दृष्टि पड़े आप भी ऐसे कि जिन के पूर्ण शान्ति और पूर्ण ही शम्पन्नता और जो परिग्रह शून्य और आत्मानुभवमैं सुमग्न मैंने इनसैं प्रार्थना किई कि महाराज मैंने आत्मानुभव होवे के अर्थ वेदान्तशास्त्रका अध्ययन किया और जैसी बुद्धि है तैसा श्रवण भी किया परन्तु मेरा मन आत्मानुभव के विषय निःसंशय हुआ नहीं ।

तब उननें मोतें ऐसें आज्ञा किई कि तुमारे ज्यो संशय होय तिस कूँ पण्डितों सें निवृत्त करलेयो तब मैंनें उनतें प्रार्थना किई कि महाराज किसी श्लोकमें अथवा श्रुति में अथवा सूत्र में अथवा प्राचीन आचार्यों की लिखित ज्यो पङ्क्ति तामें सन्देह होय तहाँ तो पण्डित अन्वय ओर अर्थ कहिदेवें हैं परन्तु जब मैं ये कहूँ कि मोकूँ अनुभव करायो तबवे ऐसें कहेंहै कि हमनें तो तुमकूँ श्रवण कराय दिया अब मनन निदिध्यासन करिकें तुम आपही साक्षात्कार सिद्ध करलेयो ओर ये श्रीकृष्ण का वचन प्रमाण कहें हैं कि

तत्स्वयं योगसंसिद्धः कालेनात्मनि विन्दति ॥

अर्थात् जिस का अन्तःकरण निष्कामकर्म करणें तें शुद्ध हो जाय है वो आप ही आत्मज्ञान कूँ प्राप्त होजाय है ।

ओरकोई पण्डित ऐसें कहेहै कि तुम सगुण ब्रह्म के उपासक हो यातें तुमकूँ आत्मज्ञान होवे नहीं ओर कोई ये कहे हैकि सन्न्यास विना ज्ञान होवे नहीं यातें तुम सन्न्यास करो ओर कोई ऐसें कहे है कि इस समय में अन्य उपाय तो ज्ञान होणें का है नहीं यातें काशी में शरीरपात करो तहाँ श्रीसदाशिव अन्त समय में तारक की दीक्षा करिकें आत्म ज्ञान करावे है ऐसे ऐसे निश्चय पण्डितों तें श्रवण करिकें में अत्यन्त व्याकुल होय आप के शरणागत हुवा हूँ सो मोकूँ आप अनुग्रह करिकें आत्मज्ञान करावो ।

वे पूर्वोक्त महात्मा मेरी प्रार्थना श्रवण करिकें ओर मोकूँ आतुर जाणि करिकें कृपादृष्टि करिकें

अनन्याश्चिन्तयन्तो मां ये जनाःपर्युपासते
तेषां नित्याभियुक्तानां योगक्षेमं वहाम्यहम् ॥

ये श्लोक पढि करिकें ऐसें कहणें लगे कि जिनके ऊपर श्रीकृष्णका अनुग्रह होय है उनकूँ हीं आत्मज्ञान का लाभ होय है ओर हुवा ज्यो आत्मज्ञान लाभ तिसकी रक्षा भी उनके ही होय है सो ज्ञान यहीहै कि ॥

वासुदेवः सर्वम् ॥

परन्तु ये ज्ञान जिस कूँ होय ऐसा पुरुष अति दुर्लभ है काहेतें कि श्रीकृष्ण हीं आज्ञा करैहै कि ॥

वासुदेवः सर्वमिति समहात्मा सुदुर्लभः ॥

श्रोर श्रुति भी ज्ञानका स्वरूप ये ही कहै है कि ॥

सर्वं खल्विदं ब्रह्म ॥

श्रोर ॥

आत्मैवेदं सर्वम् ॥

परन्तु तुम ये निश्चित जानौं ज्यो सर्व परमात्म रूप ही हुआ तो परमात्मा में अज्ञान श्रोर भेद सम्भवै नहीं श्रोर ज्यो अज्ञान तथा भेद अलीक भये तो ज्ञान स्वतः सिद्ध हुवा तथापि परमात्मा अज्ञान के वि हीं प्रच्छन्न है श्रोर ज्ञान स्वतःसिद्ध है तोभी तत्वदर्शि पुरुष के उपदे तैं होय है श्रोर केवल शास्त्रपाठि पुरुष तैं होवै नहीं काहेतैं कि श्रीक ष्ण नैं अर्जुन कूं कही है कि ॥

उपदेक्ष्यन्ति ते ज्ञानं ज्ञानिनस्तत्त्वदर्शिनः ॥

श्रोर श्रुति भी ये ही कहैहै कि

समित्पाणिः श्रोत्रियं ब्रह्मनिष्ठमुपगच्छेत् ॥

ये कथन महात्मा का श्रवण करिकैं मैं अत्यन्त आश्चर्य कूं प्राप्त हु श्रोर उनतैं कहनैं लगा कि महाराज अज्ञान श्रोर भेद इनकूं तो यहु अ न्यपकार मानैं हैं आप इनकूं अलीक कैसैं कहो हो ये मेरा वचन श्रव करिकैं उननैं ऐसैं आज्ञा किई कि

ज्ञानं विज्ञानमास्तिक्यम् ॥

यहां श्रीकृष्णनैं ज्ञान दोय बताये हैं एक तो शास्त्रीय ज्ञान श्रो दूसरा अनुभव ज्ञान सो ग्रन्थों के पठनतैं तो शास्त्रीय ज्ञान होय है श्रो ब्रह्मनिष्ठ आचार्य के उपदेशतैं अनुभव ज्ञान होय है शास्त्रीय ज्ञानवा पुरुषों नैं ग्रन्थ बनाये हैं उनमैं तो भेद अविद्या इनको. अवलम्बन क रिकै ज्ञान वर्णन किया है श्रोर अनुभव वाले पुरुष जे उपदेश करैं हैं अविद्या श्रोर भेद इनको निषेध करिकैं स्वतः सिद्ध ज्ञान वर्णन करैं श्रोर इस ज्ञानकूं ब्रह्मरूप कहैं हैं तो इस कथनतैं ये अर्थ सिद्ध हुवा कि अनुभव वाले पुरुष के उपदेशतैं अनुभवज्ञान होय है केवल ग्रन्थों के पढ़

तैं आत्मानुभव होवे नहीं ऐसैं कहि करिकैं मेरे उत्कट जिज्ञासा जाणि-
करिकैं ओर मेरी बुद्धि की परीक्षा करिकैं ओर मोकूं आत्मोपदेशको अधि-
कारी जाणि करिकैं ऐसी विलक्षण प्रक्रियातैं उपदेश किये कि मैं थोड़े ही
समयमैं कृतार्थताकूं प्राप्त हो गया काहेतैं कि उननैं केवल अद्वैतदृष्टिकूं
। करिकैं उपदेश कियो ओर सर्व पदार्थोंकूं परमात्मभिन्नता करिकैं तो
।सिद्ध वर्णन किये ओर परमात्मरूप करिकैं सिद्ध किये ओर मतवादियों
ी कल्पनावों का खण्डन करिकैं श्रुति हृदयार्थके अनुकूल अनुभव प्रका-
शित कियो ।

ऐसैं वे महात्मा सम्वत् १९२२ मैं मोकूं आत्मविद्या कराय करिकैं
तब यात्रा करणेकूं उत्कण्ठित भये तब मैंनैं प्रार्थना किई कि अब मोकूं
हा कर्त्तव्य है सो कृपा करिकैं कहो तब उननैं आज्ञा किई कि

सङ्गः सर्वात्यना हेयः सचेद्धातुं न शक्यते
ससद्भिः सह कर्त्तव्यःसन्तः सङ्गस्य भेषजम्॥१॥

ओर ये कही कि

अज्ञप्रबोधान्नैवाऽन्यत्कार्यमस्त्यत्र तद्विदः ॥

इनका अर्थ ये है कि सङ्ग ज्यो है सो सर्वथा त्याग करवे योग्य है
ओर ज्यो इसका त्याग नहीं हो सके तो ये सत्पुरुषों के साथ कर्त्तव्य है
काहे तैं कि उनका सङ्ग ज्यो है सो सङ्ग कूं निवृत्त करैहै । ओर आत्म
वेत्ता के आत्मज्ञान करायबे तैं भिन्न कार्य नहीं है ऐसैं आज्ञा करिकैं वे
महात्मा तो प्रस्थान करगये ।

पीछैं मैं सम्वत् १९३९ पर्यन्त तो उनकी प्रथम आज्ञा का पालन कर-
ता रहा अर्थात् सत्सङ्ग करता रहा सो ऐसे ऐसे महात्माओं का दर्शन हुवा
कि जिनकूं शुकदेव वामदेव अष्टावक्र दत्तात्रेय ही कहणे चाहिये पीछैं सं-
वत् १९४७ मैं मोकूं द्वितीय आज्ञा का स्मरण हुवा ओर उसही वर्ष मैं रा-
जाजी साहब खेतड़ी श्री १०८ अजितसिंहजी बहादुर जिज्ञासु उपस्थित
भये तब उनके उपदेश के अर्थ तो उपदेशामृत घटी नाम ग्रन्थ की रचना
किई उसमैं गान के पदों में ही गीताभावार्थ प्रगट किया है ॥
पीछैं सम्वत् १९५१ मैं मेरे यह विचार हुवा कि जिनकी बुद्धि सरल है ओर

जिनके बहुधा कुतर्क उपस्थित होवैं नहीं उनकूं तो "उपदेशामृतपटी तैं आत्मज्ञान होजायगा परन्तु जिननैं बहुत शास्त्रों के मतोंकूं श्रवण किये और जिनकी बुद्धि सरल नहीं है और जिन के नानाविध कुतर्क उपस्थि होय हैं उनकूं आत्मज्ञान कैसैं होय ऐसैं बिचार करिकैं मैंनैं ये स्वानुभ सार नाम ग्रन्थ सम्वत् १९४२ मैं बणाया है सो इसमैं केवल अद्वैत दृ पुरुषों के अनुभव को वर्णन किया है और भेद अविद्या इनका ख यडन करिकैं

सर्वं खल्विदं ब्रह्म ॥

इस श्रुति के अनुसार अनुभव कहा है सो विद्वज्जनों तैं मेरी प्रार्थना है कि जिननैं सद्गुरूपदेश तैं आत्मानुभवका सम्पादन किया तो इस ग्रन्थ का अवलोकन करिकैं ज्यो अपणैं अनुभव मैं न्यूनता होय य तो उसकूं निवृत्त करलेवैं और ज्यो अपणैं अनुभवमैं न्यूनता नहीं य तो इस ग्रन्थ कूं अपणैं शुद्धानुभव तैं सुपरिक्षित करि कैं जयपुरीय स्कूल पाठशाला मैं मेरे पास अनुग्रह पत्र देवैं और उस अनुग्रह पा अपणैं शुद्धानुभव लेख तैं भी अङ्कित करैं तो मैं महोपकार मानूंगा ले केवल शास्त्रज्ञ हैं उनकूं उचित है कि इस ग्रन्थ तैं आत्मानुभव दन करि कैं कृतार्थता सिद्ध करैं और इसकूं भाषा मानि करिकैं अना नहीं करैं काहे तैं कि देश भाषा मैं अलौकिक अर्थ कहा है सो ये ग्र वोपकारक होय इस कारण तैं कहा है ।

परन्तु ये निश्चित जाणोंकि उत्तम विद्वानों के बिना इस ग्र हृदयार्थ कूं समुझणां कठिन है और जे तीक्ष्ण बुद्धि हैं और जिनं स्कट जिज्ञासा है परन्तु जे शास्त्रज्ञ नहीं हैं ये पुरुष उत्तम विद्वा मुख तैं इस ग्रन्थ के हृदयार्थ कूं अवगत करैंगे तो उन कूं आत्मानुभ लाभ होगा इसमैं किञ्चित् भी सन्देह नहीं है ।

अब द्वैत मतानुयायि पुरुषों तैं मेरी ये प्रार्थना है कि आप अन्तःकरण की शुद्धिकरिकैं ही इस ग्रन्थ का अवलोकन करैं परन्तु अ ग्रन्थ का हृदयार्थ अवगत होवै नहीं तब पर्यन्त किया कदाग्रह को त्याग होयही यातैं आप इस ग्रन्थके हृदयार्थकूं ग्र हण करैं इसमैं ही आपकूं लाभ होगा उसके आनन्दका अनुभव करैंगे जिसमैं मत्सर की अनुपस्थिति होगी ॥

य अद्वैतवादि पुरुषों तें मेरी ये प्रार्थना है कि आप अद्वैतानुभवी होवैं इस ग्रन्थका मनन अद्वैतानुभव मैं परम उपकारक होगा। यातैं आप अ-श्य ही इस ग्रन्थका अवलोकन करैं ।

और विचारसागर तथा वृत्तिप्रभाकर इन ग्रथोंके पढे हुये पुरुषों कूँ ो चाहिये कि इस ग्रन्थका पठन अवश्य ही करैं काहेतैं कि इन ग्रन्थों मैं हाँ २ अनुभवके विषयमैं ज्यो निर्णय शेष रह गया है यो इस ग्रन्थ मैं रवा है ॥

अब ये और समुझो कि इस ग्रन्थके ३ भाग हैं तिनमैं प्रथम भाग मैं ायमतका विवेचन किया है काहे तैं कि न्याय शास्त्रका मत द्वैत है ऐसैं ानि करिकैं वेदान्त के ग्रन्थों मैं इसके मतका खण्डन किया है परन्तु उन न्थकारौं नैं ये विचार नहीं किया कि गौतम ऋषि और कणाद ऋषि स-त्त योगी रहे उनका मत द्वैत कैसैं होसकै द्वैत मत तो श्रुति विरुद्ध है या- हमनैं उनका मत और श्रुति इनकी एकवाक्यता करिकैं उनका मत स भागमैं अद्वैत दिखाया है और उनका मत अद्वैत है इसमैं उनके सूत्र ो प्रमाण दिखाये हैं सो विद्वज्जन इसका साद्यन्त अवलोकन करैं ॥

और इस ग्रन्थके द्वितीय भाग मैं अविद्याके स्वरूपका विवेचन कि-ा है सो अविद्या तम जैसी आवरण स्वभाव नहीं है किन्तु सच्चिदानन्द वरूपा है ये अर्थ श्रुति युक्ति और अनुभव इनतैं सिद्ध किया है सो द्वज्जन याका भी साद्यन्त अवलोकन करैं और इसके तृतीय भाग मैं ज्ञान स्वरूप का विवेचन किया है सो ज्ञान वृत्ति रूप नहीं है किन्तु वृत्तितैं लक्षण है सो विद्वज्जन याका भी साद्यन्त अवलोन करैं ।

इसमैं ज्यो कहीं पुरुषस्वभावसुलभ प्रामादिक लेख होवै तो कृता-ानुभव पुरुष शोधन भी करैं परन्तु कृपा करिकैं इस स्वकीय शोधन लेख मदीय दृष्टि गोचर भी कर लेवैं ये मेरी प्रार्थना है ॥ शुभम् ॥

श्रीरामराभातटद्योपदिष्टा श्रीजयपुरीयसंस्कृतपाठशालाध्यापक श्रीदधी-ावंशोद्भव पण्डित गोपीनाथशर्मा ॥ शुभम् ॥

वल यौक्तिक दृष्टि के ही ग्रन्थों का मनन करते रहेहैं इसमें हेतु यह है कि केवल तत्वदृष्टि के प्रतिपादक ग्रन्थ उनकों प्राप्त नहीं हैं और जीव-न्मुक्त विद्वान् उनकों शास्त्राभिमानी जानिकैं उपदेश करें नहीं और वे यौक्तिक दृष्टि वाले पुरुष भी जिस उपदेशकों करैं हैं उसमें यद्यपि इसकों अजातवाद नामसें कहैं हैं तथापि अनभ्याससें इनकी प्रक्रिया कहैं नहीं यातैं अधिकारी पुरुषोंकी जिज्ञासा सफल होवै नहीं यातैं इस ग्रन्थकों मुद्रित कराया है सो सफल सत्सङ्गियों कों उचित है कि इसको प्रवृत्ति सें जिज्ञासु पुरुषों की आशाकों सफल करैं और अपना मनोरथ पूर्ण करैं यह प्रार्थना है इति–

इसके मनन कर्त्ता पुरुष कों उचित है कि इस पुस्तक के अन्तमें इस ग्रन्थ का निष्कर्ष लगाया है उसका अवलोकन करिकैं इस ग्रन्थ के तात्पर्यकों हृदगत करिकैं पश्चात् शुद्धिपत्रसें इसकों शुद्ध करिकैं शनैः शनैः निर्विक्षेप होकैं इसके अभ्यासमें बद्धपरिकर होवैं और आत्मविद्या सिद्ध करिकैं कृतार्थ होवैं—

॥ श्रीकृष्णो जयति ॥

अथ स्वानुभवसाराख्यो वेदान्तग्रन्थः प्रारभ्यते ॥

दोहा ।

ज्यो सत चित आनँद अमल अलख अरूप अनूप ॥
जाकूं श्रुति नित ही रटत सो निज आतम रूप ॥१॥
ज्यो जग विन जा विन न जग ज्यो जग जगत न ज्योइ ॥
जिहिं लखि परमानँद लहै सो निज आतम होइ ॥२॥
जाहि लखें जग होइ वो न लखें जगत लखात ॥
सो निज आतम जानिये श्रुति शिर ताहि बतात ॥३॥
जाकी वाणी वेद हू जाकूँ कहत थकात ॥
शेष सैंस मुख हू रटत सोचि सोचि सकुचात ॥४॥
योग साधि योगी सकल लह्यो न जाको पार ॥
सो खेले व्रजभूमि में लेइ आप अवतार ॥५॥
गीताको उपदेश कहि हर्यो पाण्डुसुत मोह ॥
सो मोपें करुणा करी धर्यो न ओगन छोह ॥६॥
हृदय तिमिर कूँ दूर करि दियो ज्ञान परकाश॥
संशय सकल निवारिकें कियो भेद को नाश ॥७॥
शिष्य विमलमति नाम इक धारि ज्ञानकी आस ॥
भेट लेइ घरतें गयो ज्ञानसिद्ध गुरु पास ॥८॥

॥ श्रीकृष्णो जयति ॥

अथ स्वानुभवसाराख्यो वेदान्तग्रन्थः प्रारभ्यते ॥

दोहा ।

ज्यो सत चित आनँद अमल अलख अरूप अनूप ॥
जाकूं श्रुति नित ही रटत सो निज आतम रूप ॥१॥
ज्यो जग विन जा विन न जग ज्यो जग जगत न ज्योइ ॥
जिहिं लखि परमानँद लहै सो निज आतम होइ ॥ २॥
जाहि लखें जग होइ वो न लखें जगत लखात ॥
सो निज आतम जानिये श्रुति शिर ताहि बतात ॥ ३ ॥
जाकी वाणी वेद हू जाकूँ कहत थकात ॥
शेष सेंस मुख हू रटत सोचि सोचि सकुचात ॥ ४ ॥
योग साधि योगी सकल लह्यो न जाको पार ॥
सो खेले व्रजभूमि में लेइ आप अवतार ॥५॥
गीताको उपदेश कहि हर्यो पाण्डुसुत मोह ॥
सो मोपें करुणा करी धर्यो न औगन छोह ॥ ६॥
हृदय तिमिर कूँ दूर करि दियो ज्ञान परकाश॥
संशय सकल निवारिकें कियो भेद को नाश ॥ ७ ॥
शिष्य विमलमति नाम इक धारि ज्ञानकी आस ॥
भेट लेइ घरतें गयो ज्ञानसिद्ध गुरु पास ॥ ८ ॥

पूजा कारि कर जोरिकैं गुरु पद सीस नवाय ॥
या विधितैं विनती किई भव दुख लखि घवराय ॥ ९
परमानँद परमातमा सुन्यो वेदमैं एक ॥
ताके दरशन काज मैं कीन्हे जतन अनेक ॥ १० ॥
मत वहु भांति पढें सुनें वाढ्यो भरम अथाह ॥
करो आप उपदेश ज्यों पूरे चित की चाह ॥ ११ ॥
विनति विमलमतिकी सुनी लख्यों ताहि वहु ताप ॥
ज्ञान सिद्ध वोले गुरू धरि करुणा उर आप ॥ १२ ॥
सुर वाणी में ग्रन्थ वहु तिन मैं अति विसतार ॥
तातें में तोकूँ सुमति कहूँ स्वानुभवसार ॥ १३ ॥
जीव ईश में जगत में जिहिं सुनि रहे न भेद ॥
कहूँ स्वानुभवसार सो सुनहु त्यागि मन खेद ॥ १४
तेरे आतमरूपको करहुं तोइ उपदेश ॥
भेद वाद खण्डन करूँ रहे न संशय लेश ॥ १५ ॥

हे शिष्य उपनिषद् जिस ब्रह्मतत्त्वकूँ प्रतिपादन करे हैं सो [illegible] दानन्द परमात्मा आपका निजरूप है। आपके निजरूप में जगत [illegible] काल में नहीं। आप अज्ञान अन्तःकरण प्राण इन्द्रिय शरीर इत्यादि [illegible] साक्षी है। इस हेतु तें सर्व का जानने वाला आप है। आपकूँ कोई [illegible] जान हारा नहीं है। आपकूँ जानने में आपकी आप ही सामर्थ्य है। और [illegible] ऐसें कहे है कि जानने वाले कूँ किसीं जानें तो इस श्रुतिका यह [illegible] प्राय है कि जाननेवाले के जानने में जाननेवाला ही सामर्थ्य है [illegible] [illegible] अर्थात् इस में दूजी कोई सामर्थ्य नहीं। और मन बुद्धि इन्द्रिय [illegible] जानते हैं सो तो स्वतंत्र जाननेवाला नहीं आपका निज रूप [illegible] [illegible] में जानने वाले भये हैं। आपकी सत्ता बिना जानें [illegible]

नहीं तो ये आपकूँ कैसें जान सकैं। दृष्टान्त जैसें काच की हँडिया दीपक के प्रकाशसें प्रकाशमान भई है दीपक की सहायता बिना प्रकाशमान नहीं तो दीपककूँ नहीं प्रकाशती है। हाँ! अलबत्तैं दीपक के प्रकाशकूँ विशेष बतलावै ये हँडियाका स्वभाव है। तो आ०के निजप्रकाशकूँ विशेष बतलावै ये मन बुद्धि इन्द्रियों का स्वभाव है। इस ही कारण तैं जैसें घटका स्पष्ट भान होता है तैसें घटकी ज्ञातता अर्थात् घटमें ज्यो जान्याँ गयापणाँ है उसका भान नहीं होता किन्तु घट की अपेक्षा अस्पष्ट भान होता है। जिससें जान्याँगयापणाँ घट में जान्याँ गया सो आपका निज रूप जानों निज रूप के जाननें में जाननैंवाला और जाननाँ और जान्याँ गया ये तीनूँ एक हैं अर्थात् आप ही आपसें आपकूँ जानता है।

ज्यो कहो कि आपकूँ आप जानैंगा तो कर्मकर्तृ विरोध होगा अर्थात् आप ही कर्ता और आप ही कर्म होणेतैं दूषण होगा। जैसें देवदत्त घटकूँ जानता है यहाँ देवदत्त और घट ये भिन्न पदार्थ हैं इस कारण सें घटका जाननाँ बनैं है। और आपसें आप भिन्न नहीं यातैं आपका जाननाँ कैसें बनैं। तो हम कहैं हैं कि लौकिक पदार्थके प्रत्यक्ष में लौकिक नियम है। आप तो अलौकिक पदार्थ है इसके जाननैं में लौकिक नियम नहीं रहै तो भूषण है दूषण नहीं। जैसें लौकिक पदार्थका प्रत्यक्ष अन्तःकरण की वृत्ति और चिदाभास इन दोनों से होता है ये नियम है। परन्तु जब आपकूँ जानता है तब वृत्ति ही अज्ञान के आवरणकूँ दूर करणे में काम आती है। चिदाभास कुछ काम नहीं आता। तो ये नियम नहीं रहा कि वृत्ति और चिदाभास दोनूँ सें ही प्रत्यक्ष ज्ञान होय। परन्तु आपका ज्ञान यहाँ प्रत्यक्ष ही मान्या जाता है। तो सिद्ध हुआ कि लौकिक पदार्थ के प्रत्यक्ष का नियम अलौकिक पदार्थके प्रत्यक्षमें नहीं। जो कहो कि प्रत्यक्ष की सामग्री न्यून होणे तैं प्रत्यक्ष में न्यूनता मानैंगे। यातैं आपके जाननैं में वृत्ति और चिदाभास दोनूँ काम न आये और एक वृत्ति ही काम आई तो आपका आधा जाननाँ हुवा। तो ये कथन ठीक नहीं। ऐसें मानैं उसकूँ प्रकाशका प्रत्यक्ष भी आधा माननाँ परैगा। काहेतैं कि और रूपवान् पदार्थों के प्रत्यक्ष में तो चक्षु और प्रकाश दोनूँ काम आते हैं। परन्तु प्रकाश के प्रत्यक्षमें एक चक्षु ही काम आता है। ज्यो कहो कि एक चक्षु ही प्रकाशके प्रत्यक्ष में काम आया तो भी प्रकाशके प्रत्यक्षकूँ आधा

कोई नहीं मानता पूर्ण हीं मानते हैं। तैसैं आपके प्रत्यक्ष मैं एक वृत्ति ही काम आई तो वी अपनाँ जाननाँ पूरा ही माननाँ। इस कथन सैं हमा साधा जाननाँ माननाँ खण्डित हुवा। परन्तु जिननैं अपनैं जाननैं मैं ए वृत्ति ही काम आई इस कारण तैं लौकिक नियम का निषेध किया सो कैसैं रहेगा। वृत्ति चिदाभास ये दोनूँ लौकिक सामग्री और केवल ह लौकिक सामग्री नहीं, ऐसैं मानैं उनकूँ चक्षु और प्रकाश लौकिक साम और केवल चक्षु अलौकिक सामग्री ऐसैं वी कहनाँ पड़ैगा। तो हम कहैं कि जिस सामग्रीसैं लौकिक विषयका प्रत्यक्ष होय सो लौकिक साम और जिस सामग्रीसैं अलौकिक वस्तुका प्रत्यक्ष होय वो सामग्री लौकि नहीं। यहाँ ऐसैं विभाग किया है और सामग्री तो सर्व लौकिक ही है यातैं केवल चक्षु अथवा चक्षु और प्रकाश दोनूँ अथवा वृत्ति और चिद भास ये दोनूँ लौकिक सामग्री और केवल वृत्ति लौकिक सामग्री नहीं ऐसैं कह्या है। यातैं हमारे कथन मैं कोई दोष नहीं। ज्यो कहो कि विषय अलौकिक होयैं तैं लौकिक प्रत्यक्ष सामग्री मैं लौकिक पणाँ का निषे किया। तो सामग्री लौकिक होयैं तैं अलौकिक विषय मैं अलौकिक पणाँ का ही निषेध क्यों नहीं। तो हम कहैं हैं कि सामग्रीका लौकिक पणाँ विषयके अलौकिक पणाँ मैं लौकिक पणाँ सिद्ध कर चुका इस कारण तैं वि षय मैं अलौकिक पणाँ का निषेध करणैं मैं समर्थ नहीं। और विषयक अलौकिक पणाँ कहीं भी अलौकिक पणाँ कूँ सिद्ध किया नहीं या कारण तैं सामग्री मैं लौकिक पणाँ का निषेध करणैं मैं समर्थ है। ज्यो कहो कि इस कथन तैं अलौकिक लौकिक सामग्री के लौकिक पणाँतैं अलौकिक विषयके अलौकिक पणाँतैं लौकिक पणाँ सिद्ध किया ये सिद्ध हुया तो दूषण हुआ कहेतैं कि एक वृत्ति मैं लौकिक पणाँ और अलौकिक पणाँ ये विरुद्ध धर्म मानतैंसैं। तो हम कहैं हैं कि निरपेक्ष विरुद्ध धर्म एक वस्तुमैं मानैं तो दोष होय सापेक्ष विरुद्ध धर्म तो एक वस्तुमैं रहैं हैं। जैसैं एक पुरु मैं पिता की अपेक्षा पुत्र पणाँ और पुत्रकी अपेक्षा पिता पणाँ ये विरुद्ध धर्म रहैं हैं। ज्यो कहो कि दृष्टान्त मैं तो लौकिक पुत्र पिताकी अपे लौकिक पुत्रमैं लौकिक विरुद्ध धर्म कल्पित हैं ये व्यवहारमैं सिद्ध हैं। इस कारण मैं दोष नहीं। परन्तु यहाँ लौकिक वृत्ति मैं तो अलौकिक धर्म अलौकिककी अपेक्षा कल्पित है। इस कारण मैं दृष्टान्त दार्ष्टान्त विषम है।

सो हम कहैं हैं कि यहाँ अलौकिक आत्माकी अपेक्षा वृत्तिमैं अलौकिक पणाँ कल्पित नहीं है। किन्तु आत्मा मैं ज्यो लौकिक अलौकिक पणाँ है नैं लौकिक वृत्ति मैं लौकिक अलौकिक पणाँ सिद्ध किया है यातैं कुछ न नहीं। ज्यो कहो कि दृष्टान्त दार्ष्टान्तका विरोध तो दूर हुवा। और वृत्ति अलौकिक पणाँ भी सिद्ध हुवा। परन्तु अलौकिक आत्मामैं रहनैंवाला लौकिक पणाँनैं लौकिक वृत्तिमैं अलौकिक पणाँ कैसैं सिद्ध किया। तो म कहैं हैं कि जैसैं लौकिक वृत्तिनैं आत्मा अलौकिक सिद्ध किया तैसैं नैं। ज्यो कहो कि लौकिक अलौकिक पणाँका आश्रय है तो भी आत्मा मार्थ अलौकिक है तैसैं वृत्तिभी लौकिक अलौकिक पणाँका आश्रय ोणैं तैं परमार्थ अलौकिक क्यौं नहीं। तोहम कहैं हैं कि पदार्थोंका स्वरूप व्यवहारसैं मान्याँ जाय है। वृत्तिकूं परमार्थ अलौकिक कोई भी नैं नहीं यातैं वृत्तिपरमार्थ अलौकिक नहीं। ज्यो कहो कि मेरेकूँ परमार्थ निर्णयमैं व्यवहारसैं प्रयोजन नहीं यातैं परमार्थ कहो। तो परमार्थ है कि आत्मा सद्रूप है यातैं परमार्थ अलौकिक है। तैसैं हीं वृत्ति सद्रूप कल्पित है और कल्पितकी सत्ता अधिष्ठानतैं जुदी होय हीं किन्तु अधिष्ठान रूप है यातैं वृत्ति सद्रूप भई। वृत्ति कूँ द्रूप होणैं तैं परमार्थ अलौकिक मानैंतो कोई दोष नहीं। याही तैं वेदनैं

अहं ब्रह्मास्मि ॥

या श्रुतिमैं अहं शब्द के अर्थमैं ब्रह्म शब्दके अर्थका अभेद वर्णन कया है ये विद्वानाँका निर्णय है।

ज्यो कहो कि परमार्थ निर्णय इस प्रकार है तो मेरा कहा कर्म र्तृ विरोध ही नहीं बणसकेगा। काहेतैं कि देवदत्त घटकूँ जाता है। यहाँ देवदत्त और घट ये दोनूँ सद्रूपमैं कल्पित । और कल्पित की सत्ता अधिष्ठानतैं जुदी होय नहीं। यातैं देव दत्त और घट एक रूप भये। तो भी कर्त्ता कर्म बणैं हैं। तैसैं आप आपकूँ जाता है। यहाँ अभेद है तो भी आप ही कर्त्ता और आप ही कर्मबणैं सकेगा। परन्तु जैसें मेरा कहा कर्मकर्तृ विरोध व्यर्थ हुवा। तैसैं आपका किया समाधान भी तो व्यर्थ हुवा। ज्यो विरोध ही नहीं तो उसकी निवृत्ति कहा। तो हमकहैं हैं कि हमनैं व्यवहार दृष्टिसैं मेरा कहा कर्म कर्तृ विरोध मान्याँ है और व्यवहार दृष्टिमैं हीं समाधान किया है

तहो कि पदार्थ तो प्रतीतिसैं मानैं जायँ हैं। पटसैं घट भिन्न है
प्रतीति भेद कूँ सिद्ध करै है यातैं भेद पदार्थ घटतैं भिन्न मानणाँ। तो
कहैं हैं कि भेद घटतैं भिन्न है इस प्रतीति सैं भेदमैं भिन्न पणाँ बताणैं य
दूसरा भेद बी मानणाँ ही पडैगा। तो दूसरा भेद मैं भिन्न पणाँ कोन भे
सिद्ध होगा सो कहो। ज्यो कहो कि दूसरा भेद मैं भिन्न पणाँकूँ प्रथम
सिद्ध करैगा। तो हम पूछैं हैं कि प्रथम भेद और दूसरा भेद एक है
अथवा दोय हैं। जो कहो कि एक है तो आत्माश्रय दोष होगा। और
आत्माश्रय दोष दूर करणैंकूँ दोनूँ भेद जुदे मानैं तो अन्योन्या
दोष होगा। जो कहो कि दोनूँ भेद जुदे मानणैं मैं अन्योन्याश्रय होगा
इस दोषकूँ दूर करणैं के अर्थ तीसरा भेद और मानैंगे तो चक्रका
दोष होगा। काहेतैं कि प्रथम भेदमैं तो भिन्न पणाँ सिद्ध किया दूसरा
नैं और दूसरा भेदमैं भिन्न पणाँ सिद्ध किया तीसरा भेदनैं और तीसरा भे
भिन्नपणाँ सिद्ध करैगा प्रथम भेद ऐसैं चक्रकापत्ति दोष होगा।
चक्रकापत्ति दोषके नहीं आणैं के अर्थ ज्यो चतुर्थ पञ्चम षष्ठ ऐसैं भे
कल्पना करोगे तो अनवस्था दोष होगा। यातैं भेदका मानणाँ सा
अशुद्ध है।

ज्यो कहो कि भेद न मानणैं मैं प्रमाण कहा है तो। १

एकमेवाद्वितीयं ब्रह्म। सर्वं खल्विदं ब्रह्म॥

इत्यादि तो श्रुति और विद्वानोंका अनुभव और पी
कही सो युक्ति ये तीनूँ प्रमाण हैं। ज्यो कहो कि भेद नहीं मानोंगे
विद्वान् ज्यो अभेद मानैं हैं सो कैसैं सिद्ध होगा। काहेतैं
अभेदको सिद्धिमैं भेद कारण है ज्यो भेद ही नहीं तो अ
कैसैं सिद्ध होय सो कहो। तो हम कहैं हैं कि अलीक पदार्थका बी अ
सर्वकै अनुभव सिद्ध है। जैसैं सुस्साका सींग आकाशका फूल वाँ
पुत्र ये अलीक पदार्थ हैं तो बी इनका अभाव सर्वके अनुभवसिद्ध है। तैं
भेद बी अलीक पदार्थ है तो बी इसका अभाव ज्यो अभेद सो विद्वा
अनुभव सिद्ध है यातैं विद्वान् अभेद मानैं हैं। ज्यो कहो कि अलीक पद
का अभाव तो सर्वकै अनुभवसिद्ध है। परन्तु अलीक पदार्थ किसीकै

अनुभव सिद्ध नही है । यातैं ज्यो भेद वी अलीक पदार्थ होता
किसीकै वी अनुभव सिद्ध नहीं होता । अनुभव सिद्ध नहीं
वी व्यवहार सिद्ध नहीं करता । परन्तु पटतैं घट भिन्न है इस
पट भेदवाला घट विषय है यातैं भेद पदार्थ अलीक नहीं।
हैं कि कोई अलीक पदार्थ वी व्यवहार सिद्ध करै है । जैसैं हाऊ
पदार्थ है तो वी वालकके मनमैं भय सिद्ध करैहै । तैसैं भेद अलीक
भिन्न व्यवहार सिद्ध करै है । ज्यो कहो कि वालक तो महा मूर्ख
अलीक हाऊ कूँ मानैं है । परन्तु भेदकूँ तो बडे बडे विद्वान् मानैं
भेद अलीक नहीं । तो हम कहैं हैं कि आत्मज्ञानियोंकी अपेक्षा
अनात्मज्ञानी वालक हैं यातैं भेद मानैं हैं। आत्मज्ञानी भेद नहीं
हैं यातैं भेद अलीक है । जैसैं वालक अलीक हाऊ कूँ और अनात्म
पटादिकौंकूँ मानैं हैं तैसैं अनात्मज्ञानी वी अलीक भेदकूँ और अन
पटपटादिकौंकूँ मानैं हैं यातैं वालक ही हैं ऐसैं जानौं ।

ज्यो कहो कि वेदान्त ग्रन्थोंमैं ब्रह्मकी पारमार्थिकी
और जगत्के पदार्थौंकी व्यावहारिकी सत्ता और रज्जु सर्प
की प्रातिभासिकी सत्ता ऐसैं सत्ता तीन मानी हैं। अब ज्यो
भेद हाऊ ये अलीक पदार्थ वताये तो इनकी सत्ता कौन
जाय सो कहो । तो इनकी आलीकी सत्ता मानौं इसमैं कुछ
नहीं । ज्यो कहो कि आलीकी सत्ता मानौंगे तो आपका
अप्रमाण होगा । काहेतैं कि सर्व वेदान्त ग्रन्थोंमैं आलीकी सत्ता कहीं
नहीं मानी है ।तो हम कहैं हैं कि वेदान्त ग्रन्थोंमैं एक जीववाद मत
है, उसमैं व्यावहारिकी सत्ता नहीं मानी है तो वी व्यावहारिकी सत्ता
वालों का मत वेदान्ती प्रमाण ही मानैं हैं तैसैं आलीकी सत्ता मानैं
का कथन वी प्रमाण मानैं सो कुछ वी हानि नहीं । ज्यो कहो कि
पारमार्थिकी सत्ता ब्रह्मकूँ परमार्थ सत्य वताये है. और व्यावहारिकी
जगत् कूँ व्यवहार मैं सत्य वताये है और प्रातिभासिकी सत्ता रज्जु सर्प
[illegible] के समय मैं सत्य वताये है तैसैं आलीकी सत्ता भेद [illegible]
[illegible] किस समय मैं सत्य वताये है

णों के समय मैं सत्य बतावे है, तो ये कथन ठीक नहीं। काहेतैं कि
हाबू ये मानणें के समय मैं सत्य होवैं तो ये अलीक ही नहीं बणैं-
गे। ज्यो सर्व अवस्थावों मैं और कोई बी काल मैं सत्य नहीं होय वो
लीक है। ये अलीकका लक्षण है। तो हम कहैं हैं कि अलीक पदार्थ
णें के समय मैं सत्य ही हैं। ज्यो अलीक पदार्थ सत्य न होतातो बाल-
हाबूतैं डरता नहीं। और अलीक का लक्षण ज्यो पहली कहा है सो
हीं है। किन्तु ज्यो कोई बी देश मैं कोई बी अवस्थामैं कोई बी प्रकार
सिद्ध न होय और मान्याँ जाय वो अलीक है। ज्यो कहो कि आलीकी
। ये नाम सुणि करिकैं तो शब्द महिमातैं श्रोता के हृदयमैं पदार्थ
न मालणाँ सिद्ध होताहै यातैं ये नाम अच्छा नहीं। तो ये कथन य-
हो ठीक है। यातैं इस सत्ताका नाम चतुर्थी सत्ता मानों। जैसैं न्या
शास्त्रमैं निर्विकल्पक ज्ञान की ज्यो विषयता है तिसकूँ चतुर्थी विषय-
इस नामतैं लिखीहै। अथवा जैसैं आनन्दबोधाचार्यनैं सिद्धान्त लेश-
आत्मा मैं अविद्यां निवृत्तिकूँ सती असती सदसती अनिर्व-
नीया इन च्यारोंतैं विलक्षण अप्रसिद्धपञ्चमप्रकारा इस नाम करिकैं
नी है। तैसैं अप्रसिद्धचतुर्थप्रकारा इस नाम करिकैं मानों तो बी कुछ हा
नहीं।

ज्यो कहोकि भेद अलीक होता तो जैसैं हाबू नहीं दीखता
तैसैं नहीं दीखता। परन्तु ये तो दीखता है यातैं हाबू की तरेंह अलीक
हीं। तो हम पूछैं हैं कि तुम कूँहीं दीखता है अथवा कोई सर्वज्ञोंकूँ
दीखा है ज्यो कहोकि गौतम कणादादि सर्वज्ञ ऋषियों कूँ बी दीखा है
तो हम पूछैं हैं कि गौतम जी नैं अपणें मानें षोडश पदार्थों मैं भेद की गणना
यों नहीं किई ज्यो कहो कि भेद अभाव पदार्थ है इसका अन्तर्भाव
मेय पदार्थ मैं है यातैं गौतमजीनैं भेद की गणना अपणें पदार्थोंमैं न
किई तो हम कहैंहैं कि अभाव तो पदार्थ ही नहीं ज्यो अभाव बी पदा-
होता तो कणादऋषि अपणें मानें पदार्थों मैं लिखते उननैं बी द्रव्य१
गुण २ कर्म ३ सामान्य४ विशेष५ समवाय६ येही पदार्थ कहेहैं यातैं गौतम
कणादादि ऋषियों मैं भेद का दीखणाँ बताया सो सिद्ध नहीं और जैमिनि
ऋषिनैं बी अभाव अधिकरणरूप कहा है यातैं बी ये ही सिद्ध होय है कि

भेद छः पदार्थों तैं जुदा मानैं तो अलीक है और सांख्य शास्त्रके क
कपिलदेवजीनैं यी अपणैंमानैं पचीस तत्वों मैं अभाव की गणना न
उनके मतमैं सत्कार्यवाद है यातैं असत् पदार्थ है ही नहीं असत्नाम अ
है यातैं यी येही सिद्ध होय है कि अभाव पदार्थ नहीं है यातैं भेदका
असम्भव है और ज्यो अपणैं विचारसैं देखो तो यी भेद दीखता नहीं
तैं कि भेद अभाव पदार्थ है अभाव कूँ कोई अधिकरणरूप मा
और कोई जुदो मानैं है ये विसम्वाद दीखणैं वाली चीजमैं हो सकै
ज्यो दीखणैंवाली चीजमैं भी ये विसम्वाद होय तो जहाँ भूतलमैं घ
तहाँ यी कोई घटकूँ भूतलरूप मानैं और कोई जुदो मानैं ज्यो को
भेद कोई यी आचार्योंकूँ नहीं दीखा तो यी मोकूँ तो दीखै है तो
कहैहै कि जिननैं तपोबलतैं अपणैं चरणोंमैं दोय नेत्र और पाये
पदार्थोंका विवेचन करणैं के अर्थ ऐसे गौतमजीकूँ तैसैं कण
करिकैं केवल पदार्थों की भोवना करणैंवाले कणादमुनिकूँ
पूर्वमीमांसा के आचार्य और व्यासजी के शिष्य ऐसैं जैमिनि ऋषिकूँ
साक्षात् विष्णु के अवतार कपिलदेवजीकूँ ज्यो भेद पदार्थ नहीं दीखा
भेद तुमकूँ दीखता है सो तुमारै अलौकिक दृष्टि खुली है।

ज्यो कहो कि न शब्द का अर्थ अभावही होय है ज्यो भेद म
तो घट है सो घट नहीं है यहाँ न शब्दका अर्थ और तो यतांकै
मानैं मानणों ही पड़ैगा कि न शब्दका अर्थ भेद है सो हम कहैं हैं कि
शब्द का अर्थ अभाव ही होय ये नियम नहीं है ज्यो ये नियम मानैं
भूतलमैं घट नहीं न है यहाँ दूसरा न शब्दका अर्थ घट ही सिद्ध होवै
नहीं होगा यातैं ऐसै कहणों पड़ैगा कि न शब्द का अर्थ भाव भी है
अभाव भी है परन्तु प्रथम न शब्द का अर्थ तो अभाव ही है और दूस
शब्द का अर्थ भाव ही है जैसैं भूतलमैं घट नहीं है यहाँ तो न श
अर्थ अभाव ही है और भूतल मैं घट नहीं न है यहाँ दूसरे न शब्द
अर्थ भाव ही है कहैंगे कि दूसरे न शब्द का अर्थ घट है ये सर्वकै
प्रसिद्ध है सो हम कहैं हैं कि प्रथम न शब्द का अर्थ अभाव ही है
सो नियम नहीं है कहैंगे कि घट घट नहीं यहाँ प्रथम न शब्द का
[illegible] अर्थ होय है सो नहीं हो सकैगा ज्यो कहो कि घट घ

स का अर्थ ये है कि पट ज्यो है सो पटभेद का आश्रय है तो यहाँ न
शब्दका अर्थ भेद है सो भेद अभाव पदार्थ है यातैं ये ही नियम रहा कि
थम न शब्दका अर्थ अभाव ही है तो हम कहैं हैं कि दूसरा न शब्द का
र्थ भाव ही होय है ये बी नियम नहीं काहेतैं कि घट घट नहीं न है
सका अर्थ ये है कि घटका ज्यो भेद उसका ज्यो आश्रय उसका ज्यो भेद
सका आश्रय घट है तो दूसरा भेद दूसरा न शब्द का अर्थ हुया सो भेद
भाव पदार्थ है तो ये नियम न रहा कि दूसरा न शब्द का अर्थ भाव ही
होय है ज्यो कहो कि जैसैं नील घट है यहाँ नीलरूपवाला ये नील
शब्दका अर्थ है तो यो नील शब्द नील गुणकूं बी कहै है तैसैं न शब्दका
भेदवाला ये अर्थ है तो यी न शब्द भेद स्वरूप अभावकूं बी कहै है यातैं न
शब्द का अर्थ भेद सिद्ध हुया तो हम कहैं हैं कि शब्दों के अर्थ मैं कोश
प्रमाण मान्याँ है यातैं नील शब्द का अर्थ नीलरूप और नीलरूपवाला
दोनूँ हैं तैसैं न शब्द का अर्थ भेद और भेदवाला ये दोनूँ जुदे जुदे कोई
कोश मैं नहीं हैं यातैं ये कथन अप्रमाण है ज्यो कहो कि अनुभव सैं न
शब्द का अर्थ भेदवाला ऐसैं मालूम होय है यातैं ये नियम करैंगे कि न
शब्द का अर्थ भेद और उसका आश्रय भाव दोनूँ होवैं तैं अभाव और
भाव दोनूँ मिले हुए न शब्द का अर्थ है तो यी न शब्दका अर्थ भेद सिद्ध
हुया तो हम कहैंहैं कि न शब्दका अर्थ अभाव और भाव दोनूं मिले हुए हैं
तो भूतल मैं घट नहीं है यहाँ नशब्दका अर्थ अनुभव तैं केवल अभाव ही
मालूम होय है सो नहीं होणाचाहिये ज्यो कहो कि मैंनें नियम किया
सो भेद के प्रकरण मैं है अत्यन्ताभाव के प्रकरण मैं नहीं है यातैं भूतल मैं
घट नहीं है यहाँ न शब्दके अर्थ मैं मेरा किया नियम न रहा तो कुछ यी
हानि नहीं काहेतैं कि यहाँ न शब्दका अर्थ अत्यन्ताभाव है तो हम कहैं हैं कि
घटका अभाव घट नहीं है यहाँ घटका भेद घटका अभाव मैं मानते होसो
नहीं मानणा चाहिये यहाँ तुमारे घट भेदका आश्रय होगा घटका अभाव
यातैं न शब्दका अर्थ अभाव और भाव नहीं हो सकैगा काहेतैं कि तुमारा
मान्याँ नियम ये है कि भेदके प्रकरण मैं न शब्द का अर्थ अभाव
और भाव दोनूंमिले भये हैं और यहाँ न शब्दका अर्थ अभाव अभाव सिद्ध
है काहेतैं कि घटका अभाव घट नहीं है यहाँ ये अर्थ होय है कि घटभेद
का आश्रय घटका अभाव है तो यहाँ भेद बी अभाव है और उसका आ-

ग्रय यी ग्रभाव ही है भाव नहीँ ग्रय हम पूछैँ हैँ कि तुमारे नियम
कोई यो रहे नहीँ यातैँ नशब्दका ग्रर्थ भेद सिद्ध न हुया तो यी भेद
हो परन्तु इतना विचार तो करणाँ चाहिये कि नशब्दका ग्रर्थ भेद है
जैसैँ भूतलमैँ घट नहीँ है यहाँ नशब्द का ग्रर्थ ग्रत्यन्ताभाव है तैसैं
का ग्रर्थ केवल भेद कहाँ है ज्यो कहो कि केवल भेद तो कहीँ यी
का ग्रर्थ नहीँ है तो ये ही जानो कि भेद पदार्थ नहीँ है ज्यो कहो
मेरे भेदकूं सिद्ध करणैँ मैँ हठ नहीँ है किन्तु भेद नहीँ है तो नग
ग्रर्थ भेदका ग्राश्रय कैसैँ होय है सो कहो तो इसका समाधान तो हम
करि ग्राये कि भेद ग्रलीक पदार्थ है तो यी व्यवहार सिद्ध करै है तहाँ
कौं दृष्टान्त कहा है ज्यो कहो कि ग्राचार्यौं नैँ ग्रपणैँ गानैँ पदार्थौं मैं भेद
लिखा यातैँ भेद न माँनणाँ पहिले कहि ग्राये सो कथन ठीक नहीँ
काहेतैँ कि नलिखणैँ तैँ न मानणाँ सिद्ध नहीँ होता किन्तु निषेध करैं
नमानणाँ सिद्ध होता है सो ग्राचार्योंनैँ भेदका निषेध किया नहीँ है
भेद का नमानणाँ कैसैँ सिद्ध होय तो हम कहैँ हैँ कि ग्राचार्योंनैँ निषे
कियाहै देखो गीता के दूसरे ग्रध्याय मैँ जगत् के गुरु पूर्णावतार श्रीकृष्ण
महाराज नैँ—

"नासतो विद्यते भावः,,

ऐसैं कहाहै इसका ग्रर्थ ये है कि ग्रसत् का होणाँ नहीँ है. ग्र
सत् नाम ग्रभावका है यातैँ ग्रभाव पदार्थ नहीँ ये सिद्ध हुया तो तुम
मान्याँ भेद का निषेध हो गया काहेतैँ कि तुमनैँ भेदकूँ ग्रभाव मान्याँ
ज्यो कहो कि श्रीकृष्ण के वाक्यतैँ ग्रभाव का निषेध सिद्ध होय है
हम ऐसे मानैँ गे कि भेद पदार्थ है तो सही परन्तु ये ग्रभाव नहीँ है कि
न्तु भाव है सो हम कहैँ हैँ कि—

"नेह नानास्ति किञ्चन,,

इस श्रुति मैं भेद का निषेध सिद्ध है काहेतैँ कि यहाँ नाना
शब्द सो भेदकूँ कहै है ग्रोर यहाँ नाना कुछ नहीँ है इस श्रुतिके ग्रर्थ
भेदका निषेध स्पष्ट प्रतीत होय है ज्यो कहो कि भेद मानणैँ मैं हठ

कौन अनर्थ होय है कि श्रुति और स्मृति भेद का निषेध करैं हैं तो हम कहा कहैं।

"द्वितीयाद्वै भयं भवति,,

ये श्रुति ही भेद मानणैं तैं भयरूप अनर्थ वर्णन करै है दूस-रैं तैं निश्चय करिकैं भय होय है ये इस श्रुति का अर्थ है ऐसैं जानों ज्यो कहो कि श्रुति नैं भेद का निषेध किया यातैं हीं भेद सिद्ध होय है काहेतैं ज्यो भेद पदार्थ नहीं है तो श्रुति किसका निषेध करै है तो हम कहैं हैं कि मूर्ख बालकोंके मानैं हाबू की तरैंह मूर्खोंका मान्यां भेद का श्रुति निषेध करै है ज्यो कहो कि वेद का तात्पर्य भेदके न मांनणैं मैं है ये आपकूं कौंन युक्ति तैं प्रतीत होय है तो हम कहैं हैं कि न जाणीं-हुई चीज के बतलाणैं तैं शास्त्र प्रमाण होय है यातैं ज्यो वेद पामरों प-र्यन्त प्रसिद्ध भेदकूं हीं बतलावै तो अप्रमाण हीं हो जाय यातैं भेद मानणाँ सर्वथा अशुद्ध और महाभय का करणैं वाला है।

अब हम यहाँ ये विचार करैं हैं कि—

"नेह नानास्ति किञ्चन,,

ये श्रुति नाना का निषेध करै है तो नाना शब्दका अर्थ भिन्न है और भिन्न शब्दका अर्थ भेद का आश्रय ऐसा है तो नाना शब्दका अर्थ भेद और उसका आश्रय दो भये तो ये श्रुति भेद का हीं निषेध करै है अथवा उस का आश्रय जे भाव पदार्थ उनका वी निषेध करै है तो इस श्रुति का अ-भिप्राय भेद और उसके आश्रय भाव पदार्थ दोनूं के निषेधमैं है ये ही जाणों काहेतैं कि ज्यो कदाचित इस श्रुतिका अभिप्राय केवल भेदके ही निषेध मैं होता तो—

"नेह नानास्ति किञ्चन

यहाँ—

नेह भेदोस्ति किञ्चन,,

ऐसा पाठ होता यातैं दोनूं का निषेध ही इस श्रुति का सिद्धां-त अर्थ है।

ज्यो कहो कि भेद का निषेध तो पहिलें कहे भये श्रुति युक्ति अनुभव इनतें सिद्ध हो गया परन्तु भाव पदार्थों का निषेध कैसें सिद्ध है सो कहो तो हम पूछें हैं कि तुम भाव पदार्थ कितनें मानों हो कहो। और कोन २ भाव कोन कोन मैं किस किस सम्बन्धसें रहे है सो ज्यो कहो कि द्रव्य १ गुण २ कर्म ३ सामान्य ४ विशेष ५ समवाय ६ ये पदार्थ हैं तिनमें पृथ्वी १ जल २ तेज ३ वायु ४ आकाश ५ काल ६ दिशा आत्मा ८ मन ९ ये नौ द्रव्य हैं और रूप १ रस २ गन्ध ३ स्पर्श ४ संख्या परिमाण ६ पृथक्त्व ७ संयोग ८ विभाग ९ परत्व १० अपरत्व ११ गुरुत्व १२ द्रवत्व १३ स्नेह १४ शब्द १५ बुद्धि १६ सुख १७ दुःख १८ इच्छा १९ द्वेष प्रयत्न २१ धर्म २२ अधर्म २३ संस्कार २४ ये चोवीस गुण हैं और उत्क्षेपण १ अपक्षेपण २ आकुञ्चन ३ प्रसारण ४ गमन ५ ये पाँच कर्म हैं और नाम जाति का है जैसें द्रव्य मैं द्रव्यपणौं गुणमैं गुणपणौं ऐसें ... नित्य द्रव्यों मैं रह करि उनकूं जुदे बतावें वाले विशेष पदार्थ नित्यसम्बन्धकूं समवाय कहैंहैं अब ये और समुझो कि आदिके च्यार द्रव्य परमाणु रूप तो नित्य हैं और कार्य रूप अनित्य हैं और पाँचवें ... अष्टम द्रव्य पर्यन्त व्यापक हैं और नित्य हैं और नवम द्रव्य मन ... रूप है इन नौ द्रव्यों मैं पहिले कहे चोवीस गुण रहैं हैं सो द्रव्यों आपसमें संयोग सम्बन्ध होय है और कार्य रूप द्रव्य अपनें कारण मैं समवाय सम्बन्ध सें रहैंहैं और गुण कर्म द्रव्यों मैं समवायसम्बन्ध और जाति द्रव्य गुण कर्म इन तीनों मैं समवाय सम्बन्ध सें रहै है और नित्य द्रव्यों मैं समवाय सम्बन्ध सैं रहैं हैं तो हम पूछें हैं कि ये कोई प्रमाण सें सिद्ध हैं अथवा प्रमाण विना हीं सिद्ध हैं।

ज्यो कहो कि प्रमाण सैं सिद्ध हैं तो ये कहो कि प्रमाण सिद्ध ... मानें पदार्थ प्रमेय हुये तो प्रमेय इस पद का अर्थ प्रमा का विषय ... सो प्रमा प्रमाण सें पैदा होय है अथवा प्रमातकूं पैदा ... कहो कि प्रमाणसें प्रमा पैदा होय है तो ये सिद्ध हुआ कि प्रमाण ... पैदा करै है और प्रमा पदार्थों कूं सिद्ध करै है तो हम पूछें ... ण और प्रमा ये दोनूं पदार्थों के अन्तर्गत हैं अथवा नहीं ... यह निर्णय करैगा कि आगें पदार्थों के अन्तर्गत ही है ...

: इन पहिलैं मानैं पदार्थों तैं जुदा वस्तु कोई भी नहीं है तो
: मानैं पदार्थों के अन्तर्गत होणैं तैं प्रमाकूं भी प्रमेय मान-
हीं पड़ैगी तो हम पूछैं हैं कि प्रमा ज्यो प्रमेय हुई तो इस
विषय करणैंवाली प्रमा मानैं पदार्थों सैं जुदी माँनणीं चाहि
जो कहो कि मानैं पदार्थों सैं कोई पदार्थ जुदा नहीं यातैं यो
भी इन पदार्थों के अन्तर्गत ही है तो उस प्रमाकूं भी प्रमेय कहणीं
पड़ैगी तो अनवस्था होगी यातैं प्रमाकूं प्रमेय नहीं माणणी चाहिये
) सिद्ध हुआ कि प्रमा तो प्रमेय नहीं और प्रमातैं जुदे सर्व पदार्थ प्र-
के विषय हुये यातैं प्रमेय हैं तो हम पूछैं हैं कि प्रमा प्रमाणतैं पैदा
है अथवा स्वतस्सिद्ध है अर्थात प्रमाण बिनां हीं सिद्ध है ज्यो कहो
प्रमाण बिनां हीं सिद्ध है तो प्रमाणतैं सिद्ध न हुई यातैं प्रमा अप्रमाणिक
तो अप्रामाणिक प्रमातैं सिद्ध सारे पदार्थ अप्रमाणिक हुये ज्यो कहो
प्रमा प्रमाणतैं पैदा होय है तो हम पूछैं हैं कि प्रमाण तुमारे मानैं प-
ांके अन्तर्गत है अथवा नहीं तो तुमकूं कहणां हीं पड़ैगा कि मानैं प-
ांके अन्तर्गत ही है तो प्रमाणकूं प्रमेय भी कहणां हीं पड़ैगा ज्यो प्रमाण
प्रमेय कह्या तो प्रमाण प्रमा का विषय है ये सिद्ध हो गया तो प्रमा
विषय होणैं तैं प्रमाण कूं प्रमा का पैदा करणैंवाला मानैं तो सर्वथा
द्धत है काहेतैं कि ज्यो जिसका विषय होय सो उसकूं पैदा नहीं करै
जैसे घट चक्षुका विषय है तो चक्षुकूं पैदा नहीं करै है ज्यो कहो कि
ा सो प्रमाण और विषय इन दोनूंतैं पैदा होय है से अनुभवसिद्ध
तो हम कहैं हैं कि प्रमाणका प्रमेयपणां हीं गया काहेतैं कि प्रमाण
विषय करणैं वाली प्रमा तो केवल प्रमाण रूप विषयतैं हीं पैदा भई
तैं प्रमा नहीं ज्यो वे प्रमा नहीं भई तो इसका विषय प्रमाण क्यो है
प्रमेय न हुवा यातैं मानैं पदार्थों के अन्तर्गत प्रमाण कूं प्रमेय सिद्ध
णैंवाली प्रमा का प्रमापणां सिद्ध होणैं के अर्थ और प्रमाण मानणां हीं
ेगा अब हम प्रमाणकूं भी मानैं पदार्थों के अन्तर्गत ही मानणां प-
ा तो अनवस्था होगी यातैं प्रमाणकूं भी प्रमेय नहीं मानणां चाहिये
ो प्रमाण प्रमेय न हुवा तो प्रमाण सिद्ध न हुवा यातैं अप्रमाणिक
ा तो अप्रमाणिक प्रमाणतैं सिद्ध सारे पदार्थ अप्रमाणिक हुये ।

ज्यो कहो कि इस सामान्य कथन सैं तो अर्थ नीकी विधि समुझमैं आवै
हीं यातैं विशेष कथनतैं, समुझाइये तो तुमही कहो कि तुमारेमानैं पदार्थ कौन
माणतैं सिद्ध हैं और तुम प्रमाण कितनैं मानौं हो ज्यो कहोकि हम प्रत्यक्ष
अनुमान २ उपमान ३ शब्द ४ ये च्यार प्रमाण मानैं हैं तहाँ घटादिक
दार्थों का ज्ञान तो प्रत्यक्ष प्रमाणतैं मानैं हैं और धूम हेतु देख करिकैं प-
तमैं अग्निका ज्ञान अनुमान प्रमाणतैं मानैं हैं और गौ के सादृश्य ज्ञानतैं
यका ज्ञान उपमान प्रमाणतैं मानैं हैं और गौकूं ल्याव ऐसैं शब्द सुणिकैं ज्यो
ान होय है उस ज्ञानकूं शब्द प्रमाणतैं मानैं हैं सो घटादिक की तरैंह तो
ारे पदार्थों का ज्ञान होय नहीं यातैं तो मानैं पदार्थ प्रत्यक्ष प्रमाणतैं
िद्ध नहीं हैं और कोई भी हेतु देख करिकैं इनका ज्ञान होय नहीं यातैं
अनुमान प्रमाणतैं सिद्ध नहीं हैं और ये कोई के सदृश नहीं यातैं उप-
ान प्रमाणतैं भी सिद्ध नहीं हैं अब शेष रह्या शब्दप्रमाण तिससैं सारे
ानैं पदार्थ सिद्ध हैं शब्द प्रमाणतैं शाब्दी प्रमा होय है सो प्रमा मानैं प-
ार्थों कूं विषय करैहै यातैं सारे पदार्थ प्रमेय हैं सो ये सिद्ध हुयाकि शब्द
माणतैं तो शाब्दी प्रमा और शाब्दी प्रमासैं पदार्थों की सिद्धि यातैं
ानैं पदार्थ शब्द प्रमाण सिद्ध होवैंतैं प्रामाणिक सिद्ध हैं।

तो हम पूछै हैं कि मानैं पदार्थोंका सिद्धकरणैंवाला शब्द प्रमाण और
ानैं पदार्थोंकूं विषय करणैंवाली शाब्दी प्रमा ये दोनूं इन पदार्थों
े अन्तर्गत हैं अथवा नहीं तो तुमकूं कहणाँ ही पड़ैगा कि मानैं पदार्थों
े अन्तर्गत ही है तोहम पूछै हैंकि ये शाब्दी प्रमा मानैं पदार्थोंके अन्तर्गत
ुई सो प्रमेय है अथवा नहीं तो ये भी कहणाँ ही पड़ैगा कि प्रमेय ही है तो
्रमेय नाम प्रमा के विषयका है यातैं या शाब्दी प्रमाकूं विषय करणैं वाली
एक प्रमा और मानणीं चाहिये सो उस शाब्दी प्रमाकूं विषय करणैंवा
प्रमाकूं भी मानैंपदार्थों के अन्तर्गत ही मानणीं पड़ैगी सो अन्तर
ाणी यातैं इस शाब्दी प्रमाकूं प्रमेय नहीं मानणीं चाहिये सो ये शाब
्रमा भी प्रमेय नहीं और इसमैं कहे सारे पदार्थ प्रमेय हैं ये सिद्ध हु
ो तुमारे मतमैं प्रमेय होय तिसकूं ही पदार्थ मान्यो है यातैं शाब्दी प्र
पदार्थ ही सिद्ध न हुवा सो मानैं पदार्थ इसकै विषय सहुए यातैं प्रमे
हुये नहीं प्रमेय न भये सो पदार्थ ही न भये अब हम ये पूछै हैं कि प्र

माण सैं पैदा होय है अथवा प्रमाण विनाँ हीं सिद्ध है ज्यो कहो कि माण विनाँ हीं सिद्ध है तो शाब्दी प्रमा शब्द प्रमाणतैं सिद्ध न भई यातैं अप्रामाणिक भई तो अप्रामाणिक प्रमातैं सिद्ध सारे पदार्थ अप्रामाणिक भये यो कहो कि शाब्दी प्रमा शब्द प्रमाणतैं पैदा होय है तो शब्द प्रमाणकूँ मानैं दार्थोंके अन्तर्गत ही मानणाँ पड़ैगा ज्यो पदार्थोंके अन्तर्गत मान्याँ तो शब्द प्रमाणकूँ शाब्दी प्रमा का विषय वी कहणाँ हीं पड़ैगा ज्यो विषय हुवा तो शब्द शाब्दी प्रमाकूँ पैदा नहीं कर सकैगा जैसैं चक्षु का विषय घट चक्षुकूँ पैदा नहीं करै है और ये वी समुझो कि प्रमा तो प्रमाण और विषय इन दोनूँतैं पैदा होय है और यहाँ तो शाब्दी प्रमा केवल शब्द प्रमाण रूप विषयतैं हीं पैदा भई यातैं प्रमा ही न भई ज्यो शाब्दी प्रमा प्रमा न भई तो शब्द रूप प्रमाण इसका विषय माँनणैं तैं प्रमेय न हुवा इस कारण तैं शब्द प्रमाण कूँ प्रमेय सिद्ध करणैंवाली शाब्दी प्रमा का प्रमापणाँ सिद्ध करणैं के अर्थ और प्रमाण मानणाँ पड़ैगा तो अनवस्था होगी यातैं शब्द प्रमाणकूँ वी प्रमेय न मानणाँ चाहिये ज्यो शब्द प्रमाण प्रमेय न हुवा तो प्रमाण सिद्ध न हुवा यातैं अप्रामाणिक हुवा तो अप्रामाणिक शब्द प्रमाण तैं सिद्ध सारे पदार्थ अप्रामाणिक भये यातैं सिद्ध न भये तो यह सिद्ध हो गया कि—

"नेह नानास्ति किञ्चन,,

ये श्रुति भेद और भेद का आश्रय दोनूँ का निषेध करै है और ये वी विचार करणाँ चाहिये कि सारे प्रमाणों मैं शिरोमणि वेद है सो वेद नैं द्रव्य गुण इत्यादि नाम करिकैं कहीं वी पदार्थों का विभाग नहीं किया यातैं वी ये कथन सर्वथा अप्रामाणिक है।

ज्यो कहो कि पदार्थ सामान्य सिद्ध नहीं भये तो हम पदार्थ विशेष सिद्ध करैंगे तो हम कहैं हैं कि ये तुमारा कथन तुमारे मत मैं हीं सर्वथा अशुद्ध है काहेतैं कि तुमनैं हीं ऐसैं मान्याँ है कि प्रथम सामान्य रूप करिकैं पदार्थोंका ज्ञान होता है पीछैं विशेष जिज्ञासा होती है। अर्थात् पदार्थों कूँ जुदे जुदे जाननैं की इच्छा होती है पीछैं विशेष रूप करिकैं पदार्थों का ज्ञान होता है अब ज्यो पदार्थ सामान्य सिद्ध ही न हुये तो उन का ज्ञान होणाँ असम्भव ज्यो सामान्य ज्ञान न हुवा तो विशेष रूप

करिकैं जाणणैंकी इच्छा कहाँ ज्यो विशेष रूप करिकैं जाणणैं की इ
तो विशेष रूप करिकैं जाणणैं का सम्भव ही नहीं तो यी कहो
हो कि हम पदार्थ विशेष सिद्ध करैं गे तो कहो तुमनैं आदि के
पृथ्वी १ जल २ तेज ३ वायु ४ परमाणु रूप तो नित्य कहे हैं
रूप अनित्य कहे हैं तहाँ परमाणु मानणैं मैं कहा प्रमाण है।

ज्यो कहो कि परमाणु का प्रत्यक्ष तो नहीं है यातैं परम
मैं अनुमान प्रमाण है तो ये यी कहो कि तुम परमाणु किसकूं
ज्यो कहो कि जाली के प्रकाश मैं सर्वतैं सूक्ष्म ज्यो रज मालुम
उस के छटे भागकूँ परमाणु मानैं हैं तो हम कहैं हैं कि तुम
भाग परमाणु कूँ जिस अनुमान तैं सिद्ध करो हो सो अनुमान
प्रथम प्रकाश मैं ज्यो सर्वतैं सूक्ष्म रज मालुम होय है सो
पैदा हुया द्रव्य है उसका नाम कहा है सो कहो तो त्र्यणुक ऐसैं
उसकी उत्पत्ति तुमारै ऐसैं मानी है कि प्रथम सृष्टि के आदि मैं
की इच्छा तैं परमाणुन मैं क्रिया होय है पीछैं दोनूँ परमाणुन
होय है पीछैं द्व्यणुक पैदा होय है पीछैं तीन द्व्यणुकसैं एक
होय है उस का प्रत्यक्ष होय है तो हम पूछैं हैं कि तुमारै
कितनैं कारणाँ मैं पैदा होय हैं तो तुमकूँ कहणाँ हीं पड़ैगा
कारणाँ मैं सर्व कार्य पैदा होय हैं तिन मैं एक समवायि कारण
असमवायि कारण है तीसरा निमित्त कारण है जैसैं कपाल घट
वायि कारण है और दोनूँ कपालों का संयोग घट का असमवायि
है और कुम्हार दण्ड इत्यादि घट के निमित्त कारण हैं तो हम
कि सृष्टि के आदि मैं परमेश्वर की इच्छा तैं परमाणु मैं ज्यो प्रथम
पैदा होय है ये तुमनैं मानी है तो यो क्रिया यी पैदा हुई मानै
मानणाँ पड़ैगी ज्यो यो क्रिया कार्य हुई तो उस के कारण तीन
सो परमाणु तो उस क्रिया का समवायि कारण होगा और
इच्छा उसकी निमित्त कारण होगी और असमवायि कारण यहां
सकै है सो कारण एक की न्यून होतैं तैं कार्य पैदा होय नहीं
मैं प्रथम क्रिया मानणाँ सिद्ध न हुया ज्यो परमाणु मैं प्र
हुई तो उस क्रिया मैं दो परमाणुन का संयोग पैदा है

हुवा अरो तो संयोग न हुवा तो द्व्यणुक पैदा न हुवा द्व्यणुक नहुवा तो तीन द्व्यणुकों सैं एक त्र्यणुक होता है सो न हुवा तो ऐसें कार्य द्रव्य मात्र सिद्ध न हुवा तो कार्य द्रव्यों की उत्पत्तिके अर्थ परमाणु मान्याँ सो तुमारे मत सैं हीं उसकी कल्पना व्यर्थ भई और तुमनैं अनुमान तैं परमाणु की सिद्धि मानी सो वी नहीं बणसके काहेतैं कि तुमारे ऐसा अनुमान है कि जैसैं घट है सो प्रत्यक्ष है यातैं सावयव है तैसैं त्र्यणुक है सो वी प्रत्यक्ष है यातैं सावयव है तो इस अनुमान मैं त्र्यणुक के अवयव सिद्ध किये पीछैं ऐसा अनुमान किया कि जैसैं घट का अवयव कपाल अपणी अपेक्षा महान् घटकूँ पैदा करै है यातैं सावयव है तैसैं त्र्यणुक का अवयव वी अपणी अपेक्षा महान् त्र्यणुक कूँ पैदा करै है यातैं सावयव है तो इस अनुमान मैं त्र्यणुक के अवयव जे द्व्यणुक उन के अवयव परमाणु सिद्ध किये हैं परन्तु इतना तो विचार करणाँ चाहिये कि ऐसैं अनुमान बणायकर परमाणु सिद्ध करै तो परमाणु सिद्ध होयई नसकै काहे तैं कि जैसैं कपल का अवयव खर्पर महान् घट के अवयव का अवयव है यातैं सावयव है तैसैं द्व्यणुक का अवयव वी महान् त्र्यणुक के अवयव का अवयव है यातैं सावयव है इस अनुमान तैं तुमारे मानैं परमाणु का वी अवयव सिद्ध होगा ऐसैं हीं अनुमान धारा तैं अवयव धारा सिद्ध होगी यातैं निरवयव परमाणु मानणाँ असङ्गत ही है और विचार करो कि परमाणु मानोंगे तो त्र्यणुक मैं अप्रत्यक्षपणाँ की आपत्ति होगी काहेतैं कि तुमनैं परमाणु और द्व्यणुक ये दोय द्रव्य तो अप्रत्यक्ष मानैं हैं और त्र्यणुककूँ आदि लेकैं सारे कार्य द्रव्य प्रत्यक्ष कहे हैं तो यहाँ ऐसा अनुमान हो सकै है कि जैसैं द्व्यणुक अप्रत्यक्ष द्रव्य ज्यो परमाणु तातैं पैदा होय है यातैं अप्रत्यक्ष है तैसैं त्र्यणुक वी अप्रत्यक्ष ज्यो द्व्यणुक तातैं पैदा हुवा है यातैं अप्रत्यक्ष है इस अनुमान तैं त्र्यणुक मैं अप्रत्यक्ष पणैं की आपत्ति होगी ज्यो कहो कि सर्व प्रमाणों मैं प्रत्यक्षप्रमाण प्रबल है यातैं प्रत्यक्ष सिद्ध त्र्यणुक मैं अनुमान तैं अप्रत्यक्ष पणाँ सिद्ध नहीं हो सकै तो हम कहैं हैं कि पूर्व कही अनुमान धारा तैं सिद्ध अवयवधारा रूप अनवस्था दोष प्रबल है । यातैं निरवयव परमाणु वी सर्वथा सिद्ध नहीं हो सकै ज्यो कहो कि अनवस्था दोष न लागै के अर्थ ही हमनैं परमाणु निरवयव मान्यां है यातैं परमाणु सिद्ध होगया तो हम [illegible] कि [illegible]णुक मैं अप्रत्यक्ष पणाँ की आपत्ति नहीं होवै है

अर्थ हमनैं परमाणु नहीं मान्यां है यातैं परमाणु सिद्ध न हुवा ज्यो को
द्वयणुक ज्यो अप्रत्यक्ष है सो तो अप्रत्यक्ष परमाणुतैं पैदा हुवा है यातैं
त्यक्ष है ये नहीं है किन्तु द्रव्य का ज्यो चक्षु तैं प्रत्यक्ष होय है तहाँ मह
ओर उद्भूत रूप ये दोनूँ मिले कारण हैं यातैं जहाँ महत्व ओर उ
रूप ये दोनूँ होंयँ तहाँ तो चक्षु तैं प्रत्यक्ष ज्ञान होय है जैसैं घट मैं
दोनूँ हैं यातैं घट का प्रत्यक्ष होय है ओर जहाँ दोनूँ मैं तैं एक होय
एक न होय तहाँ द्रव्य का प्रत्यक्ष चक्षु तैं होवै नहीं जैसैं महावायु मैं मह
तो है ओर उद्भूत रूप नहीं है तो महावायु का प्रत्यक्ष चक्षु तैं न
होय है तैसैं हीं परमाणु मैं ओर द्व्यणुक मैं उद्भूत रूप तो है प
महत्व नहीं है यातैं परमाणु का ओर द्व्यणुक का प्रत्यक्ष होय नहीं यातैं
नुमान बणाकरिकैं द्व्यणुक के दृष्टान्त तैं त्र्यणुक मैं अप्रत्यक्ष पणैं की प्र
त्ति दिई सो सर्वथा असङ्गत है काहे तैं कि द्व्यणुक मैं अप्रत्यक्ष पणों पर
णु के अप्रत्यक्ष होणे तैं न रहा किन्तु महत्व रूप कारण न होणैं तैं अप्र
पणों रहा यातैं दृष्टान्त सिद्ध न हुवा तो हम कहैं हैं कि द्व्यणुक का भी
त्यक्ष होणों चाहिये काहे तैं कि द्व्यणुक मैं तुम उद्भूत रूप तो मानों
हो ओर महत्व नहीं मानों हो परन्तु हम कहैं हैं कि द्व्यणुक दोय पर
णुन तैं पैदा हुवा द्रव्य है ऐसैं मानों हो यातैं परमाणु की अपेक्षा द्व्यणुक
बडा पणों मानणोंहीं पडैगा तो बडा पणों महत्व का ही नाम है तो द्व्यणु
मैं महत्व भी रहा यातैं द्व्यणुक का प्रत्यक्ष होणों चाहिये काहे तैं कि द्व्यणु
मैं तुमारे मानैं भये महत्व ओर उद्भूत रूप दोनूँ कारण मौजूद हैं ज्यो क
कि द्व्यणुक ज्यो है सो त्र्यणुक की अपेक्षा अणु है यातैं महत्व रूप
रण के नहीं रहनें सैं द्व्यणुक का प्रत्यक्ष नहीं होय है तो हम कहैं हैं कि
णुक भी चतुरणुक की अपेक्षा अणु है यातैं त्र्यणुक का भी प्रत्यक्ष नहीं हो
हिये । ज्यो कहो कि परमाणु ओर द्व्यणुक इन दोनूँ का प्रत्यक्ष नहीं
तैं हम इनमैं महत्व नहीं मानैं हैं याहीतैं महत्व रूप कारण
नहीं रहनें सैं इनका प्रत्यक्ष नहीं होय है तो हम कहैं हैं कि प्रत्यक्ष
होनें तैं द्रव्य मैं महत्व का न मानणों कहोगे तो आकाश का भी
प्रत्यक्ष नहीं मानों हो यातैं आकाश मैं भी तुमारे महत्व का न मानणों
सिद्ध होगा ज्यो आकाश मैं महत्व ही न रहा तो परममहत्व का मानणों
ही खण्डन हो कठिन हो गया जो कहो कि हम तो परमाणु भी

दोनूँकूँ हीँ अणु मानैं हैं यातैं इनमैं महत्व न रहा महत्वके नहीँ रहणैं तैं इनका तो प्रत्यक्ष नहीँ होय है और त्र्यणुक मैं महत्व है यातैं त्र्यणुक का प्रत्यक्ष होय है तो हम कहैं हैं कि तुमारे मत मैं द्व्यणुक तो कार्य है और परमाणु द्व्यणुक का कारण है ऐसैं लिखा है तो थी ज्यो तुमनैं कार्य और कारण दोनूँकूँ अणु शब्दसैं कहे तो हम विश्वास करैं हैं कि कोई समयमैं तुम कपालकूँ और घटकूँ थी एक नाम करिकैं कहोगे तो श्रोताकूँ यथार्थ बोध कैसैं होगा यातैं ऐसैं बोलणाँ सर्वथा असङ्गत है ज्यो कहो कि कपाल और घट ये दोनूँ महान् हैं यातैं इनका प्रत्यक्ष है इस व्यवहार मैं जैसैं कपालकूँ और घटकूँ महत् शब्द करिकैं कहे हैं तैसैं परमाणुकूँ और द्व्यणुककूँ अणु नाम करिकैं कहे हैं यातैं हमारे कथन तैं श्रोताके यथार्थ बोध मैं कोई हानि नहीँ इस कारण तैं हमारा कथन असङ्गत नहीँ तो विचार दृष्टि तैं देखो कि कपाल कूँ और घटकूँ महत् शब्द सैं कहे तो थी घटकी अपेक्षा कपाल तो अल्प है और कपालकी अपेक्षा घट महान् है ऐसैं मानणाँ हीँ पड़ैगा तैसैंहीँ परमाणु कूँ और द्व्यणुक कूँ अणु नाम करिकैं कहे तो थी द्व्यणुक की अपेक्षा परमाणु तो अल्प है और परमाणु की अपेक्षा द्व्यणुक महान् है ऐसैं थी मानणाँ हीँ पड़ैगा तो द्व्यणुक मैं महत्व सिद्ध हो गया यातैं द्व्यणुकका प्रत्यक्ष होणाँ चाहिये परन्तु तुमारे मतमैं द्व्यणुक का प्रत्यक्ष मान्याँ नहीँ यातैं द्रव्य का चक्षुतैं प्रत्यक्ष होय तहाँ महत्व कूँ कारण मान्याँ सो सर्वथा नहीँ बणैं सकै और विचार करोकि जैसैं महत् पदार्थों मैं कपाल की अपेक्षा घटकूँ तो परम महान् कहोगे और कपाल के अवयव कूँ अल्प महान् कहोगे और कपालकूँ महान् कहोगे तो अल्प महान् और परम महान् इन व्यवहारौं का कारण महान् कपाल हुया तैसैं परमाणु और द्व्यणुक इन व्यवहारौं का कारण एक अणु और मानणाँ चाहिये काहेतैं कि अणुतैं अल्प ये तो परमाणु शब्द का अर्थ है और दो अणु मिले भये ये द्व्यणुक शब्द का अर्थ है अब ज्यो परमाणु तैं और द्व्यणुकतैं जुदा अणु न मानोंगे तो परमाणु और द्व्यणुक दोनूँहीँ सिद्ध नहीँ होंगे ज्यो कहोकि परमाणु और द्व्यणुकतैं जुदा अणु तो कोई थी आचार्य मानै नहीँ यातैं परमाणु और द्व्यणुक तैं जुदा अणु तो हम थी नहीँ मान सकैं तो हम कहैं हैं कि तुमारे मानैं परमाणु और द्व्यणुक हैं हीँ नहीँ ज्यो परमाणु और द्व्यणुक होते तो इनकी सिद्धि करणैं वाला अणु द्रव्य कूँ तुमारे आचार्य

परन्तु ये सर्वथा असङ्गत है काहेतें कि ज्यो परमाणु तें सृष्टि होती तो वेद में भी कहीं वर्णन किये होती सो वेदमें कहीं बी परमाणुतें सृष्टिवर्णन किये नहीं यातें परमाणु मानणाँ सर्वथा अप्रमाण है ।

अब हम ये बी पूछैं हैं कि तुमनें कार्य द्रव्यौं की उत्पत्ति के अर्थ परमाणुस्वरूप मूल समवायिकारण की कल्पना किये है तो ये कहो कि तुम कार्य द्रव्य किन कूँ कहो हो ज्यो कहो कि हम घटादिपदार्थौं कूँ कार्य द्रव्य कहैं हैं तो हम पूछैं हैं कि अवयवि द्रव्य और कार्य द्रव्य एक ही है अथवा विलक्षण है ज्यो कहो कि एक ही है तो उस कार्य द्रव्य के उपादान कारण अवयव होंगे तो हम पूछैं हैं कि तुमारा मान्याँ कार्य द्रव्य अवयव रूप कारणौं का समुदाय है अर्थात् अवयवौं का समूहरूप है अथवा अवयवौं तें ज्यो कार्य होय है सो अवयवौं तें विलक्षण पैदा होय है ज्यो कहो कि अवयवौं का समूह ही कार्य है तो हम पूछैं हैं कि तुम समुदाय पदार्थ किस कूँ कहो हो तो ये ही कहोगे कि समुदाय पदार्थ जुदा तो है नहीं किन्तु प्रत्येक अवयव रूप है तो हम कहैं हैं कि समुदाय ज्यो प्रत्येक रूप होय तो प्रत्येक अवयव में समुदाय की बुद्धि होणीं चाहिये यातें समुदाय कूँ प्रत्येक रूप मानणाँ असङ्गत है और दूसरा दोष ये बी है कि समुदाय प्रत्येक रूप होय तो घटका प्रत्यक्ष नहीं होणा चाहिये काहेतें कि तुम घटकूँ परमाणुसमुदाय रूप कहोगे समुदाय तुमारे मतमें प्रत्येक रूप है तो घट प्रत्येक परमाणु रूप हुवा यातें घटका प्रत्यक्ष होता है सो सो नहीं होणाँ चाहिये और प्रत्येक परमाणु बहुत हैं और घट प्रत्येक परमाणु रूप हुवा यातें घटरूप कार्य बहुत मानणे चाहिये और परमाणु रूप हुये यातें नित्य मानणें चाहिये ज्यो नित्य हुये तो कार्य द्रव्य मानणां असङ्गत हुवा ज्यो कहो कि जैसें दूरदेशमें स्थित एक केशका प्रत्यक्ष नहीं होय है सोयी केशौं के समूह का प्रत्यक्ष होय है तैसें ही एक परमाणु का प्रत्यक्ष नहीं होय है तो बी परमाणुनका समूह ज्यो घट उसका प्रत्यक्ष होय है तो हम कहैं हैं कि केशका तो समीप देशमें प्रत्यक्ष होय है और परमाणु का तो तुमारे मतमें प्रत्यक्ष है ही नहीं यातें दृष्टान्त दार्ष्टान्त विषम होणेंसें घटका प्रत्यक्ष कहा सो असङ्गतही है और ये बी समझो कि जिस देश में स्थित एक केशका प्रत्यक्ष नहीं होय है उस देश में स्थितकेशौं के समूह का प्रत्यक्ष होय है सो नहीं होणां चाहिये काहेतें कि तुम समूह कूँ प्रत्ये

रूप मानौं हो तो केशौंका समूह प्रत्येक केशरूप हुवा और प्रत्येक केशका [स्या
होय नहीं यातैं केशौंके समूह का वी प्रत्यक्ष नहीं होणाँ चाहिये
उस ही देश मैं केश समूह वहुत दीखणैं चाहिये काहेतैं कि तुम समूह
प्रत्यक्ष मानौं हो तो केशौंका समूह प्रत्यक्ष दीखै है सो समूह प्रत्येक केश
है और प्रत्येक केश वहुत हैं यातैं केश समूह वहुत दीखणैं चाहिये
विचार दृष्टितैं देखो कि केश समूह प्रत्येक केश रूप तो हुवा नहीं और
तुम समूहकूं प्रत्येक तैं जुदा मानौं नहीं यातैं केश समूह प्रत्येक केशतैं जु
होसकै नहीं तो केश समूह सिद्ध ही न हुवा यातैं केश समूह रूप दृष्टान्
तैं पटमैं प्रत्यक्षपणाँ सिद्ध किया सो होय ही नहीं सकै।

जयो कहोकि कार्यकूं अवयवसमूह मानणाँ असङ्गत हुवा क
तैं कि समूह कूं प्रत्येक रूप मानणैं तैं तो हम ऐसैं मानैंगे कि अवय
रूप कारणौं तैं जयो कार्य पैदा होय है सो अवयव रूप कारणौंतैं विलक्ष
पैदा होय है ऐसैं मानणैं मैं ये गुण वी है कि कार्य और कारण का लो
मैं जुदा व्यवहार है सो वी बणँ जायगा तो हम पूछैं हैं कि उपादान
कारणतैं कार्य विलक्षण मानौं हो तो तुम आरम्भ वाद मानौं हो अथ
परिणाम वाद मानौं हो जयो पूछो कि आरम्भ वाद कहा और परिणाम
वाद कहा तो हम कहैं हैं कि आरम्भ वाद मत जिनका है वे तो ऐसैं
कहैं हैं कि उपादान कारण अवयवैं तैं विलक्षण कार्यकूं पैदा करै है और
आप अपणैं स्वरूप में वणाँ रहै है जैसैं तन्तुरूप उपादान कारण
तैं विलक्षण पटस्वरूप कार्य कूं पैदा करैहै और आप तन्तु अपणैं स्वरू
मैं वणैं रहैं हैं याहीसैं तन्तु पटके शरीर मैं मालुम होय हैं ये आरम्भ वा
मत है इस मतमैं तन्तुवौं मैं पटस्वरूप कार्य का आरँभ किया यातैं त
आरम्भी कारण भये और पट कार्य आरम्भ हुवा।

और परिणाम वाद मत जिनका है वे ऐसैं कहैं हैं कि उपादा
कारण ही कार्यस्वरूप परिणाम कूं प्राप्त हो जाय है और कार्य अवस्था
अपणैं स्वरूप मैं नहीं रहै है जैसैं दहीका उपादान कारण दूध है और
दही स्वरूप परिणाम कूं प्राप्त होय है और दही अवस्था मैं दूध अपणैं
स्वरूप मैं नहीं रहै है याहीतैं दहीके स्वरूप मैं दूध नहीं मालुम होय
है परिणाम वाद मत है इस मतमैं दूध रूप कारण दही रूप परिण
कूं प्राप्त हुवा यातैं दूध परिणामी कारण हुवा और दही रूप कार्य हुवा

परिणाम हुवा ऐसैं उपादान कारण मात्रकूँ आरम्भ वाद मतमैं आरम्भी कारण मानैं हैं और परिणाम वाद मतमैं परिणामी कारण मानैं हैं और ऐसैं ही कार्य मात्रकूँ आरँभवाद मत मैं आरब्ध मानैं हैं और परिणाम वाद मत मैं परिणाम मानैं हैं।

अब ज्यो कहो कि अवयव रूप कारणों तैं बिलक्षण कार्य की उत्पत्ति मैं आरम्भवाद मत मानैं हैं तो हम कहैं हैं कि आरम्भवाद मतमैं अवयव रूपकारण कार्य कूँ पैदा करैं हैं सो कार्य अपणैं कारणों तैं जुदाही मानणाँ पड़ैगा तो कारण जैसैं कार्यकूँ आपतैं जुदाही पैदा करै है ये मानोंगे तैसैं कारण के गुण कार्य मैं आपतैं जुदे आपके सजातीय गुणों कूँ पैदा करैं हैं ये बी मानों होंगे तो हम कहैं हैं कि घटके अवयव दो कपाल हैं सो ये ही घटके उपादान कारण होंगे अब कहो कि प्रत्येक कपाल घटका कारण है अथवा दोनूँ कपाल मिले कारण हैं ज्यो कहोकि प्रत्येक कपाल घटका कारण है तो हम कहैं हैं कि प्रत्येक कपाल तैं घटरूप कार्य होणाँ चाहिये ज्यो कहो कि प्रत्येक कपालतैं हीं घट होय है तो हम कहैं हैं कि प्रत्येक कपाल दो हैं यातैं घट दो होणैं चाहिये दो घट होयैं तब ही तुमारा ये बी नियम बणैं कि परिमाण का स्वभाव ये है कि आपके समान जातीय और आपतैं अधिक ऐसे परिमाण कूँ कार्य मैं पैदा करै है परन्तु ये नियम तब बणैं कि ये दोनूँ घट अपणैं कारण कपालों की अपेक्षा कुछ ज्यादा परिमाण वाले होयैं देखो कल्पना करो कि कपाल दश अङ्गुल है उससैं घट पैदा हुवा तो घटमैं बीस अङ्गुल तैं अधिक परिमाण मालुम होणाँ चाहिये काहेतैं कि दश अङ्गुल तैं कुछ अधिक तो होगा घटका परिमाण और आरम्भ वाद मतमैं कारण अपणैं स्वरूप का त्याग नहीं करिकैं कार्य के शरीर मैं मोजूद रहै है यातैं दश अङ्गुल हुवा कपाल का परिमाण ऐसैं घटमैं बीस अङ्गुल तैं कुछ अधिक परिमाण मालुम होणाँ चाहिये परन्तु दो घट होयैं नहीं यातैं प्रत्येक कपाल कूँ कारण मानों हो सो असङ्गत है ज्यो कहो कि उपादान कारण तो प्रत्येक कपाल ही है परन्तु अवयव संयोग कार्य द्रव्य का असमवायि कारण होय है सो अवयव संयोग एक कपाल मैं बणैं सकै नहीं यातैं दूसरे कपाल मैं अवयव संयोग रूप असमवायि कारण सिद्ध करणों तो ऐसैं उपादान कारण तो एक कपाल हुवा यातैं तो एक ही घट कार्य हुवा और द्वितीय कपाल तो केवल

असमवायि कारण सिद्ध करणें के अर्थ अपेक्षित है यातें दो घट होणें
आपत्ति दिई से अप्रकृत है तो हम कहें हैं कि द्वितीय शब्द तो सापे
है काहेतें कि प्रथम की अपेक्षा द्वितीय होय है और विनिगमना अर्थ
एक पक्ष कूँ सिद्ध करणें की युक्ति कोई है नहीं यातें तुमनें असमवायि
कारण सिद्ध करणें के अर्थ जिस कपालकी अपेक्षा किई उस कपाल कूँ
हम घटका उपादान कारण मानैं गे और तुमारे मानें उपादान कारण
उसकी अपेक्षा द्वितीय मानि करिकें अवयव संयोग रूप असमवायि का
सिद्ध करणें वाला मानैं गे तो एक घट तो प्रथम प्रक्रिया क्यों तुमनें क
उससें सिद्ध हो गया और दूसरा घट हमारी कही दूसरी प्रक्रियातें सि
होगा तो प्रत्येक कपाल कूँ कारण मानें दोय कपालों तें दोय ही
होणें चाहिये और पहिलें कहे तुमारे नियम तें प्रत्येक घटमें ए
कपाल के परिमाण की अपेक्षा दूणाँ तें अधिक ही परिमाण मानु
होणाँ चाहिये यातें प्रत्येक कपाल घटका कारण मानणाँ अप्र
कृत ही है ॥

क्यों कहो कि दोनूँ कपाल मिले घटका कारण मानैं गे तो ह
पूछें हैं कि दोनूँ कपाल मिले घटके उपादान कारण हैं सो दोनूँ कपा
मिले इसका अर्थ कहा है क्यों कहो कि संयोग वाला कपाल ये अर्थ
तो हम कहें हैं कि जैसें कपालों में कपालोंका रूप विशेषण है तैसें संयो
भी कपालों का विशेषण हुवा सो तुम कपालों के रूपकूँ घटका कार
नहीं मानों हो तैसें संयोग कूँ भी घटका कारण नहीं मान सकोगे क्यों
कि तुमनें पाँच प्रकारकी अन्यथासिद्धि मानी है सो अन्यथा सिद्धि जिन
रहे उनकूँ अन्यथा सिद्ध कहा करिकें कारण नहीं मानें हैं तहाँ दू
अन्यथासिद्ध कारण के रूपकूँ कहा है तहाँ कारण के रूपकूँ अन्यथा सि
ऐसें बताया है कि क्यों अपनें कारण के साथ ही कार्यके पूर्ववर्ती हो
और अपनें कारण बिना क्यों कार्यके पूर्ववर्ती नहीं होय सो रूप कार
प्रति अन्यथा सिद्ध होय है सो रूपके कारण होंगे दण्ड कपाल इत्यादि
उनके साथ ही रूप घट कार्यके पूर्ववर्ती हो सके है और उनके बिना घ
कार्यके पूर्ववर्ती हो सके नहीं याते दण्ड कपाल इत्यादिका रूप घट का
के प्रति अन्यथासिद्ध होणेंसें घटका कारण नहीं है तो हम कहें हैं कि
कपालों का संयोग भी अपनें उपादान कारण जे कपाल उनके साथ ही

घट कार्यके पूर्ववर्त्ती हो सकै है उनके विना पूर्ववर्त्ती हो सकै नहीं यातैं कपालौं का संयोग घट कार्यके प्रति अन्यथा सिद्ध होणेंतैं घटका कारण नहीं मान सकोगे ज्यो कहोकि ये कथन अनुभवविरुद्ध है काहेतैं कि दोनूं कपालौं का संयोग होतैं हीं घटकी उत्पत्ति प्रत्यक्ष दीखे है यातैं दोनूं कपालौंका संयोग घटका कारण नहीं मानैं ये नहीं हो सकै तो हम कहैं हैं कि कपालौंके संयोग कूं हीं घटका कारण मानौं कपाल तो अन्यथा सिद्ध है ज्यो कहो कि कपाल तो घटके कारण हैं ये कोनसा अन्यथा सिद्ध होगा तो हम कहैं हैं कि कपालौं कूं तीसरा अन्यथा सिद्ध मानौं,काहेतैं कि जिसकूं अन्यके प्रति पूर्ववर्त्ती जाणैं करिकैं कार्यके प्रति पूर्ववर्त्ती जाणै वो उस कार्यके प्रति अन्यथा सिद्ध है जैसैं आकाश शब्द का समवायि कारण है यातैं आकाशकूं शब्द के प्रति पूर्ववर्त्ती जाणैं करिकैं हीं घट के पूर्ववर्ती जाणैं है यातैं आकाश घट कार्यके प्रति अन्यथा सिद्ध है तैसैं हीं कपालौं का ज्यो संयोग उसके समवायि कारण कपाल हैं यातैं कपालौंकूं संयोग के पूर्ववर्त्ती जाणैं करिकैं हीं घटके पूर्ववर्त्ती जाणैं हैं यातैं घट कार्य के प्रति कपाल अन्यथा सिद्ध हैं यातैं घटके कारण नहीं हो सकैं और जिस प्रक्रियातैं घट कार्यके प्रति कपाल अन्यथासिद्ध भये तिस ही प्रक्रिया तैं दण्ड कुलाल इत्यादिक भी अन्यथासिद्ध ही होंगे तो तुमनें जिनकूं घट के कारण कल्पना किये ये अन्यथासिद्ध होणेतैं कारण नहीं होसकैं ज्यो का- ग हीं नहीं हो सकैं तो कार्य कूं कैसैं पैदा करैं यातैं कार्य मानणाँ [illegible]सिद्ध न हुवा ।

और विचार करो कि तुम ऐसैं मानौं हो कि कार्य और कारण एक [illegible]गैं रहैं तब कारण कार्यकूं पैदा करै है और ज्यो एक देशमैं न रहैं तो [illegible]ारण कार्यकूं पैदा नहीं करसकै याहीतैं वनमैं कहीं पड़ा हुवा ज्यो दण्ड [illegible]समैं कार्य पैदा नहीं होय है और घट जहाँ रहै तहाँ हीं दण्डरहै तब ही [illegible]ण्ड घटकूं पैदा करैहै यातैं दण्ड और घट इन दोनूंकूं एक जगैं रहणैं के [illegible]र्थ ऐसैं कहा है कि कपालौं मैं घट तो समवाय सम्बन्ध करिकैं रहै है और दण्ड स्वजन्यभ्रमिजन्यक्रियाजन्यविभागजन्यसंयोगवत्त्व सम्बन्ध करिकैं कपालौं मैं रहै है तो दण्ड और घट एक देशमैं रह गये यातैं दण्डरूप कारण सैं घट कार्य हुवा परन्तु इतनाँ तो विचार करो कि ये सम्बन्ध तो एव्यभिचारक है अर्थात् इस सम्बन्ध का ये सामर्थ्य नहीं है कि दण्ड कूं

कपाल में रख देवे ऐसे ऐसे सम्बन्धों में कारण और कार्यकूं एक जगै रखोगे तो परमेश्वर और उसके ज्ञान इच्छा यत्न और दिशा काल जीवों के अदृष्ट घटका प्रागभाव और प्रतिबन्धकका अभाव ये नवसङ्ख्य तो साधारण कारण और कुलाल दण्ड सूत्र जल चक्र इत्यादिक निमित्त कारण और कपाल समवायि कारण और दोनूं कपालों संयोग असमवायि कारण ये सर्व कपालों में स्थित मानणें पड़ेंगे तो कार्य होगा ही नहीं काहेतें कि कुलाल चक्र दण्ड इत्यादिक के भारतें पालों का चूर्णहीं होगा अब ज्यो कपाल ही न रहे तो घट कैसें होय कार्य मानणां असङ्गत ही है और ज्यो पहिलें कही कि कपालों का संयो होतें हीं घट दीखे है यातें कपालोंके संयोगकूं कारण न मानोगे तो प्र भयविरोध होगा तो हम कहा कहैं तुमकूं तो यहां कुलाल चक्र द इत्यादि पर्यन्त कपालों में दीखैं हैं और हमकूं दीखैं नहीं यातें तुम्ह दिव्यदृष्टि के समान हमारी चर्मदृष्टि कैसें होय इस ही कारण सें हम तुम अनुभव का विचार नहीं कर सकैं परन्तु इतनां तो तुम हीं विचारो कि क पालों तें घट पदार्थ जुदा होय तो आरम्भवाद मतसें दोय सेर के दो कपालों का बणाया घट चार सेर होय काहेतें कि दोय सेर भार तो का यों का और दोय सेर भार होगा घटका ऐसें घट चार सेर होणां चाहि सो होवे नहीं यातें उपादान कारणतें विलक्षण कार्य मानणां असङ्ग ही है।

ज्यो कहो कि आरम्भवाद मतमें घट स्वरूप कार्य सिद्ध न हुवा तो हम परिणामवादमत मानि करिकें घट कार्यकूं कारणसें जुदा सिद्ध करैं काहेतें कि परिणामवाद मतमें दूधरूप उपादान कारण हीं दही रूप परि णामकूं प्राप्त होय है यातें कार्य और कारण के गुण जुदे नहीं होवें पट कार्यमें द्विगुण होणें की आपत्ति नहीं क्योंकि कपाल रूप उपादान कारण हीं घट अवस्थाकूं प्राप्त हुवा है अब जैसें कपाल घट अवस्था प्राप्त हुवा सो आपतें जुदा ही द्रव्यकूं पैदा कर दिया और आप स्वरूपमें न रहा तैसेंही कपाल के गुण भी घट कार्यमें अपनें सें जुदे गुणोंकूं पैदा कर दिये और आप अपणें स्वरूपमें न रहे यातें घटमें द्विगुण होणें की आपत्ति नहीं है ज्यो कहो कि ऐसें मानोंगे तो कारण और कार्य जुदे कैसें हो सकैं ते काहेतें कि कारण तो है दूधकी कार्य है दही घट दूधरूपी

दहीअवस्थाकूँ प्राप्त हुया है तो हम कहैं हैं कि हमारे कारणकूँ कार्यतैं जुदा करणें तैं कुछ प्रयोजन नहीं कार्यकी सिद्धिसैं प्रयोजन है सो कार्य सिद्ध हो गया हम तो अवस्थाभेदसैं हीं कार्य और कारण इनकूँ जुदे मानैं हैं और प्रकारतैं जुदे मानैं नहीं तो हम कहैं हैं कि ऐसैं परिणामवाद मतसैं कार्य सिद्ध करो हो तो ये विचार तो करो कि इस मतमैं दही दूधका परिणाम है दूध कारण है और दही कार्य है तो जैसैं दूधतैं दही होय है तैसैं दहीसैं छाछ और माँखन तो होय है परन्तु दूध होवै नहीं तैसैं हीं ज्यो घट यी कपालौं का परिणाम होय तो कपालौंतैं जैसैं घट होय है तैसैं घटतैं कपाल होवैं नहीं परन्तु जब कपालौं का संयोग नष्ट होय है तब घटकी तो प्रतीति होय नहीं और कपालौं की प्रतीति होय है यातैं परिणामवाद मत मानणाँ यी अशुद्ध ही है ज्यो ये मत अशुद्ध हुया तो इस मत सैं यी कार्य मानणाँ असङ्गत ही हुया ।

अब हम ये और पूछैं हैं कि परिणामवाद मतमैं दूधतो उपादान कारण है और दही उसका परिणाम है सो कार्य है तो ये कहो कि जब दूधकी दही अवस्था होय है तब प्रथम दूध के सूक्ष्म अवयवौंका ही दहीरूप परिणाम होय है अथवा स्थूल दूध ही दही रूप परिणामकूँ प्राप्त होय है ज्यो कहो कि दूधके सूक्ष्म अवयवौंका प्रथम दही रूप परिणाम होय है तो हम कहैं हैं कि दूधके अवयवौं का ज्यो संयोग उसका नाश प्रथम मानणाँ पडैगा काहेतैं कि परिणामवादमैं कार्य की अवस्था भयैं कारण अपणें स्वरूपतैं रहै नहीं यातैं पीछैं सूक्ष्म अवयवौं मैं दही रूप परिणाम मानणाँ पडैगा पीछैं सूक्ष्म अवयवौं के नाना संयोग मानणें पडैंगे पीछैं महादधि रूप कार्य मानोंगे तो जब सूक्ष्म अवयवौं का संयोग नष्ट हुया तब अवयवौं के मध्यमैं जहाँ तहाँ अवकाश मानौं ज्यो अवकाश मान्याँ तो ये तुम निश्चय करिकैं जानौं पूर्ण पात्रसैं दूध का कुछ भाग बाहिर निकलनाँ चाहिये सो निकलै नहीं यातैं दूध के सूक्ष्म अवयवौं का दही रूप परिणाम मानणाँ असङ्गत है ज्यो कहो कि स्थूल दूध ही दही रूप परिणामकूँ प्राप्त होय है तो हम पूछैं हैं कि दूधकूँ सावयव मानौं हो अथवा निरवयव मानौं हो ज्यो कहो कि सावयव मानैं हैं तो कहो कि अवयवौं मैं परिणाम होकर अवयवी दूधमैं परिणाम होय है अथवा अवयवी दूधमैं परिणाम हो कर अवयवौंमैं परिणाम मानौं हो अथवा अवयव और अवयवी इन दोनूं मैं एक ही समयमैं परि-

कोंमं मानो हो क्यो कहो कि अवयवों मैं परिणाम होकर अवयवी दूधमैं परिणाम मानैं हैं तो हम कहैं हैं कि अवयवोंमें परिणाम मान कर अवयवी दूधमैं दही रूप परिणाम मानणाँ असङ्गत है काहेतैं कि ज्यो प्रथम अवयवों का दही रूप परिणाम हुवा तो क्रमतैं हुवा अथवा क्रम विना हीं हुवा क्यो कहो कि क्रमतैं हुवा तो प्रथम कोनसे अवयवसैं परिणाम का प्रारम्भ होगा तो विनिगमना नहीं होवैं तैं कोईवी अवयवसैं प्रारम्भ नहीं मान सकोगे तो अवयवों मैं क्रमसैं परिणाम मानणाँ सिद्ध न हुवा क्यो कहो कि क्रम विना हीं अवयवोंमैं परिणाम मानैं हैं तो हम कहैं हैं कि तुमारे कोई विनिगमना तो है नहीं यातैं अवयवी दूधमैं परिणाम मान करिकैं हीं अवयवों मैं परिणाम मानौं क्यो कहो कि ऐसैं हीं मानैंगे तो यहाँ वी विनिगमना नहीं होवैं तैं इससैं विपरीत ही मानौं हम ऐसैं कहैंगे ज्यो कहो कि हम अवयव और अवयवी इन दोनूं मैं एक समयमैं परिणाम मानैं हैं तो हम कहैं हैं कि परिणाम वाद मतमैं अवयवी रूप कार्यावस्थामैं अवयव रूप कारण अपणें स्वरूपतैं रहैं नहीं यातैं ये कथन वी असङ्गत है क्यो कहो कि ये कथन असङ्गत हुवा तो हमारा पहिलैं मान्याँ हुवा स्थूल दूधमैं दही रूप परिणाम सिद्ध हो गया तो हम कहैं हैं दूधमैं निरवयव होवैं तैं नित्य पणाँ की आपत्ति भई और परमाणु तथा आकाश इनकी तरैंह अप्रत्यक्ष होवैं की आपत्ति भई यातैं परिणामवादमैं वी कार्य मानणाँ असङ्गतही है ।

अब न तो परमाणुस्वरूप मूल उपादान कारण सिद्ध हुवा और ने घटादि स्वरूप कार्य सिद्ध हुवा यातैं नित्य और अनित्य रूप करिकैं मानैं पृथ्वी १ जल २ तेज३ वायु ४ सिद्ध न हुये देखो शिरोमणि भट्टाचार्यनैं पदार्थतत्व नाम करिकैं ग्रन्थ बणाया है तिसमैं वी परमाणु नहीं मा. है ज्यो कहो कि शिरोमणि भट्टाचार्यनैं परमाणु तो न मान्याँ परन्तु कार्य तो मान्याँ है यातैं कार्य सिद्ध हुवा तो हम कहैं हैं कि जैसैं परमाणु का विवेचन किया तैसैं उननैं कार्यका विवेचन न किया ज्यो कार्य का वी विवेचन करते तो कार्य वी नहीं मानते ।

अब कहो तुम आकाशकूं कैसैं सिद्ध करो हो ज्यो कहो कि आकाश नित्य है और व्यापक है और नीरूप है यातैं आकाश का प्रत्यक्ष तो नहीं यातैं अनुमानमैं आकाश सिद्ध होय है तो तुम वी अनुमान करो

कि जिससैं आकाश सिद्ध होय है ज्यो कहो कि जैसैं स्पर्श ज्यो है सो चक्षुसैं जाणणैं के अयोग्य होता हुया वाहिर के इन्द्रिय करिकैं जाणीं जाय ऐसी ज्यो जाति उस जाति वाला है यातैं गुण है तैसैं शब्दवी ऐसा है अर्थात् स्पर्श जैसा है यातैं गुण है ऐसैं अनुमान तैं तो शब्द ज्यो है सो गुण सिद्ध हुआ श्रोर पीछैं जैसैं संयोग ज्यो है सो गुण है यातैं द्रव्यमैं रहै है तैसैं शब्दवी गुण है यातैं द्रव्यमैं रहै है इस अनुमानसैं शब्द का द्रव्यमैं रहणां सिद्ध हुवा श्रोर पीछैं निर्णय किया तो ये शब्द पृथ्वी जल तेज वायु इनका गुण सिद्ध न हुवा श्रोर दिशा काल आत्मा मन इनका वी गुण सिद्ध न हुवा यातैं इस शब्द गुणका आधार आकाश सिद्ध हुवा तो हम कहैं हैं कि ऐसैं आकाश की सिद्धि विश्वनाथपञ्चानन भट्टाचार्यनैं अपणैं वणाये मुक्तावली नाम ग्रन्थमैं लिखी है सो ही तुमनैं मानी है परन्तु विचार करो कि स्पर्श के दृष्टान्तसैं शब्दकूँ गुण मानौं तो स्पर्श कूँ किसके दृष्टान्तसैं गुण मानैंगे ज्यो कहो कि रसके दृष्टान्तसैं स्पर्शकूँ गुण मानैंगे तो हम रसमैं ऐसैंहीं पूछैंगे अन्तमैं मूल दृष्टान्तकूँ गुण सिद्ध करणैंका सामर्थ्य होगा ही नहीं ज्यो मूल दृष्टान्त ज्यो है सो गुण सिद्ध न हुवा तो परम्परा दृष्टान्तो सैं शब्द ज्यो है सो गुण सिद्ध न हुवा ज्यो शब्द गुण न हुया तो उसके रहणैं के अर्थ आकाश का मानणाँ असङ्गत हुया ।

ज्यो कहो कि शब्द मैं गुणपणाँ सिद्ध न हुवा तो शब्द तो श्रोत्रसैं प्रत्यक्ष सिद्ध है यातैं शब्द का आश्रय आकाश सिद्ध होगा तो हम कहैं हैं कि तुम कर्णके छिद्र मैं वर्तमान आकाश कूँ श्रोत्र कहो हो श्रोर शब्दका आश्रय मानि करिकैं आकाश कूँ सिद्ध करो हो तो शब्द कूँ तो प्रत्यक्ष सिद्ध करणैं के अर्थ श्रोत्र रूप आकाश की अपेक्षा होगी श्रोर आकाशकूँ सिद्ध करणैं के अर्थ शब्दकी अपेक्षा होगी यातैं आकाश श्रोर शब्द दोनूं अन्योन्य सापेक्ष होणैं तैं इनमैं एक वी सिद्ध नहीं हो सकै ज्यो कहो कि शब्दकूँ तो मीमांसक द्रव्य मानैं हैं यातैं स्पर्शके दृष्टान्ततैं हम शब्दकूँ गुण सिद्ध करैं हैं काहेतैं कि हमारे मतमैं शब्द ज्यो है सो गुण है श्रोर स्पर्शकूँ गुण मानणैं मैं तो किसीकै वी विवाद नहीं यातैं स्पर्शकूँ गुणसिद्ध करणाँ आवश्यक नहीं तो हम कहैं हैं कि तुम ज्यो गुणमानौं हो सो व्यवहारसैं मानौं हो अथवा सङ्केतसैं मानौं हो ज्यो कहो कि व्यवहार मैं मानैं हैं तो ये कथन तो असङ्गत है काहेतैं कि व्यवहारमैं तो

सत्य भाषण धीरपणौ उदारपणौ दया इत्यादिकोंकूँ गुण मानैं हैं और मद्यका गन्ध वेश्या के कुचोंका स्पर्श चुम्बन समयमें उसके अधर का संयोग इत्यादिकोंकूँ गुण नहीं मानैं हैं क्यो कहो कि हम सङ्केतसैं गुण मानैं हैं तो तुम हीं कहो तुमारा सङ्केत श्रुति सिद्ध है अथवा नहीं ज्यो कहो कि श्रुति सिद्ध है तो वेदमैं कहीं भी रूपादि कूँ गुण नाम करिकैं कहे नहीं ज्यो कहो कि श्रुति सिद्ध नहीं है । अप्रामाणिक होवैं तैं शब्द मैं गुणपणाँ मानणाँ असङ्गत हुवा या शब्द का आश्रय आकाश स्वरूप द्रव्य मानणाँ असङ्गत है ।

और देखो कि लोक मैं भी ये पृथ्वी का शब्द है ये जलका शब्द ये वायुका शब्द है ये अग्नि का शब्द है ऐसैं व्यवहार है और ये आका का शब्द है ऐसा व्यवहार भी नहीं यातैं भी शब्द आकाश का गुण नह हो सकै जैसैं ये पृथ्वीका स्पर्श है ये जलका स्पर्श है ये तेज का स्पर्श वायुका स्पर्श है इस लोक व्यवहार सैं स्पर्श पृथिव्यादिक का गुण सिद् है यातैं आकाश का गुण सिद्ध नहीं हो सकै है और कहो कि तुम आकाश कूँ नित्य मानों हो सो नित्यपणौं कैसैं सिद्ध करो हो ज्यो कहो कि निरवयव है यातैं आकाश नित्य है जैसैं निरवयव है यातैं आत्मा नित है और घट नित्य नहीं है यातैं निरवयव भी नहीं है ऐसैं अनुमान सैं आकाश कूँ नित्य सिद्ध करैं हैं तो हम कहैं हैं कि आत्मा का तो सर्व कूँ अनुभव है यातैं आत्मा मैं तो निरवयव पणाँ जाणँ सकोगे यातैं नित्य पणौं सिद्ध हो सकैगा परन्तु आकाश का तो तुमारे मत मैं प्रत्यक्ष नहीं यातैं आकाश मैं निरवयव पणौं का ज्ञान होयही नहीं सकै तो कैसैं नि- त्य पणौं कैसैं सिद्ध होसकै ज्यो कहो कि आकाश का धर्म अवकाश है से सर्वत्र प्रतीत होय है कहीं प्रत्यक्ष प्रतीत होय है कहीं अनुमान सैं प्रतीत होय है सो सर्वत्र अवकाश की प्रतीति होवैं सैं आकाश मैं व्यापक पणौं सिद्ध होगा व्यापक पणौं सिद्ध होवैं सैं निरवयव पणौं सिद्ध होगा निरवयव पणौं सिद्ध होवैं सैं नित्यपणौं सिद्ध होगा तो हम कहैं हैं कि अवकाश की प्रतीति सर्वत्र नहीं है देखो सुषुप्ति अवस्था मैं अवकाश की प्रतीति नहीं है तो अवकाश की सर्वत्र प्रतीति नहीं होवैं सैं आकाश व्यापक सिद्ध नहीं होगा किन्तु परिछिन्न सिद्ध होगा परिछिन्न सि होवैं सैं सावयव सिद्धहोगा सावयव होवैं सैं अनित्य सिद्ध भया

होगा तो कार्य न तो अवयव समुदाय रूप सिद्ध हो सकै और नैं कारण-तैं विलक्षण सिद्ध होसकै और नैं कारण का परिणाम सिद्ध होसकै ये पहि-लैं कहिआये हैं तहाँ युक्ति बी कही ही है यातैं आकाश सिद्ध होय ही नहीं सकै ।

ज्यो कहो कि सुषुप्ति मैं तो ज्ञान नहीं है यातैं अवकाश की प्रतीति नहीं है तो ये कथन असङ्गत है काहेतैं कि सुषुप्ति मैं ज्ञान नहीं होय तो अज्ञान का अनुभव नहीं हो सकैगा अज्ञानका अनुभव नहीं होगा तो जाग करिकैं अज्ञान का स्मरण होय है सो नहीं हो सकैगा ज्यो कहो कि हम मैं दृष्टान्त कहा है तो तुम हीं दृष्टान्त हो ज्यो सुषुप्ति मैं ज्ञान नहीं होता तो तुम सुषुप्ति मैं अज्ञान कहते ही नहीं काहे तैं कि ज्यो सुषुप्ति मैं अज्ञान का अनुभव नहीं होय तो जागृत् अवस्था मैं अज्ञान का स्मरण होय नहीं ज्यो स्मरण नहीं होय तो सुषुप्ति मैं अज्ञान रहै है ये कथन बणैं हीं नहीं सकै और विवेक करिकैं देखो तो अवकाश तो दीखै ही नहीं ज्यो कहो कि हमकूं तो अवकाश प्रत्यक्ष दीखै है तो हम पूछैं हैं कि प्रकाश और अन्धकार के विना तुमनैं अवकाश का स्वरूप कहाँ देखा है यातैं आकाश का मानणाँ असङ्गत ही है ।

अब जैसैं आकाश सिद्ध न हुवा तैसैं काल और दिशा बी सिद्ध नहीं होंगे काहेतैं कि तुमनैं काल और दिशा इन कूं बी नित्य व्यापक और निरूप मानैं हैं तो जिस युक्ति तैं आकाश नित्य व्यापक सिद्ध न हुवा उस ही युक्ति तैं तैसैं हीं काल और दिशा बी सिद्ध नहीं हो सकैंगे देखो शिरोमणि भट्टाचार्य नैं बी पदार्थतत्व नाम ग्रन्थ मैं—

"दिक्कालौ नेश्वरादतिरिच्येते,,

ऐसैं लिखा है इस का अर्थ ये है कि दिशा और काल ये ईश्वर तैं जुदे नहीं हैं और ये बी लिखा है कि—

" शब्दनिमित्तकारणत्वेन कल्पितस्य ईश्वर-स्यैव शब्दसमवायिकारणत्वम्.,

इसका अर्थ ये है कि शब्द का निमित्त कारण मान्याँ ज्यो ईश्वर सो ही शब्द का समवायि कारण है इस मैं ये सिद्ध हुवा कि आकाश बी

ईश्वर तैं जुदा नहीं है इस मैं विशेष विचार देखणैं की इच्छा होय तो पण्डित रघुदेव की किई पदार्थतत्व की टीका है उस मैं देखो यातैं आकाश काल ओर दिशा इन का मानणाँ असङ्गत ही है।

अब कहो तुम आत्मा किसकूँ कहो हो ज्यो कहो कि हम आत्मा दोय प्रकार के मानैं हैं तहाँ एक तो परमात्मा है ओर दूसरा जीवात्मा है तहाँ परमात्मा तो एक ही है ओर जीवात्मा प्रति शरीर जुदा है ओर व्यापक है ओर नित्य है ओर परमात्मा भी व्यापक है ओर नित्य है परमात्मा मैं सङ्ख्या १ परिमाण २ पृथक्त्व ३ संयोग ४ विभाग ५ ज्ञान ६ इच्छा ७ यत्न ८ ये गुण रहैं हैं ओर जीव मैं आठ तो परमात्मा मैं गुण बताये ये रहैं हैं ओर सुख १ दुःख २ द्वेष ३ धर्म ४ अधर्म ५ भावना नाम संस्कार ६ ये छै गुण ऐसैं चतुर्दश गुण रहैं हैं ओर परमात्मा मैं ज्ञान इच्छा य नित्य हैं ओर जीव मैं ये गुण अनित्य हैं ओर परमात्मा कर्त्ता है ओ भोक्ता नहीं है ओर जीवात्मा कर्त्ता भी है ओर भोक्ता भी है तो हम पूछैं हैं कि ईश्वरकूँ तुम कौन प्रमाण तैं सिद्ध करो हो ज्यो कहो कि प्रत्यक्ष प्रमाण तैं सिद्ध करैं हैं तो हम पूछैं हैं कि बाह्य इन्द्रियों सैं ईश्वर का प्रत्यक्ष होय है अथवा मन तैं ज्यो कहो कि बाह्य इन्द्रियों तैं ईश्वर का प्रत्यक्ष होय है तो ये कथन असङ्गत है काहेतैं कि तुम बाह्य इन्द्रियों मैं सावयव द्रव्य का प्रत्यक्ष मानौं हो ईश्वर तो तुमारे मत मैं निरवयव द्रव्य है ज्यो कहो कि मन तैं ईश्वर का प्रत्यक्ष होय है तो ये भी कथन असङ्गत है काहे तैं कि ज्यो मन तैं ईश्वर का प्रत्यक्ष होय तो ईश्वर मैं गुणादिककी तरैं अनित्यपणाँ मानणाँ पड़ैगा तुमारे मत मैं सुख अनित्य है ओर मन तैं जाणयाँ जाय है ज्यो कहो कि अनुमान तैं ईश्वर कूँ सिद्ध करैं हैं तो तुमारे अनुमान ऐसा है कि जैसैं घट ज्यो है सो कार्य है यातैं कर्त्ता सैं पैदा हुवा है तैसैं पृथिव्यादिक भी कार्य हैं यातैं कर्त्तातैं पैदा भये हैं इस अनुमान तैं पृथिव्यादिक मैं कर्त्ता पैदा होणाँ सिद्ध करो हो तो ओरतो कर्त्ता पृथिव्यादिक का कोई बणै नहीं यातैं इस का कर्त्ता ईश्वर मानौं हो तो हम पूछैं हैं कि तुम कर्त्ता किसकूँ कहो हो ज्यो कहो कि जिसका यथार्थ ज्ञान का होय सो कर्त्ता तो हम पूछैं हैं कि जीव का ज्ञान तुम अनित्य मानौं हो है तब ज्ञान की तुम उत्पत्ति भी मानौं हो तो सो भी ज्ञान भी कार्य हो है

यो यत्न कार्य हुवा तो यत्न कर्त्ता जीवकूँ हीँ मानोंगे ज्यो जीव कर्त्ता हुवा तो जीवमैं कर्त्तापणाँ सिद्ध करणैं के अर्थ इस यत्नतैं जुदा और ही यत्न मानोंगे अथवा उस यत्न सैं हीँ जीवकूँ कर्त्ता सिद्ध करोगे ज्यो कहो कि और ही यत्न मानैंगे तो उस यत्नकूँ भी कार्य ही मानणाँ पड़ैगा तो अनवस्था होगी यातैं जीवकूँ कर्त्ता मानणाँ सिद्ध न हुवा ज्यो कहो कि उस ही यत्नसैं जीवकूँ कर्त्ता सिद्ध करैंगे तो वो यत्न तो कार्य है और कर्त्ता कार्यतैं पूर्व सिद्ध होय तब कार्यकूँ पैदा करै है ये तुमारा नियम है और यत्न बिना कर्त्ता हो सकै नहीँ यातैं जीव कर्त्ता सिद्ध न हुवा ज्यो जीव कर्त्ता न हुवा तो ईश्वर मैं कर्त्तापणाँ सिद्ध करणैं का दृष्टान्त सिद्ध न हुवा दृष्टान्त सिद्ध नहीँ होणैंतैं ईश्वरकूँ कर्त्ता सिद्ध करणैं का अनुमान सिद्ध न हुवा ।

और कहो कि तुम ईश्वर मैं यत्न मानि करिकैं कर्त्ता पणाँ मानौं हो तो यत्न एक मानौं हो अथवा नाना यत्न मानौं हो ज्यो कहो कि एक ही यत्न मानैं हैं तो सृष्टि स्थिति प्रलय इनमैंतैं एक ही निरन्तर सिद्ध होणाँ चाहिये ज्यो कहो कि नाना यत्न मानैं हैं तो सृष्टियत्न स्थितियत्न प्रलय यत्न ये नित्य मानणैं पड़ैंगे तो ये परस्पर विरुद्ध होणैंतैं सृष्टि स्थिति प्रलय इनमैं तैं एक भी सिद्ध नहीँ हो सकैगा ज्यो कहो कि यत्न तो एक ही मानैं हैं परन्तु जिस क्रमतैं सृष्टि स्थिति प्रलय होंयें हैं उनके अनुकूल उस यत्न का स्वरूप मानैंगे तो हम पूछैं हैं कि तुम सृष्टि स्थिति प्रलय इनकूँ देखि करिकैं ईश्वर मैं उनके अनुकूल यत्न कल्पना करो हो अथवा ईश्वर मैं वैसा यत्न है यातैं उनके अनुकूल सृष्टि स्थिति प्रलय मानौं हो ज्यो कहो कि सृष्टि स्थिति प्रलय इनकूँ देखि करिकैं इनके अनुकूल यत्न कल्पना करैं हैं तो हम कहैं हैं कि परमेश्वरके अचिन्त्य अलौकिक ज्ञानतैं जिस प्रकारतैं सृष्टि स्थिति प्रलय इनकूँ विषय किये हैं तैसैं हीँ सृष्टि स्थिति प्रलय होंयें हैं ऐसैं हीँ कल्पना करो तो कहा हानि है ज्यो कहो कि हानि नहीँ तो तुम भी तो नहीँ कि जातैं ऐसैं कल्पना करैं तो हम कहैं हैं कि देखो ईश्वर मैं यत्न भी नहीँ मानणाँ पड़ा और सृष्टि स्थिति प्रलय भी सिद्ध हो गये लाघव भी हुवा और कार्य भी हो गया और ईश्वरकूँ कर्त्ता भी नहीँ मानणाँ पड़ा और ईश्वर बिना कार्य हुवे भी नहीँ इसके सिवाय अर्थात् इसमैं अधिक तुम कौनसा गुण चाहो हो सो कहो ज्यो कहोकि हम कल्पना मैं गुण मो

" तस्मान्मायी सृजते विश्वमेतत् ,,

इसका अर्थ ये है कि माया करिकैं युक्त परमात्मा इस विश्वकूं पैदा करै है तो इस श्रुति का ये तात्पर्य हुवा कि परमात्माके निज रूप मैं कर्त्तापणाँ नहीं है मायारूप उपाधि की दृष्टिसैं परमात्मा मैं कर्त्तापन है और तैत्तिरीय उपनिषद् मैं लिखा है कि—

" सोऽकामयत बहु स्यां प्रजायेय ,,

इस का अर्थ ये है कि वो इच्छा करता हुवा बहुत होवूँ पैदा होंऊँ तो इस श्रुति का ये तात्पर्य हुवा कि परमात्मा हीं बहुत हुवा है जगत् रूप करिकैं और मुण्डकोपनिषद् मैं लिखा है कि—

तदेतत्सत्यं यथा सुदीप्तात् पावकाद्विस्फुलिङ्गाः सहस्रशः प्रभवन्ते सरूपास्तथाऽक्षराद्विविधाः सौम्य भावाः प्रजायन्ते तत्र चैवाऽपियन्ति ,,

इसका अर्थ ये है कि सो ये सत्य है जैसैं प्रज्वलित अग्नि तैं विस्फुलिङ्ग अर्थात् तणँगारा हजारों पैदा होंय हैं सदृश तैसैं परमात्मा तैं नाना प्रकार के हे सौम्य भाव अर्थात् पदार्थ पैदा होंय हैं उस ही में प्रवेश कर जायँ हैं तो इस श्रुति का ये तात्पर्य हुवा कि जैसैं अग्नि तैं उत्पन्न अग्निकण जे हैं ते अग्नि हीं हैं तैसैं परमात्मा तैं उत्पन्न ज्यो जगत् सो परमात्माहीं है और उन हीं श्रुतियों में ऐसैं लिखा है कि यो परमात्मा ही जीव हो करिकैं देहमैं प्रवेश किया है जीव शब्द का अर्थ प्राणोंका धारणैं वाला होता है यातैं शरीर में प्रवेश किया परमात्मा जीव कहावता है अब ज्यो श्रुतिके कथन तैं परमात्मा में ज्ञान इच्छा याग [illegible] तो श्रुतिसे हीं जीव और जगत् इनकूं परमात्माहीं मानों तो सारे विरोध मिट जावै और परमानन्द में पूर्ण हो जाओ परन्तु जिनके भेदके संस्कार दृढ हैं तिनकै ऐसैं माननाँ कठिन है और ज्यो कदाचित् कोई प्रकार मानि भी लेवै तो ऐसैं जाननाँ अत्यन्त हीं कठिन है।

अब कहो तुम भी श्रुति के मतसैं परमात्मा में ज्ञान इच्छा प्रयत्न मानौ हो तो ठीक है परन्तु इनकूं नित्य कैसैं कहो हो क्योंकि

जीव के ज्ञान इच्छा यत्न अनित्य हैं यातैं परमेश्वर मैं जीव की अपेक्षा ये ही विलक्षणपणाँ है कि उस मैं ये गुण नित्य हैं तो हम कहैं हैं कि तुम ईश्वर बणाँवो हो अथवा ईश्वर जैसा है तैसा वर्णन करो हो। ज्यो कहो के हम तो ईश्वर बणावैं नहीं किन्तु ईश्वर है तैसा वर्णन करैं हैं तो हम कहैं हैं कि तुम ही विचार करो एक मैं बहुत हो जायूँ ये इच्छा ईश्वर मैं प्रलय समय मैं कैसैं बणैं सकै ज्यो प्रलय समय मैं ये इच्छा परमेश्वर मैं है तो प्रलय होवै ई नहीं काहेतैं कि श्रुति परमेश्वरकूँ सत्यसङ्कल्प वर्णन करै है यातैं प्रलय काल मैं सृष्टि हो जाय ज्यो कहो कि प्रलयकाल मैं सारे पदार्थों के अभाव रहैं हैं यातैं अभावों की सृष्टिमानि लेवैं गे तो हम कहैं हैं कि प्रलय काल मैं तो अभाव और भाव तुमारे मानैं दोनूँ ही रहैं नहीं काहेतैं कि सृष्टि का पूर्वकाल और सृष्टि का उत्तर काल इनका नाम प्रलय है तो सृष्टि के आदि की ये श्रुति है कि—

"सदेव सौम्येदमग्र आसीत्,,

इसका अर्थ ये है कि पूर्व काल मैं हे सौम्य ये जगत् सत् नाम परमात्मा हीं हुया तो इस श्रुति मैं एव शब्द है इसका अर्थ भाषा के माँहैं ही ऐसा है तो इस शब्द का ये स्वभाव है कि ये शब्द जिस शब्द के अगाडी होय उस शब्द का ज्यो अर्थ उससैं जुदे पदार्थों के निषेधकूँ करै है जैसैं यहाँ घट ही है इस वाक्य मैं ही शब्द घट शब्द के अगाडी है तो घट पदार्थसैं जुदे पदार्थों के निषेधकूँ कहै है तैसैं सृष्टि के आदि की श्रुति मैं ये शब्द अर्थात् ही इस अर्थ का कहणें वाला एव शब्द सत् शब्द के अगाडी है तो सत् तैं जुदे सर्व पदार्थों के निषेधकूँ कहैगा तो प्रलय मैं अभावों की सृष्टि कैसैं हो सकै और—

"सर्वे आत्मानः समर्पिता निरञ्जनः परमं साम्यमुपैति,,

ये प्रलयकाल की श्रुति है इसका अर्थ ये है कि सारे आत्मा अपत किये परमात्मा का परम साम्य अर्थात् परमात्मा का अभेद प्राप्त होय है ज्यो कहो कि साम्य शब्द तो सदृश पणेकूँ कहै है आप इस का अभेद अर्थ कैसैं करो हो तो हम कहैं हैं कि हम तो साम्य शब्द का अर्थ अभेद

नहीं कहै किन्तु परमसाम्य शब्द का अर्थ अभेद कहै हैं उस सैं भिन्न जो उसके बहुत धर्मों करिकैं युक्त होय सो तो सम और ज्यो वो ही होय से परम सम ज्यो कहो कि ये अर्थ आप कोन अनुभवतैं करो हो तो हम कहैं हैं कि सृष्टि के आदि की श्रुति के अर्थ के अनुभव तैं करैं हैं ज्यो ऐसा अर्थ न करैं तो सृष्टि के आदि की श्रुति और प्रलय की श्रुति इन दोनूं श्रुतियों की एक वाक्यता अर्थात् एकार्थकता होय नहीं ज्यो कहो कि ये दोनूं श्रुति तो भिन्न समय की हैं यातैं एकार्थकता करणों निष्फल है तो हम कहैं हैं कि सृष्टि का आदि और सृष्टि का अन्त सृष्टि के न होणैं मैं बराबर है ज्यो कहो कि आदि और अन्त बराबर कैसैं हो सकै तो हम कहैं हैं कि आदि अन्त व्यवहार तो आपेक्षिक है सृष्टि के न होणैं के काल तो दोनूं हीं हैं ज्यो कहो कि आदि अन्त व्यवहार आपेक्षिक है तो आदि अन्त मैं अन्त आदि व्यवहार बी होणाँ चाहिये तो हम कहैं हैं कि देखो सृष्टि का पूर्व काल पूर्व सृष्टि की अपेक्षा प्रलयकाल है और इस सृष्टि की अपेक्षा सृष्टि का आदि काल है ऐसैं हीं भविष्यत् प्रलय मैं समझो ज्यो कहो कि इस सृष्टि के पूर्व बी सृष्टि रही इस मैं कहा प्रमाण तो हम कहैं हैं कि—

"धाता यथापूर्वमकल्पयत्,,

ये श्रुति प्रमाण है इस का अर्थ ये है कि परमेश्वर नैं जैसे पहिलैं जगत् रचा तैसे ही जगत् रचदिया ज्यो कहो कि भविष्यत् प्रलय के पीछैं बी सृष्टि होगी इस मैं कहा प्रमाण तो हम कहैं हैं कि भूत प्रलय के पीछैं ये सृष्टि भई तैसे ही सृष्टि भविष्यत् प्रलय के पीछैं बी होगी। अनुभव ही प्रमाण है अब विचार करि कै देखो कि प्रलय काल मैं परमात्मा मैं इच्छा सिद्ध न भई तो ईश्वर की इच्छा नित्य कैसैं मानी जाय ईश्वर की इच्छा नित्य सिद्ध न भई तैसे ईश्वर का यत्न बी नित्य सिद्ध नहीं होगा ज्यो कहो कि ईश्वर का ज्ञान बी इच्छा और यत्न की नांई अनित्य मानणों पड़ैगा तो हम कहैं हैं कि परमात्मा का ज्ञान अनित्य नहीं है किन्तु नित्य है ज्यो कहो कि न्यायशास्त्र का मत ये है कि विषय के नहीं होणैं मैं ज्ञान का ज्ञानपणों रहै नहीं तो प्रलय काल मैं कोई भी भाव अभाव नहीं होणैं मैं ईश्वर का ज्ञान नित्य कैसैं मानणों जाय तो हम कहैं हैं कि ईश्वर का ज्ञान प्रलय काल मैं ईश्वरकूं हीं विषय करै यातैं विषय का न होणों न हुवा यातैं ईश्वर का ज्ञान नित्य है ज्यो कहो

कि परमात्मा का ज्ञान परमात्माकूँ विषय करै है यामैं प्रमाण कहा तो हम कहैं हैं कि गीता के दशम अध्याय मैं अर्जुन नैं कही है कि—

"स्वयमेवात्मनात्मानं वेत्थ त्वं पुरुषोत्तम,,

इस का अर्थ ये है कि हे पुरुषोत्तम आप ही आप सैं आपकूँ जानैं हो। ज्यो कहो कि इस कथन तैं तो परमात्मा ज्ञानरूप सिद्ध होय है काहेतैं कि इस कथन मैं जाणणाँ और जाणणैंवाला और जाण्याँ गया ये तीनूँ एक मालुम होय हैं तो ईश्वर मैं ज्ञान सिद्ध न हुवा। किन्तु ईश्वर ज्ञानरूप सिद्ध हुवा तो न्याय शास्त्र मैं ईश्वरकूँ नित्य ज्ञान का आश्रय कहा है सो कैसें हो सकै इसका उत्तर कहा तो हम कहैं हैं कि इसका उत्तर तो न्यायशास्त्र के आचार्योंकूँ पूछो उननैं हीं ईश्वरकूँ ज्ञान का आश्रय कहा है देखो उननैं इतना भी विचार न किया कि ईश्वरकूँ ज्ञान का आश्रय मानैंगे तो ईश्वर जड़ सिद्ध होगा काहेतैं कि उननैं ज्ञानकूँ गुण मान्याँ है और ईश्वरकूँ द्रव्य मान्याँ है तो ईश्वर चैतन्य तैं जुदा पदार्थ होणैं तैं जड ही सिद्ध होय जैसें उन के मत मैं ज्ञान तैं जुदा पदार्थ होणैं तैं जीव ज्यो है सो जड है याहीतैं मुक्तावस्था मैं जीव की जडरूप करिकैं स्थिति न्यायशास्त्र मैं मानी है ऐसें परमात्मा ज्ञान रूप तो सिद्ध होगया।

अब हम ये पूछैं हैं कि तुम परमात्मा मैं सुख नहीं मानौं हो सो कौन प्रमाण तैं नहीं मानौं हो ज्यो कहो कि—

"असुखम्,,

ये श्रुति है इस का अर्थ ये है कि परमात्मा मैं सुख नहीं है तो हम कहैं हैं कि—

"प्रज्ञानमानन्दं ब्रह्म,,

ये बृहदारण्यक की श्रुति है इस का अर्थ ये है कि ब्रह्म जो परमात्मा सो ज्ञान रूप है और आनन्द रूप है तो परमात्मा मैं आनन्द सिद्ध हो गया ज्यो कहो कि—

"असुखम्,,

इस श्रुत की कहा गति होगी तो हम कहैं हैं कि इस श्रुति की एक गति तो ये है कि सुख नाम विषय सुख का है सो असुख शब्द करिकैं

नहीं कहैं किन्तु परमसाम्य शब्द का अर्थ अभेद कहैं हैं उस सैं भिन्न को उसके बहुत धर्मों करिकैं युक्त होय सो तो सम और ज्यो वो ही होय है परम सम ज्यो कहो कि ये अर्थ आप कौन अनुभवतैं करो हो तो हम क हैं कि सृष्टि के आदि की श्रुति के अर्थ के अनुभव तैं करैं हैं ज्यो ऐसा अर्थ करैं तो सृष्टि के आदि की श्रुति और प्रलय की श्रुति इन दोनूं श्रुति की एक वाक्यता अर्थात् एकार्थकता होय नहीं ज्यो कहो कि ये दोनूं श्रुति तो भिन्न समय की हैं यातैं एकार्थकता करणां निष्फल है तो हम कहैं कि सृष्टि का आदि और सृष्टि का अन्त सृष्टि के न होणें मैं बरावर हैं ज्यो कहो कि आदि और अन्त बरावर कैसैं हो सकै तो हम कहैं हैं कि आदि अन्त व्यवहार तो आपेक्षिक है सृष्टि के न होणें के काल तो दोनूं हीं हैं ज्यो कहो कि आदि अन्त व्यवहार आपेक्षिक है तो आदि अन्त मैं अन्त आदि व्यवहार भी होणां चाहिये तो हम कहैं हैं कि देखो सृष्टि का पूर्व काल पूर्व सृष्टि की आपेक्षा प्रलयकाल है और इस सृष्टि की अपेक्षा सृष्टि का आदि काल है ऐसे हीं भविष्यत् प्रलय मैं समुझो ज्यो कहो कि इस सृष्टि के पूर्व भी सृष्टि रही इस मैं कहा प्रमाण तो हम कहैं हैं कि-

"धाता यथापूर्वमकल्पयत्,,

कि परमात्मा का ज्ञान परमात्माकूँ विषय करै है यामैं प्रमाण कहा तो हम कहैं हैं कि गीता के दशम अध्याय मैं अर्जुन नैं कही है कि–

"स्वयमेवात्मनात्मानं वेत्थ त्वं पुरुषोत्तम,,

इस का अर्थ ये है कि हे पुरुषोत्तम आप ही आप सैं आपकूँ जानौं हो। ज्यो कहो कि इस कथन तैं तो परमात्मा ज्ञानरूप सिद्ध होय है काहेतैं कि इस कथन मैं जाणणाँ और जाणणैंवाला और जाणयाँ गया तीनूँ एक मालुम होय हैं तो ईश्वर मैं ज्ञान सिद्ध न हुवा किन्तु ईश्वर ज्ञानरूप सिद्ध हुवा तो न्याय शास्त्र मैं ईश्वरकूँ नित्य ज्ञान का आश्रय कहा है सो कैसें हो सकै इसका उत्तर कहा तो हम कहैं हैं कि इसका उत्तर तो न्यायशास्त्र के आचार्योंकूँ पूछो उननैं ही ईश्वरकूँ ज्ञान का आश्रय कहा है देखो उननैं इतना बी विचार न किया कि ईश्वरकूँ ज्ञान का आश्रय मानैंगे तो ईश्वर जड़ सिद्ध होगा काहेतैं कि उननैं ज्ञानगुण मान्याँ है और ईश्वरकूँ द्रव्य मान्याँ है तो ईश्वर चैतन्य तैं जुदा पदार्थ होणैं तैं जड ही सिद्ध होय जैसें उन के मत मैं ज्ञान तैं जुदा पदार्थ होणैं तैं जीव ज्यो है सो जड है याहीतैं मुक्तावस्था मैं जीव की जड़रूप करिकैं स्थिति न्यायशास्त्र मैं मानी है ऐसें परमात्मा ज्ञान रूप तो सिद्ध होगया।

अब हम ये पूछैं हैं कि तुम परमात्मा मैं सुख नहीं मानौं हो सो कौन प्रमाण तैं नहीं मानौं हो ज्यो कहो कि–

"असुखम्,,

ये श्रुति है इस का अर्थ ये है कि परमात्मा मैं सुख नहीं है तो हम कहैं हैं कि–

"प्रज्ञानमानन्दं ब्रह्म,,

ये बृहदारण्यक की श्रुति है इस का अर्थ ये है कि ब्रह्म जो परमात्मा सो ज्ञान रूप है और आनन्द रूप है तो परमात्मा मैं आनन्द सिद्ध हो गया ज्यो कहो कि–

"असुखम्,,

इस श्रुत की कहा गति होगी तो हम कहैं हैं कि इस श्रुति की एक गति तो ये है कि सुख नाम विषय सुख का है तो असुख शब्द करिकैं

श्रुति परमात्मामैं विषय सुख का निषेध करै है ज्यो कहो कि सुख ये दोनूं शब्द तो पर्याय हैं अर्थात् एक ही अर्थ के कहणैं वाले हैं। इस श्रुति की दूसरी गति ये है कि परमात्मामैं सुखके आधारपणांका निषेध करै है अर्थात् परामात्माकूं सुखरूप कहैहै ऐसैं परमात्मा सच्चिदानन्द रूप सिद्ध हुवा।

ज्यो कहो कि परमात्मा सच्चिदानन्दरूप हुवा तो जीव सच्चिदानन्द कैसैं होय ये तो अनित्यज्ञानवाला है और नानाप्रकार के दुःखों भोगणैवाला है तो हम पूछैं हैं कि तुम जीव का स्वरूप जड मानों तो तुमनैं जीव का जडपणां देखा है अथवा नहीं ज्यो कहो कि जीव का जडपणां हमनैं देखा है तो हम पूछैं हैं कि तुमनैं जीव का जडपणा किस समय मैं देखा है ज्यो कहो कि सुषुप्तिमैं देखा है तो हम कहैं कि सुषुप्ति मैं ज्ञान सिद्ध होगया काहेतैं कि ज्यो सुषुप्तिमैं ज्ञान न होय तो जडपणांकूं कैसैं जाणैंगे ज्यो कहो कि नहीं देखा है तो सुषुप्ति जीवकूं जड कहणां असङ्गत हुवा काहेतैं कि जागणैं के पीछैं तुमकूं ऐसा ज्ञान होय है कि मैं जड होकर सूता रहा सो ये ज्ञान अनुभव है अथवा स्मरण है सो कहो ज्यो कहो कि अनुभव है तो ये कथन असङ्गत है काहेतैं कि अनुभव तो विषय मोजूद होय तब होय है सो जीव का जडपणां जाग्रत अवस्थामैं मोजूद नहीं यातैं मैं जड होकर सूता था ये ज्ञान अनुभव होणैं नहीं ज्यो कहो कि स्मरण है तो हम पूछैं हैं कि स्मरण अनुभव होय जिसका ही होय है अथवा जिसका अनुभव न होय उसका भी स्मरण होय है ज्यो कहो कि जिसका अनुभव न होय उसका भी स्मरण होय है तो हम कहैं हैं कि तुमकूं सारे जगत् के पदार्थों का स्मरण होणां चाहिये काहेतैं कि तुमकूं सारे जगत् के पदार्थों का अनुभव नहीं है ज्यो कहो कि अनुभव होय उसका ही स्मरण होय है तो तुमारा जडपणां सुषुप्ति मैं नहीं दीखा है ये कथन असङ्गत हुवा काहेतैं कि ज्यो सुषुप्ति मैं जडपणां का अनुभव न होय तो जाग्रत् अवस्था मैं जडपणां का स्मरण कैसैं होय यातैं सुषुप्तिसमय मैं तुमारे कथन से ही जीव मैं ज्ञान सिद्ध होगया।

अब कहो तुम [illegible] [illegible] अनित्य मानों हो सो [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] हो तो हम पूछैं हैं कि तुम [illegible] [illegible] [illegible]

मानों हो ज्यो कहो कि ज्ञानका समवायि कारण तो जीव है और असमवायि कारण जीवका और मनका संयोग है और ईश्वरकूँ आदि लेकैं ज्ञान के निमित्त कारण हैं तो हम कहैं हैं कि सुषुप्ति मैं ज्ञान होणाँ चाहिये काहेतैं कि सुषुप्ति मैं सारे कारण मोजूद हैं ज्यो कहो कि और कारण तो सर्व मोजूद हैं परन्तु चर्म का और मनका संयोग ज्ञानसामान्य का अर्थात् सर्वज्ञानोंका कारण है सो सुषुप्ति मैं वणाँ सकै नहीं काहेतैं कि उस समय मैं मन पुरीतति नाम ज्यो नाडी तामैं प्रवेश कर जाय है उस नाडीमैं चर्म नहीं है तो हम पूछैं हैं कि जब मन पुरीतति मैं प्रवेश कर जाय है तब ज्ञान होवै नहीं तो अज्ञान रहैगा तो अज्ञान का प्रत्यक्ष तो तुम सुषुप्ति मैं मानोंगे नहीं काहेतैं कि वाह्य प्रत्यक्ष मैं तुम इन्द्रिय और मन इन के संयोगकूँ कारण मानों हो और मानस प्रत्यक्ष मैं आत्मा और मन इनका संयोग और चर्म और मन इन का संयोग ऐसैं दोय संयोगोंकूँ कारण मानौं हो तो अज्ञान वाह्य पदार्थ तो है नहीं यातैं इन्द्रिय और मन इनके संयोग की अपेक्षा तो अज्ञान के प्रत्यक्ष मैं है नहीं तो अज्ञान के प्रत्यक्ष मैं मानसप्रत्यक्षकी ज्यो सामग्री उसकी अपेक्षा होगी सो वणाँ सकै नहीं काहेतैं कि यद्यपि पुरीतति मैं मन प्रवेश कर गया तब आत्मा का और मनका संयोग तो है परन्तु चर्म का और मन का संयोग नहीं है काहेतैं कि तुम पुरीतति मैं चर्म नहीं मानौं हो तो कहो तुम सुषुप्ति मैं अज्ञान कैसैं सिद्ध करो हो ज्यो कहो कि प्रत्यक्ष सामग्री नहीं है तो सुषुप्ति मैं अनुमान तैं अज्ञान सिद्ध करैंगे तो हम पूछैं हैं तुम यो अनुमान कहो परन्तु दृष्टान्त ऐसा कहो कि ज्यो तुमारे और हमारे दोनूंकै सम्मत होय अर्थात् जिस दृष्टान्तकूँ तुम भी मानों और हम भी मानैं ज्यो कहो कि जैसैं मूर्छा मैं द्वैत की प्रतीति नहीं है यातैं मूर्छामैं अज्ञान है तैसैं सुषुप्ति मैं भी द्वैतकी प्रतीति नहीं है यातैं अज्ञान है इस अनुमान तैं सुषुप्ति मैं अज्ञान सिद्ध होगया तो हम पूछैं हैं कि तुम मूर्छा मैं ज्यो अज्ञान है उसका भी प्रत्यक्ष तो मानोंगे नहीं यातैं मूर्छा मैं अज्ञानकूँ किसके दृष्टान्त तैं सिद्ध करोगे ज्यो कहो कि सुषुप्ति के दृष्टान्त तैं सिद्ध करैंगे तो हम पूछैं हैं कि तुमारी सुषुप्तिकूँ दृष्टान्त करोगे अथवा अन्यकी सुषुप्तिकूँ दृष्टान्त करोगे ज्यो कहोकि हमारी सुषुप्ति मैं तो विवाद है यातैं अन्य की सुषुप्तिकूँ दृष्टान्त करैंगे तो हम कहैं कि

तुमारा अनुभव विलक्षण है कि अपणीं सुषुप्तिकूँ तो जाणैं नहीं और अन्य की सुषुप्तिकूँ जाणैं है ज्यो कहो कि अन्य की सुषुप्ति का प्रत्यक्ष अनुभव तो है नहीं यातैं ऐसा अनुमान करैंगे कि जैसैं चेष्टा करिकैं रहित हूँ यातैं मैं सुषुप्तिवाला हूँ तैसैं अन्य पुरुष भी चेष्टा करिकैं रहित है यातैं सुषुप्तिवाला है ऐसे अनुमान तैं अन्य पुरुष मैं सुषुप्तिकूँ सिद्ध करैंगे तो हम कहैं हैं कि तुमारी सुषुप्ति का तुम अनुभव मानौं ज्यो सुषुप्ति का तुम अनुभव नहीं मानौंगे तो इसके दृष्टान्त तैं अन्य की सुषुप्तिकूँ कैसैं सिद्ध करोगे यातैं अपणीं सुषुप्ति मैं अनुभव मानणाँ हीं पड़ैगा ज्यो सुषुप्तिमैं अनुभव मान्याँ तो उसकूँ नित्य भी मानणाँ हीं पड़ैगा काहेतैं कि तुमनैं ज्यो ज्ञान की उत्पत्ति का कारण माना है सो सुषुप्ति मैं नहीं है अर्थात् चर्म का और मनका संयोग सुषुप्ति मैं नहीं है अब ज्यो सुषुप्तिका अनुभव नित्य सिद्ध हुया तो जिसकूँ जीव मान्याँ सो परमात्मा हीं सिद्ध हुया काहेतैं कि परमात्मा पहिलें नित्यज्ञान रूप सिद्ध होगया है ।

ज्यो कहो कि जीव नित्य ज्ञानरूप हुया तो भी परमात्मा तैं तो भिन्न हीं है ऐसैं मानैंगे तो हम पूछैं हैं कि तुम भेद कितनैं प्रकार का मानों हो ज्यो कहो कि भेद हम तीन प्रकार के मानैं हैं तिनमैं एक तो स्वगत भेद है जैसैं वृक्ष मैं पत्र पुष्पादिक के कमती ज्यादा होणें सैं भेद मालुम होय है और दूसरा सजातीय भेद है सो एक वृक्ष मैं दूसरे वृक्ष का भेद है और तीसरा विजातीय भेद है सो वृक्ष मैं पाषाणादिक का भेद है सो जीव सावयव नहीं यातैं तो जीवमैं स्वगत भेद बणैं सकै नहीं और जीव परमात्मा मैं विजातीय नहीं यातैं जीव मैं विजातीय भेद नहीं है किन्तु सजातीय भेद है सो हम कहैं हैं कि ये कथन तुमारा असंगत है काहेतैं कि किञ्चित् विलक्षणता विना भेद हो सकै नहीं ज्यो किञ्चित् विलक्षणता विना भी भेद होय तो आपका भेद आपमैं भी रहणाँ चाहिये यातैं जीव परमात्मा हीं है ।

ज्यो कहो कि जीव मिथ्याज्ञान रूप है सो भी अज्ञानका कार्य है ये ही जीव मैं परमात्मा मैं विलक्षणता है सो हम पूछैं हैं कि तुम अज्ञान किसकूँ कहो हो ज्यो कहो कि गुणातीत मांही भी मैं जब मन आदि जावै है तब आत्मा का और मनका ज्यो संयोग होय है उसमैं ज्यो ज्ञान पैदा होय है सो अज्ञान रूप है सो हम कहैं हैं कि आत्मा का और मन

संयोग तो वणैंहीं नहीं काहेतैं कि आत्मा और मन इन दोनूं द्रव्यौंकूं तुम निरवयव मानों हो और संयोगकूं तुम अव्याप्यवृत्ति मानों हो अर्थात् संयोग का ये स्वभाव है कि ये जहाँ होवै उसके एक देशमैं तो आप रहै है और उस ही के अन्य देशमैं संयोग का अभाव रहै है जैसैं वृक्ष मैं वानर का संयोग है तो शाखा देशमैं है और मूल देशमैं नहीं है अब ज्यो आत्मा और मन इनका संयोग मानोंगे तो संयोग अव्याप्यवृत्ति नहीं हो सकैगा काहेतैं तुमारे मतमैं आत्मा और मन इनकूं निरवयव मानैं हैं यातैं इनमैं देश वणैं सकै नहीं अब ज्यो आत्मा का और मनका संयोग नहीं होसका तो मनका मानणांवी असङ्गत हुया काहेतैं तुमनैंमनके संयोग तैं आत्मा मैं ज्ञानकी उत्पत्ति मानी है सो मनका संयोग आत्मा मैं वणैं सकै नहीं यातैं मनका मानाणां व्यर्थ है ।

ज्यो कहोकि इस समयमैं कितनैं हीं मनुष्य ऐसैं कहैं हैं कि संहिता ही वेद है सो संहिता मैं कहीं भी जीव और परमात्मा का अभेद वर्णन है नहीं यातैं इनका अभेद मानणां असङ्गत है तो हम कहैं हैं कि वाजसनेय संहिता मैं पुरुष सूक्त है जिसका पाठ परमात्माके नैवेद्य अर्पण करणैं के समय मैं सकल ब्राह्मण करैं हैं उसमैं ये मंत्र है कि—

" पुरुष एवेदं सर्वं यद्भूतं यच्च भाव्यम् उता-
मृतत्वस्येशानो यदन्नेनातिरोहति ,,

इसका अर्थ ये है कि ये ज्यो दीखता है सो और ज्यो होगया सो और ज्यो होगा सो सर्व पुरुष ही अर्थात् परमात्मा हीं है ज्यो अन्न करिकैं अर्थात् अन्नका विकार ज्यो शरीर ता करिकैं ढका है सो अमृतत्वका अर्थात् मोक्षका स्वामी है तो इस श्रुतिका तात्पर्य ये हुया कि भूत भविष्यत् वर्त्तमान ज्यो सर्व है सो परमात्मा हीं है मोक्षका स्वामी यो शरीर में ढका है अर्थात् शरीर के होणैं तैं अपणैं निज सच्चिदानन्दरूप करिकैं नहीं दीखै है तो ये सिद्ध हुया कि संहितावों मैं भी अभेद प्रतिपादन है ऐसे अर्थ के प्रतिपादक मन्त्र संहितावों मैं बहुत हैं हमनैं यहां ग्रन्थके विस्तारभयतैं नहीं लिखे हैं यातैं ज्यो ये कहै है कि संहिता में अभेद वर्णन नहीं है यो मूर्ख है और ज्यो ये कहै है कि उपनिषद् वेद नहीं हैं यो भी मूर्ख है काहेतैं कि उपनिषदोंकूं वेदान्त नाम करिकैं सकल शिष्ट व्यवहार करते चले आये हैं

वेदान्त शब्द का वेद का अन्त भाग ये अर्थ है यातैं उपनिषद् स वेदही हैं ।

ज्यो कहो कि सुषुप्ति मैं ज्यो आपमैं ज्ञान नित्य सिद्ध किया उसक वर्णन न्यायशास्त्र मैं नहीं है इसका कारण कहा अपि तो सारे सर्वज्ञ तो हम कहैंहैं कि न्याय शास्त्र मैं उस ज्ञानकूँ अनुव्यवसाय नाम ज्ञा कहैंहैं देखो अनुव्यवसाय ज्ञानकूँ स्वप्रकाश * कहा है ओर हम वी सुषुप्ति

---

* ज्यो कहो कि न्याय मतवाले तो ज्ञानकूँ स्वप्रकाश मानैं नहं जब घटादिक का प्रकाश घटादिक के ज्ञान तैं होय है उस काल मैं घटा दिक का प्रकाश भयें वी घटादिक का ज्ञान ओर इसका आश्रय आत्म इन दोनूँ का प्रकाश होवे नहीं ओर जब अनुव्यवसाय ज्ञान होय है त घटादि विषय सहित ओर आत्म सहित घटादि ज्ञान का प्रकाश होवे है परन्तु अनुव्यवसाय का प्रकाश होवे नहीं ओर जब अनुव्यवसाय गोचर अनुव्यवसाय होय है तब प्रथम अनुव्यवसाय का प्रकाश होवे है ओर द्वितीय अनुव्यवसाय अप्रकाशित ही रहे है न्याय मत मैं घट का प्रकाश हो करिकैं "अयं घटः" ये व्यवहार होय है घट व्यवहार मैं घट ज्ञान के प्रकाश की अपेक्षा नहीं ओर जब घट ज्ञान का व्यवहार इष्ट होय त अनुव्यवसाय सें घट ज्ञान का प्रकाश हो करिकैं घट ज्ञान का व्यवहार होय है ओर अनुव्यवसाय के प्रकाश की अपेक्षा नहीं जो ज्ञानान्तर प्रका शित ज्ञान सें विषय का प्रकाश होवे तो न्याय मत मैं अनवस्था दो होवे यातैं अप्रकाशित ज्ञान सें ही विषय का प्रकाश होवे है ऐसें न्या मत मैं ज्ञान स्वप्रकाश नहीं है—

सो हम कहैं हैं कि न्याय की ये प्रक्रिया है कि जब घटादिक क प्रत्यक्ष होय है तिस तैं पूर्व घट ओर घटत्व एतदुभयविषयक निर्विकल्प ज्ञान होय है तदनन्तर "अयं घटः" इत्याकारकप्रतिकल्पक ज्ञान हो है निर्विकल्पक ज्ञान का प्रत्यक्ष होवे नहीं ये अतीन्द्रिय है अतीन्द्रि शब्द का अर्थ अप्रत्यक्ष है अर्थात् ये ज्ञान अनुमेय है सो इस कथन सें यातैं सिद्ध हुवा कि इस के जनक जायमान सविकल्पक ज्ञान अतीन्द्रि नहीं है तदनन्तर इसका प्रत्यक्ष होय है सो हम पूछैं हैं कि प्रत्यक्ष [illegible] सविकल्पक ज्ञान सें [illegible] का प्रत्यक्ष होय है [illegible]

के ज्ञानकूँ स्वप्रकाश कहैंहैं ज्यो कहोकि अनुव्यवसाय ज्ञानका ज्ञान है उस

ज्चित् ज्ञानों का अर्थात् अयावज्ज्ञानों का तो तुम ये ही कहोगे कि अ-यावज्ज्ञानोंका काहेतैं कि तुमनैं पूर्व ये कही है कि जब घटज्ञान का व्यव-हार इष्ट होय तब अनुव्यवसाय सैं घटज्ञान का प्रत्यक्ष होय है तो जिन जिन ज्ञानों का व्यवहार इष्ट नहीं होगा उन ज्ञानों कों विषय करनैं वाले अनुव्यवसाय बी नहीं होंगे ज्यो तत्तद्विषयक अनुव्यवसाय नहीं भये तो ये वे ज्ञान अप्रत्यक्ष होंगे और उन ज्ञानों सैं विषयों का प्रकाश मानों हो तो उन मैं तो स्वप्रकाशता सिद्ध हो गई काहे तैं कि जो ज्ञान ज्ञानान्तर सैं अप्रकाशित हुवा विषय का प्रकाशक होय सो ही स्वप्रकाश ज्ञान है यातैं ही वेदान्त ग्रन्थों मैं साक्षीकूँ स्वप्रकाश कहा है सो ये ज्ञान साक्षि रूप ही सिद्ध भये यातैं न्याय मत मैं कोई बी ज्ञान स्वप्रकाश नहीं है ये कथन असङ्गत हुवा जो कहो कि स्वप्रकाश शब्द का यौगिक अर्थ त्यागि करि कैं पारिभाषिक अर्थ करणें का तात्पर्य कहा है तो हम कहैं हैं कि यौगिक अर्थ करणैं मैं कर्मकर्तृ विरोध होय है यातैं इस अर्थ का त्याग किया है—

और देखो कि विद्यारण्य स्वामी नैं "अवेद्यत्वे सति अपरोक्षत्वम्" ये स्वप्रकाश का लक्षण कहा है इसका अर्थ ये है कि ज्ञानान्तर का अविषय हुवा प्रत्यक्ष होय सो स्वप्रकाश तो ये लक्षण बी अनिष्टव्यवहार जो घट ज्ञान तामैं न्यायमत सैं बनैं है काहे तैं कि न्याय मत मैं घट ज्ञानकूँ प्रत्यक्षात्मक तो मान्यां हीं है और जिन घट ज्ञानों का व्यवहार इष्ट नहीं न्याय की प्रक्रिया तैं वे घटज्ञान ज्ञानान्तर के विषय बी नहीं हैं तो वे स्वप्रकाश सिद्ध हो गये जो कहो कि ज्ञान स्वप्रकाश है तो न्याय मैं इसका ज्ञानान्तर सैं प्रकाश कैसैं मान्यां है स्वप्रकाश वस्तु तो अपणैं प्रकाश मैं ज्ञानान्तर की अपेक्षा नहीं करै है तो हम कहैं हैं कि स्वप्रकाश वस्तु अ-पणैं प्रकाश मैं ज्ञानान्तर की अपेक्षा करै है देखो वेदान्त मत मैं साक्षी स्व-प्रकाश है तो बी वृत्तिज्ञान सैं साक्षी का प्रकाश मान्यां है यातैं हीं ऐसैं कहैं हैं कि साधनसंपन्न पुरुष कूँ जब तत्त्वदर्शिपुरुष तत्त्वंपदार्थशोधन पूर्वक महावाक्योपदेश करै है तब इस जिज्ञासुकै "अहंब्रह्मास्मि" इत्या-कारक वृत्तिज्ञान का उदय होय है इससैं साक्षीका भान होय है अब तुम

कूँ स्वप्रकाश तो कहाहे परन्तु नित्य कहा नहीं तौहम कहैंहैं कि स्वप्रका

हीं पक्षपात रहित है। करिकैं देखो ज्यो ज्ञानान्तरसैं प्रकाशित भयें स्वप्र
काशताकी असिद्धि होय तो वेदान्ती वृत्तिज्ञानसैं साक्षीका प्रकाश हैं
मानैं यातैं ज्ञान स्वप्रकाश है—

और देखो कि न्यायवालोंकी वचनभङ्गीतैं हीं ज्ञान स्वप्रका
सिद्ध होय है देखो न्यायके ग्रन्थों मैं ऐसैं लिखा है कि जब ज्ञान का व्यव
हार इष्ट होय तब ज्ञानान्तरसैं ज्ञानका प्रकाश होय है तो इस कथनका
तात्पर्य हुया कि ज्ञानमैं ज्ञानान्तरप्रकाश्यता व्यावहारिक है तो ये अर्थसि
हो गया कि ज्ञानमैं परमार्थ सैं ज्ञानान्तरप्रकाश्यता नहीं है ज्ञान स्वप्रका
है जो कहो कि विद्यारण्यस्वामीनैं पञ्चदशीके कूटस्थदीपमें ऐसे लिखा है
कि "चैतन्यं द्विगुणं कुम्भे ज्ञातत्वेन स्फुरत्यतः अन्येऽनुव्यवसायाख्यमाहुरेत
द्यथोदितम्" १ इस श्लोक के पूर्वार्द्ध मैं तो वेदान्तमतसैं स्वप्रकाश सा
का प्रतिपादन है और उत्तरार्द्ध मैं अपनें निर्णय मैं शास्त्रान्तर की संमति
दिखाई है—उत्तरार्द्ध का व्याख्यान रामकृष्ण ऐसैं करै है कि "यथोदि
यथोक्तमेतदेव ब्रह्मचैतन्यमन्ये तार्किका अनुव्यवसायाख्यं ज्ञानान्तरं प्राहुः"
तो इस कथन तैं तो अनुव्यवसाय स्वप्रकाश सिद्ध होय है और पूर्वो
निर्णय मैं व्यवसाय ज्ञान हीं स्वप्रकाश सिद्ध हो गया तो स्वामी नैं व्य
साय को त्याग करिकैं अनुव्यवसायकूँ स्वप्रकाश कहा इस का तात्पर्य क
है तो हम कहैं हैं कि वेदान्तसिद्धान्त मैं तो ज्ञान मैं औपाधिक भेद है
स्वरूप सैं भेद नहीं है यातैं परमार्थतः ज्ञान एक ही है और ज्ञान
मैं ज्ञान का प्रकाश नहीं है "अयं घटः" ये ज्ञान तो इदन्ताविशिष्ट
त्वविशिष्ट घटविषयक है और "ज्ञातो घटः" ये ज्ञान ज्ञातत्वविशिष्ट
टत्वविशिष्ट घटविषयक है सो जैसे "ज्ञातो घटः" ये ज्ञान घट की स्व
रूप का प्रकाशक नहीं है तैसें "अयं घटः" ये ज्ञान घट की ज्ञातता
प्रकाशक नहीं है वृत्तिजिसनैं अंश का आवरण नष्ट करै है ज्ञान जिस
उसीं अंश का ही प्रकाश करै है शेष अंश आवृत ही रहै है विषय
मैं ज्ञान मैं भेद आरोपित है ये सिद्धान्त है परन्तु वेदान्तमत मैं वृत्ति
[illegible] का व्यवहार मान्यो है और वृत्तिसाक्षी मैं प्रकाशित होय है
वृत्तिकूँ [illegible] के मत मैं [illegible] व्यवसाय के स्थान मैं मानि करि कैं
कूँ अनुव्यवसाय रूप कहा है ।

जो कहो कि हमारे स्वप्रकाश शब्द का अर्थ अभिमत है कि प्रकाशरूप होय सो स्वप्रकाश तो ज्ञान यद्यपि विषय का प्रकाशक है तथापि प्रकाश रूप नहीं है यातैं स्वप्रकाश नहीं है तो हम कहैंहैं कि इस अर्थका श्रवण करिकैं तो पामर पुरुष यी हसित मुख होवै विद्वानों की तो कथाही कहा है विचार तो करो देखो जगत् मैं ऐसे पदार्थ यी हैं कि आप प्रकाशरूपहैं और अन्य का प्रकाश करैं हैं जैसैं सूर्य अग्नि विद्युत् । और ऐसे पदार्थ यी हैं कि अपने स्वरूप का प्रकाश करैं हैं और अन्य के प्रकाशक नहीं हैं जैसैं अन्धकार मैं रत्न । और ऐसे पदार्थ यी हैं कि अन्य प्रकाशसैं प्रकाशित भवैं प्रकाशक होय हैं जैसैं दर्पण । और ऐसे पदार्थ यी हैं कि अन्यप्रकाश सैं प्रकाशित यी प्रकाशक नहीं होय है जैसैं घटादिक । परन्तु ऐसा पदार्थ तो है ही नहीं कि अन्य के प्रकाश सैं अप्रकाशित और अप्रकाशरूप ऐसा यो प्रकाशक होवै यातैं ज्ञान स्वप्रकाश है—

अब हम ये और पूछैं हैं कि अप्रकाशरूप ज्ञानसैं घटका प्रकाश मानों हो तो यो प्रकाश ज्ञानरूप है अथवा घटरूप है अथवा दौनूं तैं भिन्न है । ज्यो कहो कि ज्ञानरूप है तो हम कहैं हैं कि ज्ञानकूं अप्रकाश रूप मान्याँ सो असङ्गत हुआ । ज्यो कहोकि घटरूप है तो हम कहैंहैं कि घट प्रकाशरूप नहीं है ये सर्वानुभव सिद्ध है तो प्रकाश अप्रकाश है ऐसैं कहणाँ होगा तो ये कथन विरुद्ध है । ज्यो कहो कि दौनूं तैं भिन्न है तो हम कहैं हैं कि ज्ञान और अप्रकाशरूप घट इनतैं भिन्न घट प्रकाश सो अलीक है । ज्यो कहोकि घटका प्रकाश घट निष्ठ ज्यो ज्ञानविषयता तद्रूप है तो हम कहैं हैं कि इस ज्ञानविषयताकूं ज्ञानरूपा मानों अथ- वा विषयरूपा मानों अथवा दौनूं तैं विलक्षण मानों परन्तु अप्रकाशरूपा ही माननीं होगी तो प्रकाश अप्रकाश है येही कथन सिद्ध होगा सो विरुद्ध है यातैं ज्ञानकूं अथवा घटकूं अथवा दौनूंतैं विलक्षण मानी ज्यो ज्ञान- विषयता ताकूं प्रकाशरूपा माननीं होगी अब घट और घटनिष्ठ ज्यो ज्ञानविषयता इनकूं तो प्रकाशरूप नहीं मान सकोगे काहेसैं कि घट तो पार्थिव है और घटनिष्ठ ज्यो ज्ञानविषयता सो धर्म है यातैं ये तो प्रकाश रूप हो सकैं नहीं तो परिशेषसैं ज्ञानकूं प्रकाशरूप मान्याँ जायगा सो

नित्य पणाँ कैसैं सिद्ध होय तो हम पूछैं हैं कि तुम नित्य किसकूं को

ज्ञान स्वप्रकाश सिद्ध होगया काहेतैं कि तुम नैं प्रकाशरूप होय सो स्व प्रकाश ऐसैं कहा है—

ओर देखो कि ज्ञानका प्रकाशक ज्ञानान्तर नहीं है यातैं यो ज्ञान स्वप्रकाशरूप ही है यहाँ " विज्ञातारमरे केन विजानीयात् ,, ये श्रुति ही प्रमाण है । ज्यो कहोकि ये श्रुति तो प्रकाश के करण का निषेध करै है ज्ञानमैं स्वप्रकाशता का बोधन करै नहीं तो हम कहैंहैं कि " न तत्र सूर्यो इस श्रुति मैं ज्ञानप्रकाश साधनौं का निषेध करिकैं " तमेव भान्तमनुभाति सर्वम् ,, ऐसैं कहा है सो " भान्तम् ,, इसका " प्रकाशम् ,, ये अर्थ है ज्ञान स्वप्रकाश सिद्ध होगया । ज्यो कहोकि "भान्तम् ,, ये विशेषण तो वि ज्ञाता का है तो विज्ञाता ज्यो है सो स्वप्रकाश सिद्ध होगा तो हम कहैं कि वेदान्त मत मैं ज्ञानहीं परमार्थतः ज्ञाताहै यातैं कोई दोष नहीं पर न्यायमत मैं ज्ञान विशिष्ट का नाम ज्ञाता है तो ज्ञाताके स्वरूप मैं दो भाग हैं तिनमैं ज्ञान तो विशेषण है ओर आत्मा विशेष्य है ओर सिद्धान्ति दोनौं तैं आत्माकूं जड मान्यां है ज्ञाताके विशेष्य भागमैं तो स्वप्रकाश बाधित है यातैं विशेषण ज्यो ज्ञान ताभैं स्वप्रकाशता मानी जायगी ज्ञान स्वप्रकाश सिद्ध होगया । ओर श्रुतिमैं ज्यो विज्ञाताकूं स्वप्रकाश कहा तो जैसे " घटाकाशो ध्वस्तः,, ये व्यवहार विशेषण धर्मका विशिष्ट मैं आरोप करिकैं संभवे है तैसे ज्ञानरूप विशेषण मैं स्वप्रकाशता है तिस ज्ञातामैं आरोप है ऐसैं मानौं । ओर आरोप इष्ट नहीं होवे तो विशिष्ट के अधिकरण मैं विशेषण ओर विशेष्य उभय की अधिकरणता रहै है ऐसे मानौं जैसे "नीलघटवद्भूतलम् ,, यहाँ भूतल मैं नीलरूपाधिकरणता ओर घटाधिकरणता दोनूं हैं भूतल मैं नीलरूप तो स्वाश्रयघटसंयोग संबन्ध सैं रहै है ओर घट संयोग संबन्ध मैं रहै है तैसे आत्मा मैं स्वप्रकाशता स्वाश्रयसमवाय संबन्ध मैं रहै है ओर ज्ञान समवाय संबन्ध सैं रहैहै ऐसे ज्ञान स्वप्रकाश है—

ओर देखो कि न्यायमत मैं ज्ञान स्वप्रकाश नहीं है ये कहना भी संभवे नहीं यातैं को ज्ञान स्वप्रकाश है ऐसो ज्ञान स्वप्रकाश नहीं है [illegible] [illegible] अनुव्यवसायका बोधक है ओर अभाव का [illegible] मैं [illegible] है ओर ज्ञान का [illegible] विषय

हो ज्यो कहो कि निरवयव होय सो नित्य तो हम कहैं हैं कि रूप

है तो प्रतियोगि ज्ञानके होणैं मैं प्रतियोगिसत्व की अपेक्षा होगी तो यहाँ प्रतियोगी है स्वप्रकाशत्व तिसका सत्व न्यायमत मैं कहीं प्रसिद्ध करणाँ चाहिये । और तुम ये कहो हो कि न्यायमत मैं कोई वी वस्तु स्वप्रकाश नहीं है तो स्वप्रकाशत्वकी अलीकतासैं तद्विषयक ज्ञानका असत्व होगा ज्यो ऐसा हुवा तो स्वप्रकाशत्व विषयक ज्ञान स्वप्रकाशत्वाभाव विषयक ज्ञानका कारण है तो कारण के नहीं होणैं तैं स्वप्रकत्वाभावज्ञान वी नहीं होगा ज्यो ये ज्ञान नहीं हुवा तो ये ज्ञान ज्ञानमैं स्वप्रकात्वा भाव बोधक व्यवहार का कारण है तो इसके नहीं होणैं तैं इस व्यवहार का असंभव ही है ज्यो ये व्यवहार असिद्ध हुवा तो ये व्यवहार ज्ञान स्वप्रकाश है इस व्यवहार का प्रतिबन्धक है तो इस प्रति बन्धक के अभाव सैं ज्ञान स्वप्रकाश है ये व्यवहार निर्बाध सिद्ध होगा ज्यो येव्यवहार सिद्ध हुवा तो इसका कारण है ज्ञानमैं स्वप्रकाशत्वानुभव ज्यो ये अनुभव सिद्ध हुवा तो तुम अनुभव मैं विषयकूँ कारण मानों हो तो इसका विषय होणैं तैं ज्ञान मैं स्वप्रकाशत्व सिद्ध हुवा—

ज्यो कहो कि स्वप्रकाशत्व की अप्रसिद्धि होणैं तैं ज्ञान मैं स्वप्रकाशत्वा· भाव असिद्ध हुवा तो हम अग्निकूँ स्वप्रकाश मानैं गे काहेतैं कि अग्नि स्वप्रकाश है ये सर्व के अनुभव सिद्ध है तो अग्नि मैं स्वप्रकाशत्व रूप प्र· तियोगी की प्रसिद्धि सैं ज्ञान मैं स्वप्रकाशत्वाभावकूँ सिद्ध करैं गे तो हम कहैं हैं कि ये कथन तो हमारे पक्ष का वी साधक है देखो तुम तो ज्ञान मैं स्वप्रकाशत्वाभाव सिद्ध करणैं के अर्थ अग्निकूँ स्वप्रकाश मनौंगे और हम ज्ञान मैं स्वप्रकाशत्व सिद्धकरणैं के अर्थ अग्निकूँ दृष्टान्त मानैं गे तो उभय पक्ष सिद्धि सैं ज्ञान मैं स्वप्रकाशत्वाभाव संदिग्ध होगा य.तैं एतद्भिन्न वस्तु मैं स्वप्रकाशत्वकू प्रसिद्ध करणाँ चाहिये ।

ज्यो कहो कि अलीक पदार्थ के अभाव का व्यवहार वी लोक मैं देखैं हैं जैसैं "शशशृङ्ग नास्ति" ये व्यवहार लोक मैं होय है तो यहाँ ये व्यव· हार तो शशशृङ्गाभाव का बोधक है और शशशृङ्ग अलीक है तो वी ये व्यवहार होय है तैसैं स्वप्रकाशत्व अलीक है तो वी इस के अभाव का व्यवहार होय है तो हम कहैं हैं कि ऐसैं मानणों तो न्याय मत मैं विरुद्ध है काहेतैं कि न्याय मैं इस व्यवहार कूँ शशाधिकरणकशृङ्गाधिकरण·

दिक गुणोँकूँ तथा क्रियाकूँ तुम निरवयव मानौं हो तो गुण क्रिया ग

त्वाभाव बोधक मानि करिकैं गोमहिष्यादिकन मैं शृङ्गाधिकरणत्व श
प्रतियोगी की प्रसिद्धि किई है ये अभाव अलीकप्रतियोगिक नहीं है ये
"ज्ञानं स्वप्रकाशं नास्ति" ये व्यवहार तो अलीकप्रतियोगिक ही है क्यों
कि न्याय के आचार्योँ के तात्पर्य की अनवगति सैं न्यायमत मैं के
यी वस्तु स्वप्रकाश नहीं है ऐसैं मानणैं तैं स्वप्रकाशत्व अलीक है।

ज्यो कहो कि न्याय मत मैं स्वप्रकाश वस्तु नहीं मान्या है
"ज्ञानंस्वप्रकाशं नास्ति" ये व्यवहार होसकै नहीं परन्तु हमने
तुमारे कथन का अनुवाद करिकैं "ज्ञानं स्वप्रकाशं नास्ति" ऐसैं कह
यातैं हमारा कथन निर्दोष है तो हम कहैं हैं कि अप्रकाशित ज्ञान
विषय का प्रकाश होय है ऐसैं कहि करिकैं ऐसैं न्याय मत मैं ज्ञान
प्रकाश नहीं है ये कथन किया सो असङ्गत हुवा काहे तैं कि ये कथन
व्यवहार रूप है और अब तुमने ये कही कि न्याय मत मैं स्वप्र
वस्तु मान्यां नहीं यातैं "ज्ञानं स्वप्रकाशं नास्ति" ये व्यवहार हो
नहीं। ज्यो कहो कि पूर्व का कथन तो न्याय के ग्रन्थोँ के लेख तैं है
और अब ज्यो मेरा कथन है सो विवेचन तैं है तो हम कहैं हैं कि
के लेख का भी तो विवेचन करणाँ चाहिये ज्यो कहो कि ग्रंथोँ के लेख
तो ज्ञान मैं ज्ञानान्तर प्रकाशितत्वाभाव और स्वप्रकाशत्वाभाव और वि
प्रकाशकत्व ये ग्रन्थकारोँ के अभिमत है ऐसैं प्रतीत होय है तो हम
हैं कि ज्ञान मैं ज्ञानान्तर प्रकाशितत्वाभाव और विषयप्रकाशकत्व ये
वेदान्ती के भी अभिमत हैं परन्तु स्वप्रकाशत्वाभाव अभिमत नहीं है
न्यायवालोँ के स्वप्रकाशत्वाभाव भी अभिमत है सो इस के तात्पर्य
विचार करणाँ चाहिये और पण्डितोँकूँ भ्रान्त मानणाँ उचित नहीं।
ज्यो कहो कि इस का विवेचन तुम हीं कहो यातैं दोनूंके कथन का
स्पष्ट अवगम होय सो हम कहैं हैं कि न्याय वालोँ मैं ज्यो स्वप्रका
का निषेध किया है सो तो स्वप्रकाश शब्द के यौगिक अर्थ की दृष्टि
किया है। और वेदान्तिओँ मैं ज्यो ज्ञानकूँ स्वप्रकाश मान्याँ है
प्रकाश शब्द का पारिभाषिक अर्थ करिकैं मान्याँ है सो न्याय
भी अभिमत है ऐसो न्यायवालोँ मैं ज्ञान कूँ ज्ञानान्तरप्रकाशित
विषयप्रकाशक कहा और वेदान्त वालोँ मैं भी स्वप्रकाश शब्द का

कूँ यी नित्य मानणैं चाहिये ज्यो कहो कि जिसका नाश न होय सो

अर्थ किया है सो हम पूर्व कहि आये हैं तो न्याय ओर वेदान्त में विरोध कहाँ है। ओर स्वप्रकाश शब्द का यौगिक अर्थ मानणाँ यी दोनूँ के अभिमत नहीं यातैं यौं न्याय ओर वेदान्त इन मैं विरोध नहीं। तो इस पूर्वोक्त निर्णय का ये निष्कर्ष हुआ कि स्वप्रकाश शब्द का यौगिक अर्थ करो तो कर्म कर्तृ विरोध होय हि यातैं ये व्यवहार दोनूँके इष्ट नहीं है। ओर स्वप्रकाश शब्द का पारिभाषिक अर्थ करो तो कोई बी दोष नहीं यातैं "ज्ञानं स्वप्रकाशम्" ये व्यवहार दोनूँ कै इष्ट है। ऐसैं न्याय मत मैं ज्ञान स्वप्रकाश है—

ओर ज्यो तुमनैं ये कही कि हमनैं तो तुमारे कथन का अनुवाद करिकैं "ज्ञानं स्वप्रकाशं नास्ति" ऐसैं कहा है यातैं हमारा कथन निर्दोष है तो हम पूछैं हैं कि हमनैं जो ज्ञानकूँ स्वप्रकाश कहा उसकूँ संमत करिकैं ज्ञान मैं स्वप्रकाशता का निषेध करो हो अथवा असंमत करिकैं निषेध करो हो ज्यो कहो कि संमत करिकैं निषेध करैं हैं तो हम कहैं हैं कि ये तो अपणैं मत का ही निषेध हुया तुमनैं ज्ञान ज्ञानान्तर सैं अप्रकाशित हुया प्रका-
...क है ऐसैं मान्याँ है सो ही हमनैं मान्याँ है यातैं निषेध असङ्गत है
...ो कहो कि नहीं मानि करिकैं निषेध करैं हैं तो हम कहैं हैं कि ज्यो
...मनैं ज्ञान का स्वभाव कहा है सो ही हमनैं मान्याँ है यातैं इस का तो
...िषेध संभवै नहीं ओर ज्यो ये कहो कि तुमनैं हमारे कहे ज्ञान स्वभाव
... स्वप्रकाश शब्द का पारिभाषिक अर्थ मान्याँ सो असंगत है तो तुमारा
...िया निषेध संभवै है ज्यो कहो कि ऐसैं हीं कहैंगे तो हम पूछैं हैं कि
...मनैं तुमारे कहे ज्ञान के स्वभावकूँ स्वप्रकाश शब्दका पारिभाषिक अर्थ
...ाण्या तिस मैं सो दोष कहा है सो कहो ओर अपणैं मतमैं स्वप्रकाश
...ब्दका अर्थ कैसा अभिमत है सो कहो—

ज्यो कहो कि ज्ञान स्वव्यवहार इष्ट होय तब ज्ञानान्तर प्रकाशितत्व की अपेक्षा करै है यातैं स्वप्रकाश नहीं है ऐसैं न्यायवाले ज्ञान मैं स्वप्रकाशत्व का निषेध करैं हैं यातैं उन का ये अभिप्राय प्रतीत होय है कि ज्यो ज्ञान ज्ञानान्तर प्रकाशितत्व की अपेक्षा नहीं करै सो स्वप्रकाश जैसैं कोई कहै कि जिस मैं गुण नहीं होय सो द्रव्य नहीं है तो इस का ये अभिप्राय सिद्ध होय है कि जो गुणवान् पदार्थकूँ द्रव्य मानैं है परंतु ये हम

दिक गुणोंकूँ तथा क्रियाकूँ तुम निरवयव मानों हो तो गुण क्रिया
त्वाभाव बोधक मानि करिकैं गोमहिष्यादिकन मैं शुद्धाधिकरणत्व
प्रतियोगी की प्रसिद्धि किई है ये अभाव अलीकप्रतियोगिक नहीं है।
"ज्ञानं स्वप्रकाशं नास्ति" ये व्यवहार तो अलीकप्रतियोगिक ही है
कि न्याय के आचार्यों के तात्पर्य की अनवगति सैं न्यायमत में
यी वस्तु स्वप्रकाश नहीं है ऐसें मानणें सैं स्वप्रकाशत्व अलीक है।

ज्यो कहो कि न्याय मत मैं स्वप्रकाश वस्तु नहीं ... ...
"ज्ञानंस्वप्रकाशं नास्ति" ये व्यवहार होय सकै नहीं परन्तु हमने
तुमारे कथन का अनुवाद करिकैं "ज्ञानं स्वप्रकाशं नास्ति" ऐसें
यातैं हमारा कथन निर्दोष है तो हम कहैं हैं कि अप्रकाशित
विषय का प्रकाश होय है ऐसें कहि करिकैं ऐसें न्याय मत मैं ज्ञान
प्रकाश नहीं है ये कथन किया सो असङ्गत हुया काहे तैं कि ये कथन
व्यवहार रूप है और अब तुमने ये कही कि न्याय मत मैं ...
वस्तु मान्यां नहीं यातैं "ज्ञानं स्वप्रकाशं नास्ति" ये व्यवहार
नहीं। ज्यो कहो कि पूर्व का कथन तो न्याय के ग्रन्थों के लेख सैं
और अब ज्यो मेरा कथन है सो विवेचन तैं है तो हम कहैं हैं कि
के लेख का यी तो विवेचन करणां चाहिये ज्यो कहो कि ग्रन्थों के
तो ज्ञान मैं ज्ञानान्तर प्रकाशितत्वाभाव और स्वप्रकाशत्वाभाव और
प्रकाशकत्व ये ग्रन्थकारों के अभिमत है ऐसें प्रतीत होय है तो हम
हैं कि ज्ञान मैं ज्ञानान्तर प्रकाशितत्वाभाव और विषयप्रकाशकत्व
वेदान्ती कै यी अभिमत हैं परन्तु स्वप्रकाशत्वाभाव अभिमत नहीं
न्यायवादीयों के स्वप्रकाशत्वाभाव यी अभिमत है तो इस के ...
विचार करणां चाहिये और पण्डितोंकूं भ्रान्त मानणां उचित नहीं
ज्यो कहो कि इस का विवेचन तुम हीं कहो जातैं दोनूं के कथन का
स्पष्ट अवगत होय सो हम कहैं हैं कि न्याय वालों नैं ज्यो ज्ञान
का निषेध किया है सो तो स्वप्रकाश शब्द के यौगिक अर्थ का
किया है। और वेदान्तियों नैं ज्यो ज्ञानकूं स्वप्रकाश मान्यां है
प्रकाश शब्दका पारिभाषिक अर्थ करिकैं मान्यां है सो न्याय
यी अभिमत है देखो न्यायवालों नैं ज्ञान कूं ज्ञानान्तराप्रकाशित
विषयप्रकाशक कह्या और वेदान्त वालों नैं यी स्वप्रकाश शब्द

क्रूँ यी नित्य मानणाँ चाहिये ज्यो कहो कि जिसका नाश न होय सो

र्थ किया है सो हम पूर्व कहि आये हैं तो न्याय और वेदान्त में विरोध
हीं है । और स्वप्रकाश शब्द का यौगिक अर्थ मानणाँ यी दोनूँ के अ-
भिमत नहीं याते याँ न्याय और वेदान्त इन में विरोध नहीं । तो इस
र्वोक्त निर्णय का ये निष्कर्ष हुआ कि स्वप्रकाश शब्द का यौगिक अर्थ
करो तो कर्म कर्तृ विरोध होय है याते ये व्यवहार दोनूँके इष्ट नहीं है ।
और स्वप्रकाश शब्द का पारिभाषिक अर्थ करो तो कोई वी दोष नहीं
याते "ज्ञानं स्वप्रकाशम्" ये व्यवहार दोनूँ के इष्ट है । ऐसे न्याय मत
ज्ञान स्वप्रकाश है—

और ज्यो तुमने ये कही कि हमने तो तुमारे कथन का अनुवाद करिके
ज्ञानं स्वप्रकाशं नास्ति " ऐसे कहा है याते हमारा कथन निर्दोष है तो
म पूछैं हैं कि हमने जो ज्ञानकूँ स्वप्रकाश कहा उसकूँ संमत करिके ज्ञान
स्वप्रकाशता का निषेध करो हो अथवा असंमत करिके निषेध करो हो
यो कहो कि संमत करिके निषेध करैं हैं तो हम कहैं हैं कि ये तो अपने
त का ही निषेध हुवा तुमने ज्ञान ज्ञानान्तर से अप्रकाशित हुया प्रका-
क है ऐसे मान्याँ है सो ही हमने मान्याँ है याते निषेध असङ्गत है
यो कहो कि नहीं मानि करिके निषेध करैं हैं तो हम कहैं हैं कि ज्यो
ुमने ज्ञान का स्वभाव कहा है सो ही हमने मान्याँ है याते इस का तो
नषेध संभवै नहीं और ज्यो ये कहो कि तुमने हमारे कहे ज्ञान स्वभाव
कूँ स्वप्रकाश शब्द का पारिभाषिक अर्थ मान्याँ सो असंगत है तो तुमारा
किया निषेध संभवै है ज्यो कहो कि ऐसे ही कहैंगे तो हम पूछैं हैं कि
मने तुमारे कहे ज्ञान के स्वभावकूँ स्वप्रकाश शब्दका पारिभाषिक अर्थ
ान्या तिस में तो दोष कहा है सो कहो और अपणे मतमें स्वप्रकाश
शब्दका अर्थ कैसा अभिमत है सो कहो—

ज्यो कहो कि ज्ञान स्वव्यवहार इष्ट होय तब ज्ञानान्तर प्रकाशितत्व
की अपेक्षा करै है याते स्वप्रकाश नहीं है ऐसे न्यायवाले ज्ञान में स्व-
प्रकाशत्व का निषेध करैं हैं याते उन का ये अभिप्राय प्रतीत होय है कि
ज्यो ज्ञान ज्ञानान्तर प्रकाशितत्व की अपेक्षा नहीं करै सो स्वप्रकाश जैसे
कोई कहै कि जिस में गुण नहीं होय सो द्रव्य नहीं है तो उस का यो अ-
भिप्राय सिद्ध होय है कि जो गुणवान् पदार्थकूँ द्रव्य मानैं है परंतु ये स्व

नित्य तो हम कहैं हैं कि ध्वंसकूँ वी नित्य मानणाँ चाहिये काहे

स्वप्रकाशत्वकूँ कहाँ प्रसिद्ध करि कैं इष्ट व्यवहार ज्यो ज्ञान तामैं इस
अभाव कहैं हैं ये हम नहीं जानैं हैं तो हम कहैं हैं कि न्याय मत
प्रतियोगी की प्रसिद्धि विना तो अभाव की सिद्धि होवै नहीं यातैं ये
जानौं कि ये कोई ज्ञानकूँ स्वप्रकाश वी मानैं हैं सो अनुव्यवसाय ज्ञान
काहे तैं कि ये ज्ञान अव्यवहार्य है और ज्ञानान्तर सैं अप्रकाशित है–

ज्यो कहोकि ये कथन तो न्यायमतसैं विरुद्ध है काहेतैं कि हमनैं ग्र
केग्रन्थों मैं अैसा लेख देखा है कि अनुव्यवसाय गोचर यी ज्ञान होय है
अनुव्यवसाय मैं व्यवहार्यता और ज्ञानान्तरप्रकाशितत्व ये दोनूँ धर्म रहे हैं
हम पूछैं हैं कि अैसैं मानैं अनवस्था दोष होय है तिसकी तो निवृ
कैसैं किई है और युक्ति कहा दिखाई है और अनुभव कहा बताया
और प्रमाण कहा लिखा है । ज्यो कहो कि यहाँ तो इस विषयमैं कु
लेख देखा नहीं परंतु एक पण्डिततैं मैनैं ये ही प्रश्न किये तब उसनैं कु
और प्रमाण तो बताये नहीं और ये कही कि जैसैं पुत्रका कारण पिता
और उसका कारण पितामहहै और उसका कारण प्रपितामह
ऐसैं उत्तरोत्तरकूँ कारण मानणैं मैं अनवस्था नहीं है तैसेंहीं यहाँ
अनवस्था नहीं है सर्व ज्ञानोंके प्रकाशक ज्ञानान्तर मानौं किसनैं कर्म
ये नियम नहीं है तो हम कहैं हैं कि ऐसा उत्तर देने वाला पुरुष न्या
मतका अनभिज्ञहै काहे तैं कि न्याय दर्शन अध्याय २ आन्हिक १ सूत्र
"न प्रदीपप्रकाशवत्तत्सिद्धेः,, इस सूत्रके भाष्य मैं वात्स्यायन मुनि लिखे हैं
"प्रत्यक्षं मे ज्ञानमानुमानिकं मे ज्ञानमौपमानिकं मे ज्ञानमागमिकं मे ज्ञानमि
संविज्ञितं चोपलभमानस्य धर्मार्थ सुखापवर्गप्रयोजनस्तत्प्रत्यनीकपरिवर्ज
प्रयोजनश्च व्यवहार उपपद्यते सोऽयं तावत्येवनिवर्तते नचास्ति व्यव
न्तरमनवस्थासाधनीयत्वेन प्रयुक्तोऽनवस्थामुपाद्दीतेति,, यातैं उस पं
[illegible] कथन सर्वदा अप्रमाणिक है देखो वात्स्यायनमुनिके लिखा है
सिद्ध होय है कि प्रत्यक्ष अनुमिति उपमिति शाब्द ये जे ज्ञान इनका
व्यवहार होय है सो उपलभमानकी ज्यो संवित् तन्निमित्त है ये [illegible]
[illegible] ज्ञानका ज्ञानान्तर सैं प्रकाश नहीं मानैं है [illegible]
[illegible] सैं प्रकाश सिद्ध करनैं के अर्थ है और धर्मार्थ इत्यादिक
[illegible] इत्यादिक दोष निमित्त व्यवहार मैं अनवस्था दिखाई है

के तुमारे मत मैं ध्वंसकूँ अनन्त मान्याँ है अर्थात् ध्वंस का नाश नहीँ

है और ज्ञानान्तर का ज्ञानान्तर विषयक ज्ञानसैं प्रकाश मानैं अनवस्थाहोय
यातैं ज्ञानान्तर विषयक ज्ञान साधक व्यवहार का निषेध है अब तुमही
हो वात्स्यायन मुनिके लेखतैं विरुद्ध होणैं तैं उस पंडित का लेख प्रामा
क कैसैं हो सके ऐसे २ शास्त्र हृदयानभिज्ञ पुरुषौं नैं हीं सकल सर्वज्ञ
ने संमत वेदान्तोपदिष्टतत्वकूँ अन्य शास्त्रौंतैं विरुद्ध कहाहै और व्या॰
ह कराय करिकैं लोकोंके कल्याणकूँ पाताल तल मैं पहुँचाया है—

ज्यो कहो कि उसनैं अनुव्यवसाय का व्यवहार इष्ट होय तो इसका
। ज्ञानान्तर सैं प्रकाश होय है ऐसैं प्रामाँण्यवाद मैं लेख बताया है तो
म कहैं हैं कि इस लेख का तात्पर्य उसकूँ अवगत हुया नहीँ इसका
ात्पर्य ये है कि वात्स्यायन मुनि नैं निषेध लिखा है यातैं अनुव्यवसायका
यवहार इष्ट नहीँ है ज्यो अनुव्यवसायका व्यवहार इष्ट होय तो इसका
ानान्तर सैं प्रकाश होय इतना विचार तो तुम बी करो प्राचीन ग्रन्थकार
पि लेख तैं विरुद्ध कैसैं लिखै। ज्यो कहो कि तात्पर्य तो आपणाँ आप
ी जान सकै है यातैं आप किसी ग्रन्थ मैं ऐसा लेख बतावो कि न्याय
त मैं ज्ञान प्रकाश रूप है तो हम कहैं हैं कि आप ऐसा लेख बतावो
के न्यायमत मैं ज्ञान प्रकाशरूप नहीँ है। और हम नैं तो विद्यारण्य
स्वामी का लेख बी बताया है। ज्यो अनुव्यवसाय प्रकाशरूप नहीँ होता
ो स्वामी ऐसैं नहीँ कहते कि इस साक्षीकूँ तार्किक अनुव्यवसाय कहैं हैं—

ज्यो कहो कि ऋषियौं के ग्रंथौंका नाम स्मृति है सो वेद मूलक
होणैं तैं प्रमाण होय हैं तो वात्स्यायन नैं ज्यो अनुव्यवसाय के व्यवहार
ा निषेध किया उसकी मूल भूत श्रुति कहो तो हम कहैंहैं कि
ाण्डूक्यउपनिषद् मैं ये श्रुति है कि " नान्तः प्रज्ञं न बहिः प्रज्ञं
ोभयतः प्रज्ञं न प्रज्ञानघनं न प्रज्ञं नाऽप्रज्ञमदृष्टमव्यवहार्यमग्राह्यमलक्षण
चिन्त्यमव्यपदेश्यमेकात्मप्रत्ययसारं प्रपंचोपशमं शान्तं शिवमद्वैतं चतुर्थं
ान्यन्ते स आत्मा स विज्ञेयः „ इसमैं आदिके च्यार विशेषणौं सैं तो
ैजस और विश्व और तापरस्थस्नन की अन्तरालावस्था और सुषुप्ति इन
ेा निषेध है और न प्रज्ञम् इसतैं सर्व विषयज्ञातृत्व का निषेध है और
ाऽप्रज्ञम् इसमैं जड़त्व निषेध है और अदृष्टम् तथा अव्यवहार्यम् तथा
अग्राह्यम् इन विशेषणौं सैं ज्ञानेन्द्रियविषयता तथा व्यवहारविषयता तथा

मान्या है ज्यो कहो कि जिस की उत्पत्ति न होय सो नित्य तो हम
हैं कि प्रागभावकूँ वी नित्य मानणाँ चाहिये काहे तैं कि तुम प्रागभाव
उत्पत्ति नहीँ मानौं हो ज्यो कहो कि जिसके उत्पत्ति ओर नाश दोनूं
होयँ सो नित्य तो हम कहैं हैं कि अलीक पदार्थकूँ नित्य मानणाँ चाहि
काहेतैं कि तुम सुस्सा के सींग के उत्पत्ति ओर नाश नहीँ मानौं हो
कहो कि ज्यो अलीक न होय ओर जिसके उत्पत्ति ओर नाश न होय
नित्य तो हम पूछैं हैं कि तुमकूँ उत्पत्ति ओर नाश दीखैं हैं यातैं उत्पत्ति
ओर नाश इनकूँ मानौं हो अथवा नहीँ दीखैं हैं तो वी उत्पत्ति
नाश मानौं हो ज्यो कहो कि नहीँ दीखैं हैं तो वी उत्पत्ति ओर नाश
हैं तो हम कहैं हैं कि अलीक पदार्थ के उत्पत्ति ओर नाश दीखैं
यातैं अलीक पदार्थ के वी उत्पत्ति ओर नाश मानणैं चाहिये ज्यो
दीखैं हैं यातैं उत्पत्ति ओर नाश इनकूँ मानैं हैं तो हम पूछैं हैं
तुमकूँ दीखैं हैं अथवा अन्यकूँ दीखैं हैं अथवा तुम ओर अन्य
के इंकूं दीखैं हैं अर्थात् तीनौंमैंतैं किसके देखणैं तैं तुम उत्पत्ति
नाश इनकूँ मानौं हो ज्यो कहो कि हम देखते हैं यातैं उत्पत्ति ओर
इनकूँ मानैं हैं तो तुमनैं असङ्गत घट पटादिकों के उत्पत्ति ओर

कर्मेन्द्रियविषयता इनको निषेध है ओर अलक्षणम् तथा अचिन्त्यम्
अव्यपदेश्यम् इनसैं अनुमितिविषयता तथा मनोविषयता ओर शब्दवि
ता इनको निषेध है ओर एकात्मप्रत्ययसारम् तथा प्रपंचोपशमम्
स्वप्रकाश है तथा संसार धर्म रहित है ओर शान्तम् शिवम् अद्वैतम्
सैं अधिकारी निर्दोष ओर भेदरहित है ओर चतुर्थम् इससैं तुरीय है
ज्ञानी मानैं हैं सो आत्मा है सो जाननैं योग्य है तो इस श्रुतिमैं इस
अव्यपदार्थ कहा है यातैं न्यायदर्शन भाष्य मैं इस के व्यवहार का
किया है ओर चतुर्थ कहा है तो ये ज्ञान ज्ञाता ओर ज्ञेय इन
मैं भिन्न है यातैं चतुर्थ है ऐसे न्याय मत मैं अनुव्यवसाय ज्ञान
है। इस भेदकूँ देखि करिकैं अल्प श्रुत ओर निरनुभव पुरुष तो
ओर उद्विग्न होंगे ओर जे गुरुचरणानुग्रहतैं साधनाढ्य पुरुष हैं से
न्न होंगे। विशेष भेद ज्यो है सो अज्ञ ओर विज्ञ इन दोनूं
पुरुषों के पक्ष अनुमोदक है यातैं हम इस विषय मैं उपरत होय हैं

इत्यलम्

हीं देखे हैं यातैं उनकूं नहीं मानणैं चाहिये ज्यो कहो कि अन्य पुरु-
के देखणैं तैं उत्पत्ति और नाश इनकूं मानैं हैं तो हम कहैं हैं कि
ारे व्यवसाय ज्ञान के उत्पत्ति और नाश अन्य पुरुषों नैं देखे नहीं
तैं व्यवसाय ज्ञान के उत्पत्ति और नाश नहीं मानणैं चाहिये ज्यो कहो
हम अथवा अन्य इनमैं तैं किसी के भी देखणैं तैं उत्पत्ति और नाश
नैं हैं तो हम पूछैं हैं तुम हीं कहो तुमारे अनुव्यवसाय ज्ञान के उत्पत्ति
नाश मानों हो अथवा नहीं ज्यो कहो कि मानैं हैं तो हम पूछैं हैं कि
न्य के देखणैं तैं मानों हो अथवा तुमारे देखणैं तैं मानों हो ज्यो कहो कि
न्य के देखणैं तैं मानैं हैं तो हम पूछैं हैं कि यहां अन्य शब्द करिकैं
रतैं भिन्न जीवकूं लेवो हो अथवा अनुव्यवसाय तैं भिन्न ज्ञान मानोंगे
तुमकूं ये हीं कहणां पड़ैगा कि हम तैं भिन्न जीव तो हमारे अनुव्यव-
य के उत्पत्ति विनाशोंकूं देख सकैं नहीं यातैं अनुव्यवसाय तैं भिन्न
न तैं अनुव्यवसाय के उत्पत्ति विनाशोंका प्रत्यक्ष मानैं गे तो हम कहैं
कि उस ज्ञानकूं भी तुम अनित्य ही मानोंगे तो उस के भी उत्पत्ति
नाशों के प्रत्यक्ष होणैं के अर्थ और ही ज्ञान मानणां पड़ैगा तो अन-
था होगी यातैं अनुव्यवसाय तैं भिन्न अनुव्यवसाय के उत्पत्ति विनाशों
प्रकाश करणैं वाला ज्ञान मानणां असङ्गत हुवा ।

ज्यो कहो कि अनुव्यवसाय के उत्पत्ति विनाशों का प्रत्यक्ष उसही
व्यवसाय तैं मानैं गे तो हम कहैं हैं कि तुमारा अनुव्यवसाय मानणां
असङ्गत हुवा काहे तैं कि व्यवसाय ज्ञान के उत्पत्ति विनाशों का प्रत्यक्ष
साय ज्ञान तैं हीं मानों अनुव्यवसाय मानणां व्यर्थ है ज्यो कहो कि
साय ज्ञान के उत्पत्ति विनाशोंका प्रत्यक्ष अनुव्यवसाय तैं नहीं मानैं
किन्तु व्यवसाय ज्ञान का प्रत्यक्ष अनुव्यवसाय तैं मानैं हैं यातैं अनुव्य-
ाय मानणां व्यर्थ न हुवा तो हम कहैं हैं कि तुम अनुव्यवसाय ज्ञानकूं
प्रकाश मानों हो तो व्यवसाय ज्ञानकूं हीं स्वप्रकाश मानों । ऐसैं अ-
व्यवसाय ज्ञान मानणां व्यर्थ हुवा ज्यो कहो कि प्रथम तो यह घट है
ैं व्यवसाय ज्ञान होय है और पीछैं मैं घट का ज्ञान वाला हूं ऐसैं
ुव्यवसाय ज्ञान होय है प्रथम ज्ञान मैं घट विषय है और द्वितीय ज्ञान
घट का ज्ञान विषय है ये सकल विद्वानों का अनुभव है यातैं अनुव्य-
ाय ज्ञान का विषय होणैं तैं व्यवसाय ज्ञान स्वप्रकाश नहीं हो सके

ओर अनुव्यवसाय ज्ञान कोई वी ज्ञान का विषय नहीं
है यातैं स्वप्रकाश अनुव्यवसाय ज्ञान मानैं हैं यातैं स्वप्रकाश
ज्ञान मानणाँ व्यर्थ न हुवा तो हम कहैं हैं कि अनुव्यवसाय
तैं स्वप्रकाश सिद्ध हुवा ये हम नैं वी अङ्गीकार किया परन्तु
जैसैं अनुव्यवसाय करिकैं ल्यायाँ जाय है तैसैं व्यवसाय ज्ञान
नाश किससैं जाणैं जाय हैं सो कहो ज्यो कहो कि इसका
यी मेरी दृष्टि मैं आया नहीं तो हम कहैं हैं कि न्याय की
कल्पना करि कैं निर्णय करो ज्यो कहो कि मैं घट का ज्ञान
अनुभव तैं घट के ज्ञानकूँ विषय करणैं वाला अनुव्यवसाय
होय है ओर घटका ज्ञान इस अनुव्यवसाय का विषय सिद्ध
मोकूँ घटका ज्ञान नहीं है इस अनुभव तैं घट के ज्ञान का
तिसकूँ विषय करणैं वाला ज्ञान का ज्ञान अनुव्यवसाय ज्ञा
है ओर घट के ज्ञान का ज्यो अभाव तिस का ज्ञान अनु
यव सिद्ध होय है अर्थात् जैसैं घट का ज्ञान व्यवसाय है ओर
का ज्ञान अनुव्यवसाय है तैसैं घट ज्ञान के अभाव का ज्ञान
ओर घट ज्ञान के अभाव के ज्ञान का ज्ञान अनुव्यवसाय है
साय ज्ञान के उत्पत्ति विनाशौं का ज्ञान व्यवसाय ज्ञान है
ज्ञान के उत्पत्ति विनाशौं के ज्ञान का ज्ञान अनुव्यवसाय है
हुवा कि व्यवसाय ज्ञान तो अनुव्यवसाय तैं जाणयाँ जाय है
ज्ञान के उत्पत्ति नाश व्यवसाय ज्ञान तैं जाणैं जाय हैं ये
नैं अनुभव तैं नहीं कही है काहे तैं कि यहाँ का अनुभव
किन्तु ये व्यवस्था न्याय की प्रक्रिया तैं कल्पना करिकैं कही
कहैं हैं कि तुमारा अनुभव बहुत ही शुद्ध है तुमकूँ आत्मज्ञान
मैं कुछ बी सन्देह नहीं है।

अब कहो तुमनै ज्यो व्यवस्था कही सो सर्व न्याय की
नहीं है अथवा इस मैं कुछ अंश अनुभवकूँ देखकरिकैं वी है
घट ज्ञान रूप व्यवसाय ज्ञान ओर इस ज्ञानकूँ विषय करणैं
व्यवसाय ज्ञान ओर व्यवसायज्ञानके उत्पत्ति विनाशौंका
तो मैंनैं अनुभव तैं मानैं हैं ओर अनुव्यवसाय ज्ञान स्वप्रकाश
मैंनैं अनुभव मैं मान्यों है परन्तु अनुव्यवसाय के उत्पत्ति ना

कहे वे और व्यवसाय ज्ञान के उत्पत्ति विनाशोँ के ज्ञान का ज्ञान और इस
ान तैं जाण्याँगया यातैं व्यवसाय ज्ञान के उत्पत्ति विनाशोंका ज्ञान व्य-
साय ज्ञान है ये तीनूँ कथन तो मैनैं न्याय शास्त्रकी प्रक्रिया तैं हीं
कये हैं ये कथन अनुभव तैं नहीं किये हैं काहेतैं कि आज के दिन तक
वसाय ज्ञान के उत्पत्ति विनाशोँ का ज्ञान व्यवसाय ज्ञान है अथवा
हीं और इस ज्ञानका यी ज्ञान होय है अथवा नहीँ और अनुव्यवसाय के
त्पत्ति विनाश होय हैं अथवा नहीं इस विचारका प्रसङ्ग तो आज
र्यन्त आया नहीं यातैं ये कथन तो केवल न्याय की प्रक्रिया तैं हीं है
नुभव तैं नहीं है तो हम कहैं हैं कि अब इसविचार का प्रसङ्ग है यातैं
ाय निर्णय करिकैं अनुभव करो।

ज्यो कहो कि निर्णय का प्रकार कहा है जातैं अनुभव होय तो
म कहैं हैं कि जहाँ पदार्थ का प्रत्यक्ष न होय तहाँ अनुमान तैं निर्णय
ाय ये तुम मानौं हो तो यहाँ अनुमान करो ज्यो कहो कि जैसैं व्यवसाय
ान ज्यो है सो ज्ञान है यातैं उत्पत्ति विनाश वाला है तैसैं अनुव्यवसाय
यो है सो यी ज्ञान है यातैं उत्पत्ति नाश वाला है और ज्यो उत्पत्ति
िनाश वाला नहीं है सो ज्ञान नहीं है जैसैं आकाश उत्पत्ति विनाशवाला
हीं है तो ये आकाश ज्यो है सो ज्ञान नहीं है ऐसैं अनुमान तैं अनुव्य-
साय के उत्पत्ति विनाश सिद्ध होय हैं तो हम कहैं हैं कि ये अनुमानतो
शुद्ध है काहेतैं कि तुम परमात्मा के ज्ञानकूँ नित्य मानौं हो तो विचार
देखो कि वो यी ज्ञान है और उत्पत्तिनाश वाला नहीं है और पट ज्यो
सो उत्पत्तिनाश वाला नहीं है ये नहीं है और ज्ञान नहीं है ये है अ-
ात् तुमारी अन्वयव्याप्ति का व्यभिचार परमात्मा के ज्ञान मैं है और व्य-
िरेकव्याप्ति का व्यभिचार पट मैं है यातैं ये अनुमान असङ्गत है ज्यो
हो कि इस अनुमान तैं अनुव्यवसाय के उत्पत्ति नाश सिद्ध न हुये तो
म ऐसा अनुमान करैंगे कि जैसैं व्यवसाय ज्ञान ज्यो है सो लौकिक
ान है यातैं उत्पत्ति नाश वाला है तैसैं अनुव्यवसाय ज्यो है सो
लौकिक ज्ञान है यातैं उत्पत्ति विनाश वाला है ऐसैं अनुमान करणैं तैं
श्वर के ज्ञान मैं हेतु का व्यभिचार नहीं है काहे तैं कि ईश्वर का ज्ञान
लौकिक है तो हम कहैं हैं कि ऐसैं व्यवसाय ज्ञानकूँ दृष्टान्त वणा
रिकैं अनुव्यवसाय के उत्पत्ति विनाशोंको अनुमान तैं सिद्ध किये सो

व्यवसाय ज्ञान के उत्पत्ति विनाशौंकूँ किस के दृष्टान्त तैं...
कहो कि अनुव्यवसायकूँ दृष्टान्त बणा करिकैं व्यवसाय...
विनाशौंकूँ सिद्ध करैंगे तो हम कहैं हैं कि ऐसें मानौं...
साय के उत्पत्ति विनाश सिद्ध करणैं मैं व्यवसायकी अपे...
साय के उत्पत्ति विनाशौंकूँ सिद्ध करणैं मैं अनुव्यवसाय...
अन्योन्य सापेक्ष होणैं तैं दोनूँ हीं ज्ञानौं के उत्पत्ति विन...
होसकैंगे।

ज्यो कहो कि दृष्टान्त ज्यो व्यवसाय उसके उत्पत्ति...
दूसरा व्यवसायकूँ दृष्टान्त वणाँ करि कैं सिद्ध करैंगे तो...
तुमारी बुद्धि विलक्षण है कि व्यवसाय ज्ञान के उत्पत्ति विना...
साय ज्ञान के दृष्टान्त तैं हीं सिद्ध करोहो ज्यो कहो कि...
उत्पत्ति विनाश तो प्रत्यक्ष सिद्ध हैं यातैं यहाँ अनुमान...
तो हम पूछैं हैं कि जिस ज्ञानकूँ तुमनैं अनुव्यवसाय मा...
हीं व्यवसाय के उत्पत्ति विनाशौंका ज्ञानरूप ज्यो व्यव...
प्रत्यक्ष मानौं हो अथवा उस अनुव्यवसाय तैं जुदा ही...
करी हो ज्यो कहो कि यहाँ तो बुद्धि व्याकुल है काहे तैं...
मैं तो व्यवसाय ज्ञान उत्पन्न होय है और द्वितीय क्षण...
तृतीय क्षण मैं उसका नाश होय है और व्यवसाय ज्ञान के...
मैं व्यवसाय ज्ञानकूँ विषय करणैं वाला अनुव्यवसाय...
और व्यवसाय ज्ञान के नाश क्षण मैं अनुव्यवसाय ज्ञान...
साय ज्ञान के नाशकूँ उत्पन्न करैहै और नाशकी उत्पत्ति...
वाला ज्ञान होय है और व्यवसाय ज्ञान के नाश के द्विती...
साय ज्ञान के नाशकूँ विषय करणैं वाला ज्ञान पैदा होय...
साय ज्ञान के नाशकूँ उत्पन्न करै है इस प्रक्रिया तैं...
स्थिति नाश मानैं हैं अब यहाँ ये विचार है कि जिस...
ज्ञान की उत्पत्ति भई उस क्षण मैं व्यवसाय ज्ञान थी है...
कारणरूप उसकी उत्पत्तियी है और अनुव्यवसाय का...
और द्वितीय क्षण मैं व्यवसाय ज्ञान थी है और अनुव्य...
प्रागभाव उसका नाश थी है और व्यवसाय की स्थिति...
अनुव्यवसाय थी है और उसकी उत्पत्तियी है और...

पद और न. शब्दका अर्थ [illegible]
नहीँ रहा कि अनुव्यवसाय ज्यो है सो केवल ज्ञानकूँ हीँ विषय क
ओर अनुव्यवसायके उत्पत्ति विनाश दीखैँ नहीँ ओर अनुमानतैं बी
होवैँ नहीँ यातैँ अनुव्यवसाय के उत्पत्ति नाश नहीँ हैँ यातैं ये ज्ञान
है ओर अनुव्यवसाय का प्रत्यक्ष दूसरे ज्ञानतैँ होवै नहीँ यातैँ ये स्व
है तो ये सिद्ध हुवा कि अनुव्यवसाय ज्यो है सो ज्ञान ओर अज्ञान
प्रकाश करणैँ वाला नित्य स्वप्रकाश ज्ञान है ओर यहाँ अनुमानतैं बी
व्यवसाय नित्य ही सिद्ध होय है जैसैँ परमात्मा का ज्ञान स्वप्रकाश है
नित्य है तैसैँ अनुव्यवसाय बी स्वप्रकाश है यातैँ नित्य है ये अनुभव
आकार है ।

ाय का ध्वंस वी है ओर इसकी उत्पत्तिकूँ विषय करणें वाला ज्ञानयी है
ार अनुव्यवसाय यी है ओर इसकी स्थिति क्रिया यी है ओर चतुर्थ क्षणमैं
ावसायका ध्वंस यी है ओर वसकूँ विषय करणें वाला ज्ञान यी है ओर
ानुव्यवसाय का नाश यी है ऐसें च्यार क्षणमैं चतुर्दश अर्थात् चोदह विष-
। हैं अब जितनें विषय हैं उतनें ज्ञान मानें सो तो बणसकै नहीं काहेतें
के न्यायका मत ये है कि एक क्षण में दो ज्ञान होवें नहीं ओर ज्यो च्यार
ाण में च्यार ज्ञान मानें तो उनके विषय चोदह हो सकें नहीं ओर ज्यो
े च्यारों ज्ञान समूहालम्बन मानें अर्थात् बहुतोंकूँ विषय करणें वाले मानें
ो प्रथम क्षण में तो व्यवसाय ज्ञान उत्पन्न होगया यातें दूसरा ज्ञान तो
होसकै नहीं ओर दूसरा ज्ञान नहीं होय तो व्यवसाय ज्ञानकी उत्पत्ति
ओर अनुव्यवसायका प्रागभाव ये किससें जाणें जायँ ओर द्वितीय क्षण मैं
अनुव्यवसाय ज्ञान होगया यातें दूसरा ज्ञान होसकै नहीं ओर ज्यो दूसरा
ज्ञान नहीं होय तो व्यवसाय ज्ञान तो अनुव्यवसाय तें जाण्यों जायगा
ओर अनुव्यवसाय स्वप्रकाश है यातें इसकूँ जाणणें के अर्थ दूसरे ज्ञानकी
अपेक्षा नहीं परन्तु अनुव्यवसाय के प्राग भावका नाश ओर व्यवसाय की
स्थिति ओर अनुव्यवसाय की उत्पत्ति ये किससें जाणें जाँयँ ओर तृतीय
ाणमैं व्यवसाय ज्ञान के ध्वंसकी उत्पत्तिकूँ विषय करणें वाला ज्ञान हुवा
ै यातें दूसरा ज्ञान होसकै नहीं ओर दूसरा ज्ञान नहीं होय तो अनुव्य-
ासाय तो स्वप्रकाश है यातें इसके जाणणें के अर्थ तो दूसरा ज्ञानकी अ-
ाेक्षा नहीं परन्तु व्यवसाय का ध्वंस ओर अनुव्यवसाय की स्थिति ये कैसें
ाणें जाँयँ ओर चतुर्थ क्षणमैं अनुव्यवसाय के नाशकी उत्पत्ति का ज्ञान
ुवा है यातें दूसरा ज्ञान होसकै नहीं ओर दूसरा ज्ञान नहीं होय तो
व्यवसायका ध्वंस ओर अनुव्यवसाय का नाश ये कैसें जाणें जाँयँ इस वि-
चार तें बुद्धि व्याकुल है यातें व्यवसायके उत्पत्ति विनाशों का ज्ञान अनु-
व्यवसाय ही है अथवा इससें जुदा है ये अनुभव नहीं होसकै ओर न्याय
ग्रन्थों में ये विचार न लिखा इसका कारण यी अनुभव में नहीं आवै है
ातें आप ही ऐसा निर्णय करो जिसतें मोकूँ इस विषय के सन्देह मिट
ािकै यथार्थ निश्चय होय तो हम कहैं हैं तुम ही अनुभवतें देखो तुमारे
अनुव्यवसायका आकार ये है कि मैं घटके ज्ञानवाला हूँ तो इस ज्ञानका
विषय केवल व्यवसाय ज्ञान ही नहीं है किन्तु व्यवसायमैं विशेषण ज्यो

घट और मैं, शब्दका अर्थ ज्यो आत्मा सो ये वी विषय हैं तो ये
नहीं रहा कि अनुव्यवसाय ज्यो है सो केवल ज्ञानकूँ हीं विषय
और अनुव्यवसायके उत्पत्ति विनाश दीखैं नहीं और अनुमानतैं
होवैं नहीं यातैं अनुव्यवसाय के उत्पत्ति नाश नहीं हैं यातैं ये प्र
है और अनुव्यवसाय का प्रत्यक्ष दूसरे ज्ञानतैं होवै नहीं यातैं ये
है तो ये सिद्ध हुवा कि अनुव्यवसाय ज्यो है सो ज्ञान और प्रका
प्रकाश करणें वाला नित्य स्वप्रकाश ज्ञान है और यहाँ अनुमानतैं
व्यवसाय नित्य ही सिद्ध होय है जैसें परमात्मा का ज्ञान स्वप्रकाश
नित्य है तैसें अनुव्यवसाय वी स्वप्रकाश है यातैं नित्य है ये अनु
आकार है।

और देखो कि न्यायके मतसें हीं सुषुप्तिमैं ज्ञान रहै है ये
है काहेतैं कि न्यायका मत ये है कि प्रत्यक्ष योग्य जे विभुके वि
उनका नाश उनके पीछैं होणें वाला ज्यो विशेष गुण उससें होयहै ये
यम है तो सुषुप्ति के अव्यवहित पूर्व क्षण मैं ज्यो ज्ञान उत्पन्न होता
का नाश सुषुप्तिके अव्यवहित उत्तर क्षणमैं ज्यो ज्ञान होयहै उससें
तो सुषुप्ति में ज्ञानका रहणाँ सिद्ध होगया परन्तु ये कथन अनुभवसें वि
है काहेतैं कि ज्यो सुषुप्ति मैं व्यवसाय ज्ञान रहै तो जाग्रत् में जैसे प्र
अज्ञान का स्मरण होय है तैसें इस व्यवसाय का वी स्मरण होय
सुषुप्ति मैं व्यवसाय ज्ञान माँनणाँ असङ्गत है।

एको वशी सर्वभूतान्तरात्मा एकं रूपं वहुधा
यः करोति तमात्मस्थंयेऽनुपश्यन्ति धीरास्तेषां सुखं
शाश्वतं नेतरेषाम् ॥

इसका अर्थ ये है कि ज्यो एक है और जगत् जिसके वश है और सर्व भूतन को अन्तरात्मा है और ज्यो एक रूपकूँ बहुत प्रकार करे है अपणें स्वरूप करिकैं स्थित देखैं हैं धीर पुरुष उनकै नित्य सुख है और कै नहीं ज्यो कहो कि चराचर मैं आत्मभाव होय है इसमें प्रमाण है तो हम कहैं हैं कि ईशावास्य उपनिषद् की ये है कि

यस्मिन्सर्वाणि भूतान्यात्मैवाऽभूद्विजानतः तत्र
को मोहः कः शोक एकत्वमनुपश्यतः ॥

इसका अर्थ ये है कि ज्ञानवान् कै जिस समयमैं सारे भूत आत्माहीं उस समय में ऐकपणाँ देखणैं वाला ज्यो है उसकैं शोक कहा और कहा ज्यो कहो कि जगत् परमात्मा हीं है तो हम परमात्माकूँ हीं हैं तो परमात्म बुद्धि न भई तो कहा हानि है तो हम कहैं हैं कि लकारोपनिषद् की ये श्रुति है कि

इह चेदवेदीदथ सत्यमस्ति नचेदिहावेदीन्महती
विनष्टिः भूतेषु भूतेषु विचिन्त्य धीराः प्रेत्याऽस्माल्लो
कादमृता भवन्ति ॥

इसका अर्थ ये है कि ज्यो यहाँ जाणैंगया तो सत्य रूप है ज्यो यहाँ जाणैंगया तो बड़ा नाश हुवा ज्ञानवान पुरुष सर्व भूतों मैं आत्मभाव णैं करिकैं जन्म मरण धर्म रूप इस लोककूँ छोड़ि करिकैं अमर होय हैं ो कहो कि इस ही उपनिषद्की ये श्रुति है कि

नतत्र चक्षुर्गच्छति न वाग्गच्छति नो मनो न
विद्मो न विजानीमो यथैतदनुशिष्यादन्यदेव तद्विदि-
तादथो अविदितादधि ॥

तुम मानौं हीतो उस आदि क्षण मैं उस आदि क्षणतैं जुदा , ...
और मानौं और प्रथम आदि क्षणका उस आदि क्षण सैं सम्बन्ध ...
नौं तब वो आदि क्षण सिद्ध होय सो तुम ऐसैं मानौं नहीं यातैं ...
सिद्ध हुया नहीं अब न तो आदिक्षणका सम्बन्ध सिद्ध हुवा और ...
क्षण सिद्ध हुया तो ज्ञानकी उत्पत्ति कैसैं मानी जाय ज्यो ज्ञानकी ...
सिद्ध न भई तो इसका नाश वी सिद्ध नहीं होगा काहेतैं कि तुमारा
नियम है कि भाव पदार्थ ज्यो उत्पन्न होय है उसका ही नाश होय है
तुम हीं विचार करो ज्ञानके उत्पत्ति विनाश कैसैं मानैं जाँयँ ।

ज्यो कहोकि ज्ञान ज्यो है सो शरीर मैं प्रतीत होय है बाहर ...
प्रतीत होवै नहीं तो परिछिन्नपरिमाणवाला होवौं तैं अनित्य है तो ...
कहैं हैं कि ये कथन तो तुमारे मतसैं हीं अशुद्ध है काहे तैं कि गुण मैं ...
रहै नहीं ये तुमारा नियम है तो तुमारे मतमैंज्ञान वी गुण है और ...
माण वी गुण है तो ज्ञानमैं परिमाण कैसैं रह सके ज्यो कहो कि ज्ञ...
उत्पत्ति विनाश दीसैं हैं यातैं इनका न मानणाँ कैसैं मान्याँ जाय तं...
कहैं हैं कि जैसैं आकाश मैं नीलरूप दीसे है और नहीं मानौं हो तैसैं
के उत्पत्ति विनाश दीसैं हैं यातैं इनका न मानणाँ मानौं ज्यो कहो
ज्ञान के उत्पत्ति नाश सिद्ध नहीं होवौं तैं ये नित्य सिद्ध हुवा और ...
तैं ये वी निश्चय होय है कि ये ही जीवात्मा का निज रूप है ...
सुषुप्तिमैं ये प्रतीत होवै नहीं और आप ऐसैं कहो हो कि सुषुप्ति मैं ...
ग्रन्थ के खण्डों मैं प्रमाण कहा है सो कहो तो हम कहैं हैं कि ...
निषद् मैं ।

एको वशी सर्वभूतान्तरात्मा एकं रूपं बहुधा यः करोति तमात्मस्थंयेऽनुपश्यन्ति धीरास्तेषां सुखं शाश्वतं नेतरेषाम् ॥

इसका अर्थ ये है कि ज्यो एक है और जगत् जिसके वश है और सर्व भूतन को अन्तरात्मा है और ज्यो एक रूपकूँ बहुत प्रकार करे है हूँ अपणेँ स्वरूप करिकैं स्थित देखैं हैं धीर पुरुष उनकै नित्य सुख है और कै नहीं ज्यो कहो कि चराचर मैं आत्मभाव होय है इसमैं प्रमाण है तो हम कहैं हैं कि ईशावास्य उपनिषद् की ये है कि

यस्मिन्सर्वाणि भूतान्यात्मैवाऽभूद्विजानतः तत्र को मोहः कः शोक एकत्वमनुपश्यतः ॥

इसका अर्थ ये है कि ज्ञानवान् कै जिस समयमैं सारे भूत आत्माहीं उस समय में ऐकपणाँ देखणेँ वाला ज्यो है उसकैं शोक कहा और कहा क्यो कहो कि जगत् परमात्मा हीं है तो हम परमात्माकूँ हीं हैं तो परमात्म बुद्धि न भई तो कहा हानि है तो हम कहैं हैं कि ऋकारोपनिषद् की ये श्रुति है कि

इह चेदवेदीदथ सत्यमस्ति नचेदिहावेदीन्महती विनष्टिः भूतेषु भूतेषु विचिन्त्य धीराः प्रेत्याऽस्माल्लोकादमृता भवन्ति ॥

इसका अर्थ ये है कि ज्यो यहां जाणेगया तो सत्य रूप है ज्यो यहां जाणेगया तो यहा नाश हुवा ज्ञानवान पुरुष सर्व भूतों में आत्मभाव करिकैं जन्म मरण धम रूप इस लोककूँ छोड़ि करिकैं अमर होय हैं कहो कि इस ही उपनिषद्की ये श्रुति है कि

नतत्र चक्षुर्गच्छति न वाग्गच्छति नो मनो न विद्मो न विजानीमो यथैतदनुशिष्यादन्यदेव तद्विदितादथो अविदितादधि ॥

इसका अर्थ ये है कि वहां चक्षु नहीं पहुंचे है वाणी नहीं है मन नहीं पहुंचे है नहीं जाणैं हैं कि परमात्मा ऐसा है जिस करिकैं शिष्यकूं उपदेश करै उस प्रकारकूं नहीं जाणैं हैं वो जाण्यां और न जाण्यां हुवातैं ऊपर है ज्यो इस श्रुतिका ये अर्थ हुवा तो मैं कूं कैसें जाण सकूं और न जाणूं तो पहिलैं ज्यो श्रुति आपनैं कही मैं न जाणणें वालेकी वड़ी हानि वताई है और ज्यो वो नहीं हीं जाता तो श्रुति ऐसैं न कहती कि

तमेव विदित्वाऽतिमृत्युमेति नान्यः पन्था विद्यतेऽयनाय ॥

इसका अर्थ ये है कि उस परमात्माकूं जाणैं हीं मोक्षकूं प्राप्त है और मार्ग मोक्ष मैं गमन का नहीं है और श्रीकृष्ण महाराजनैं अर्जुनकूं ऐसें आज्ञा किई है कि

तद्विद्धि प्रणिपातेन परिप्रश्नेन सेवया उपदेक्ष्यन्ति ते ज्ञानं ज्ञानिनस्तत्वदर्शिनः ॥

इसका अर्थ ये है कि नम्र हो करिकैं कोमल भावसैं प्रश्न करिकैं करिकैं ज्ञानके स्वरूपकूं जाणैं तत्व के देखणेंवाले ज्ञानी पुरुष तो उपदेश करैंगे और कठोपनिषद् की ये श्रुति है कि

नैषा तर्केण मतिरापनेया ॥

इसका अर्थ ये है कि ये आत्म ज्ञान केवल अपणीं बुद्धि करिकैं प्राप्त करवे योग्य नहीं है और केवल अपणैं तर्क करि कैं ये ज्ञान प्राप्त करवे योग्य नहीं है तात्पर्य ये है कि तार्किक पुरुष कहैं हैं कुछ ही कहै है और इस ही उपनिषद् की ये श्रुति है कि

अविद्यायामन्तरे वर्तमानाः स्वयन्धीराः पण्डितम्मन्यमानाः दन्द्रम्यमानाः परियन्ति मूढा अन्धेनैव नीयमाना यथान्धाः ॥

इसका अर्थ ये है कि अविद्या के मध्य में वर्त्तमान और आप में
र धीर हैं हम पण्डित हैं ऐसें अभिमान करैं वे अन्त्यन्त कुटिल और
नेक प्रकार की ज्यों गति उसकूं प्राप्त होते भये दुःखों करि कैं व्याप्त
य हैं जैसें अन्ध के आश्रय तैं चले हुये अन्ध और इस ही उपनिषद् की
श्रुति है कि

श्रवणायाऽपि वहुभिर्यो न लभ्यः श्रण्वन्तोऽपि
वहवो यन्न विद्युः आश्चर्यो वक्ता कुशलोऽस्य लब्धा-
ऽऽश्चर्यो ज्ञाता कुशलाऽनुशिष्टः ॥

इसका अर्थ ये है कि वहुत ऐसे हैं कि जिनकूं इसका श्रवण हीं
ाय नहीं और वहुत ऐसे हैं कि सुणैं हैं और इस आत्माकूं नहीं जाणैं
ओर इसका कहणै वाला आश्चर्य है अर्थात् हजारों मैं कोई ही कहणै
ाला है और निपुण आचार्य तैं उपदेश लिया हुआ इस आत्माका जा-
नैं वाला आश्चर्य है अर्थात् कोई ही जाणैं हैं और श्री कृष्ण महाराज नैं
ो ऐसें आज्ञा किई है कि

मनुष्याणां सहस्रेपु कश्चिद्यतति सिद्धये यतताम-
पि सिद्धानां कश्चिन्मां वेत्ति तत्वतः ॥

इसका अर्थ ये है कि हजारों मनुष्यों में कोई पुरुष ज्ञान के होणै
ा यत्न करै है और यत्न वाले जे वहुत तिन मैं कोई पुरुष मेरेकूं तत्व
रूप तैं जाणैं है तो

न तत्र चक्षुः ॥

ये ज्यो श्रुति सो तो आत्मा नेत्रवाणी मन इनका विषय नहीं है
ये कहै है और

इह चेदवेदीत् ॥

ये श्रुति ज्ञान भये के विना अति ही हानि वतावै है और

तमेव विदित्वा ॥

ये श्रुति ज्ञानकूं ही परम कल्याणका मार्ग वतावै है और

तद्विद्धि ॥

ये स्मृति ज्ञान होवै है ऐसें कहै है और

नैषा तर्केण ॥

ये श्रुति अपणीं बुद्धि तैं ज्ञानकी प्राप्तिका निषेध करै है अ

अविद्यायामन्तरे ॥

ये श्रुति अज्ञानीके किये उपदेश तैं ज्ञान होवै नहीं ऐसें
है और

श्रवणायापि बहुभिः॥

ये श्रुति ज्ञानके उपदेश कर्त्ता और उपदेश करिकैं जिनकूं
होवै उन पुरुषोंकूं दुर्लभ बतावै है तो मोकूं आत्म ज्ञानकी प्राप्ति
होय मोकूं तो ज्ञानकी प्राप्ति असाध्य दीखै है यातैं मैं अति ही
हूं सो कृपा करिकैं ऐसो उपदेश करो कि जिस तैं आत्मज्ञान हो
मैं कृतार्थ होवूं ।

तो हम कहैं हैं कि

नाऽविरतो दुश्चरितात् नाऽशान्तो नाऽसमाहित
नाऽशान्तमानसो वापि प्रज्ञानेनैनमाप्नुयात् ॥

ये कठोपनिषद् की श्रुति है इसका अर्थ ये है कि ज्यो पाप
को त्याग न करै जिसके इन्द्रिय चञ्चल होंय जिसका मन एकाग्र न
जिसका मन विषयों तैं हटै नहीं वो इस आत्माकूं नहीं जाणै
और ज्यो इन दोषूं करिकैं रहित होय वो इसकूं जाणै है यातैं ज्यो
की इच्छा होय तो इन दोषूंका त्याग करै और इस ही उपनि
ये दोय श्रुति हैं कि

सत्वं प्रियान् प्रियरूपा थँ श्च कामानभिध्यायन्
नचिकेतोऽत्यस्राक्षीः नैता थँ सृङ्कां वित्तमयीमवाप्तो
यस्यां मज्जन्ति बहवो मनुष्याः ? दूरमेते विपरीते विषूची

अविद्या या च विद्येति ज्ञाता विद्याभीप्सिनं नचिकेतसं मन्ये न त्वा कामा वहवो लोलुपन्तः २॥

इनका अर्थ ये है कि पुत्रादिकोंकूं ओर देवाङ्गनादिकोंकूं अनित्यादि दोषूं करिकैं युक्त चिन्तन करता हुवा हेनचिकेतः तैंनें त्याग किये जो तू धन रूप ज्यो अधम मार्ग ताकूं प्राप्त न हुवा जिसमैं बहुत मनुष्य दुःख पावैं हैं १ जे ये अविद्या ओर विद्या हैं ते तम ओर प्रकाश की तरैंह विपरीत स्वभाव वाली हैं ओर संसार ओर मोक्ष ये इन के भिन्न फल हैं ज्यो नचिकेता है तिसकूं विद्याकी कामना वाला मानूं हूं काहेतैं कि बहुत विषयों नैं तेरे लोभ पैदा न किया २ तो इन श्रुतियोंका ये तात्पर्य हुवा कि विषयोंकी कामना वाला ज्यो पुरुष सो ज्ञानका अधिकारी नहीं है यातैं ज्यो ज्ञान होय ऐसी इच्छा होवे तो विषयोंकी आसक्ति को त्याग करै ओर इस ही उपनिषद्की ये श्रुति है कि

न नरेणाऽवरेण प्रोक्त एष सुविज्ञेयो वहुधा चिन्त्यमानःअनन्य प्रोक्ते गतिरत्र नास्त्यणीयान् ह्यतर्क्यमणुप्रमाणात् ॥

इसका अर्थ ये है कि ओर पुरुष करिकैं कहा हुवा ये आत्मा नहीं पाया जाय है काहे तैं कि वादी पुरुष आत्मा है आत्मा नहीं है आत्मा शुद्ध है आत्मा अशुद्ध है आत्मा कर्त्ता है आत्मा अकर्त्ता है ऐसें बहुत प्रकार करिकैं चिन्तन करे है ओर आत्मातैं भिन्न दृष्टि जिसकी नहीं ऐसे आचार्यका कहा ज्यो आत्मा उसमैं है नहीं है इत्यादिक अनेक प्रकारकी चिन्ता गति नहीं है काहेतैं कि आत्मा सर्व विकल्पों करिकैं रहित है ये आत्मा तो अणुपरिमाणतैं भी अणु है अर्थात् ज्यो अणुपरिमाण कोई वादी कल्पित करै है तो अन्य वादी उसमैं भी अन्य अणुकी कल्पना करे है यातैं आत्मा अणुतैं भी अणुहै इस कथनका तात्पर्य ये है कि आत्मा अतर्क्य है तो इस श्रुतिसें ये सिद्ध हुवा कि अनात्मज्ञानीके उपदेश करिकैं आत्म ज्ञान नहीं होय है आत्म ज्ञानीके उपदेश करिकैं आत्मज्ञान होय है यातैं तर्कका त्याग करिकैं अद्वैतदृष्टि आचार्यके उपदेश करिकैं आत्मज्ञान सिद्ध करणा ओर इस ही उपनिषद्की ये श्रुति है कि

तनके पास जाय तो आपके उपदेश करिकैं मेरे हृदयके सन्देह दूर होय
। यातैं आप ही उपदेश करो तो प्रारम्भ मैं उपदेश किया उसकूँ स्मरण
रो ज्यो कहो कि पूर्व आपनैं ज्ञातताका प्रकाशक चैतन्य अपणाँ निज रूप
ताया सो तो स्मरण मैं हैं परन्तु

न तत्र चक्षुः ॥

ये श्रुति आत्माके जाणणैंका सर्वथा निषेध करै है यातैं सन्देह होय
है तो हम कहैं हैं कि ये श्रुति सर्वथा जाणणैंका निषेध नहीं करै है विचार
करो कि ये ही श्रुति

अन्यदेव तद्विदितादथो अविदितादधि ॥

ऐसैं कहै है तो इसका अर्थ ये है कि यो आत्मवस्तु जाणयाँ गया
और न जाणयाँ गया तैं ऊपर है तो इसका तात्पर्य ये हुवा कि जाणयाँ-
गयापणाँ और न जाणयाँगयापणाँ ये जिससैं जाणैं जाय हैं सो अपणाँ
निज रूप है ।

ज्यो कहो कि इस निज रूपका अनुभव कँहाँ करूँ तो हम कहैं हैं
। इस ही उपनिषद्की ये दोय श्रुति हैं कि

इन्द्रियेभ्यः परं मनो मनसःसत्वमुत्तमम् सत्वा-
दधि महानात्मा महतोऽव्यक्तमुत्तमम् १ अव्यक्तात्तु
परः पुरुषो व्यापकोऽलिंग एव च यज्ज्ञात्वा मुच्यते
जन्तुरमृतत्वंच गच्छति २ ॥

इनका अर्थ ये है कि इन्द्रियाँतैं उत्कृष्ट मन है मनतैं उत्तम बुद्धि है
बुद्धितैं उत्तम अन्तःकरण है अन्तःकरणतैं उत्तम प्रकृति है १ प्रकृतितैं उत्तम
आत्मा है सो व्यापक है और अलिङ्ग है अर्थात् बुद्ध्यादिक जे सकल संसार
के चिन्ह तिन करिकैं रहित है इस आत्माकूँ जाणैं करिकैं जीता हुवा ही मुक्त
होय है २ सो इन श्रुतियाँका ये तात्पर्य्य हुवा कि अज्ञानका प्रकाशक
अपणाँ निज रूप है यातैं अज्ञानतैं परैं इसकूँ जाणों ज्यो कहो कि इसकूँ
कैसैं जाणैं तो इस ही उपनिषद्की ये श्रुति है कि

न तत्र सूर्यो भाति न चन्द्रतारकं नेमा विद्युतो भान्ति कुतोऽयमग्निः तमेव भान्तमनुभाति सर्वं तस्य भासा सर्वमिदं विभाति ॥

इसका अर्थ ये है कि तहाँ सूर्य नहीं प्रकाश करै है चन्द्रमा नहीं प्रकाश करैं हैं ये विजली नहीं प्रकाश करै है ये अग्नि तो प्रकाश करै यो आप प्रकाश रूप है उसके पीछैं सर्व प्रकाश करैं हैं जैसें अग्निके जलणें तैं सर्व जलैं हैं तैसें इसके प्रकाश करणें तैं प्रकाशैं हैं तो इस श्रुतिका ये तात्पर्य हुवा कि आत्मा अपणें तैं ही जाण्या जाय है इसके जाणणें मैं अन्यकी अपेक्षा नहीं ज्यो कहो कि अन्य करिकैं नहीं जाण्यां जाय है स्वप्रकाश है तो ये सिद्ध हुवा कि नजाण्यांगयापणां करिकैं जाण्यां जाय है तो हम कहैं हैं कि आत्म जाणणां ये ही है ये नजाण्यांगयापणां ज्यो है सो स्वप्रकाशपणां है तवल्कारोपनिषद् की श्रुति यहाँ प्रमाण वी है कि

यस्याऽमतं तस्य मतं मतं यस्य न वेद सः अविज्ञातं विजानतां विज्ञातमविजानताम् ॥

इसका अर्थ ये है कि जिसके ब्रह्म न जाण्यां हुया है ये निश्चय उसनैं हीं जाण्यां है ये निश्चय है और जिसके मैंनैं ब्रह्म जाण्यां है ये निश्चय है यो ब्रह्मकूं नहीं जाणता है ये ब्रह्म न जाणणें वाले के जाण्यां हुया और जाणणें वाले के न जाण्यां हुया है परन्तु ये ब्रह्म इस प्रकार भी नहीं है यातैं इस ही उपनिषद्की ये श्रुतियों प्रमाण हैं कि

यद्वाचाऽनभ्युदितं येन वागभ्युद्यते तदेव ब्रह्म त्वं विद्धि नेदं यदिदमुपासते १ यन्मनसा न मनुते येनाहुर्मनो मतम् तदेव ब्रह्म त्वं विद्धि नेदं यदिदमुपासते २ यच्चक्षुषा न पश्यति येन चक्षूंषि पश्यन्ति तदेव ब्रह्म त्वं विद्धि नेदं यदिदमुपासते ३ यच्छ्रोत्रेण न शृणोति येन श्रोत्रमिदं श्रुतम् तदेव ब्रह्म त्वं विद्धि नेदं यदिदमुपासते ४ यत्प्राणेन न प्राणिति येन प्राणः प्रणीयते तदेव ब्रह्म त्वं विद्धि नेदं यदिदमुपासते ५ ॥

इन श्रुतियोंका ये तात्पर्यार्थ है कि ज्यो वाणीका मनका चक्षुका
त्रका प्राणका प्रकाश करै है सो ब्रह्म है ऐसैं जाणोँ और ज्यो तू इससैं भिन्न-
उपासना करै है सो ब्रह्म नहीं है ।

ज्यो कहो कि मैं ज्यो यहाँ प्रश्न करूँ हूँ ताके उत्तर मैं आप श्रुति
पढ़ो हो इसका कारण कहा है तो हम कहैं हैं कि इस विषय मैं न्या-
के पढे हुये पण्डित कै अनुभव नहीं है यातैं श्रुतियों करिकैं कथनकूँ
माण बताया है ज्यो कहो कि मेरा अनुभव शुद्ध कैसैं होगा तो हम कहैं
कि ब्रह्माभ्यास तैं अनुभव शुद्ध होगा यातैं ब्रह्माभ्यास करो ज्यो कहो कि
ह्माभ्यासका स्वरूप कहा है तो हम कहैं हैं कि

तच्चिन्तनं तत्कथनमन्योन्यं तत्प्रबोधनम् एत-
देकपरत्वं च ब्रह्माभ्यासं विदुर्बुधाः ॥

ऐसैं वेदान्त ग्रन्थों मैं लिखा है इसका अर्थ ये है कि उसहीका
चिन्तन करै उसहीका कथन करै उसहीका आपस मैं विचार करै उसही
मैं चित्तकूँ एकाग्र राखै इसकूँ ज्ञानी पुरुष ब्रह्माभ्यास कहैं हैं ।

अब कहो तुम नैं जिनकूँ द्रव्य मानैं उनमैं तैं एक बी सिद्ध न हुया
यातैं इनका मानणाँ व्यर्थ हुवा अथवा नहीं ज्यो कहो कि परमात्मा तो
सिद्ध हुया यातैं सर्वका मानणाँ व्यर्थ न हुया किन्तु आत्मा तैं व्यतिरिक्त
जे द्रव्य उनका मानणाँ व्यर्थ हुवा तो हम कहैं हैं कि परमात्मा ज्यो है
द्रव्य सिद्ध न हुया यातैं द्रव्योंका मानणाँ व्यर्थ ही हुवा ज्यो कहो कि
आत्मा इस शब्दका अर्थ ये है कि परम कहिये उत्कृष्ट ऐसा ज्यो आ-
ा सो परमात्मा तो इस प्रकार अर्थ के होखे तैं ये सिद्ध होय है कि
उत्कृष्ट आत्मा कोई और है सो कोन है ये कहो तो हम कहैं हैं कि
हाँ कोई कल्पना करिकैं अनुत्कृष्ट आत्मा बणाय लेयो ज्यो कहो कि
अनुव्यवसाय जिसकूँ मान्यौं सो तो नित्यज्ञान रूप परमात्मा सिद्ध हो गया
और व्यवसाय ज्ञान जिसकूँ मान्यों सो अनुव्यवसाय रूप सिद्ध हो गया और
इतैं जुदा ज्ञान कोई है नहीं तो मैं किसकूँ अनुत्कृष्ट आत्मा कल्पना
करूँ तो हम कहैं हैं कि मन जब पुरीतति मैं तैं बाहिर आया तब मनका
और चर्मका संयोग तो तुम मानों हाँ गे काहेतैं कि तुम पुरीतति मैं हीं चर्म
नहीं मानों हो उसके बाहिर तो चर्म मानों हाँ हो तो उस समय मैं ज्यो

चर्ममनका संयोग होगा सो जब तक जाग्रत् अवस्था रहैगी तब तक
काहेतें कि पुरीतति के बाहिर इस शरीर मैं तुम कोई बी देश ऐसा
मानौं हो कि जहाँ चर्म न होय अब विचार करो कि न्यायके मतमैं
मनका संयोग ज्ञानसामान्यका कारण है तो जब तक जाग्रत् अवस्था र
गी तब तक ज्ञान सामान्य रहैगा और जब विषयका सन्निधान हं
विशेष ज्ञान होगा तो ज्यो तुम ज्ञान रूप आत्मा मानौं तब तो
सामान्यकूँ आत्मा मानौं और ज्यो तुम ज्ञानका आश्रय आत्मा म
जिसमैं इस ज्ञान सामान्यकूँ रक्खो वो आत्मा कल्पित करि लेवो
अनुरूप आत्मा हो जायगा ।

ज्यो कहो कि जैसैं घटसामान्यके प्रति दण्डसामान्य
और घटविशेषके प्रति दण्डविशेष कारण है तैसैं हीं ज्ञानसामा
प्रति चर्ममनःसंयोगसामान्य कारण है और ज्ञान विशेषके प्रति
मनःसंयोगविशेष कारण है तो सामान्य ज्यो है सो विशेष तैं भि
है यातैं ज्ञान सामान्य ज्यो है सो ज्ञान विशेष तैं भिन्न न हुया तो
विशेष व्यवसाय ज्ञान ही है उसका अनुव्यवसाय सैं अभेद सिद्ध हो
यातैं जिसकूँ आपनैं ज्ञान सामान्य कहा उसकी सिद्धि नहीं होवै
सामान्यज्ञानकूँ अथवा उसका आश्रय कल्पित करैं उसकूँ अनुरूप
त्मा कैसैं मानैं तो हम कहैं हैं कि चर्ममनःसंयोगविशेष ज्यो तुम
हो सो इन्द्रिय देशमैं चर्ममनका संयोग होय है उसकूँ मानोंगे
विशेषज्ञानका कारण होगा जैसैं चक्षुर्देश मैं ज्यो चर्म है उससैं म
संयोग सो तो चाक्षुष ज्ञानका कारण होगा और रसनदेश मैं ज्यो
उससैं मनका संयोग ज्यो होगा सो रासन प्रत्यक्षका कारण होगा
न्य प्रत्यक्ष जे होय हैं तिनमैं जुदे जुदे इन्द्रियोंके देशों मैं जुदे जुदे
संयोग कारण होंगे और सुखादिकोंके प्रत्यक्ष मैं जे चर्म मनः संयोग
वे सुखादिकों के प्रत्यक्षों मैं कारण होंगे अब पुरीतति के बाहिर
मन जावैगा तो जाग्रत् अवस्था जब तक बनी रहैगी तब तक
संयोग बना हीं रहैगा तो विषय जब कोई बी नहीं होंगे उस समय
बी ज्ञान नहीं है ऐसैं कहवो तो बनैं नहीं काहेतैं कि ज्ञान न है
शरीर अङ्गुलि भी गिर जाय है तैसैं गिर जाय गो शरीर गिरै
वे बी कोई विलक्षण ज्ञान है ऐसैं मानौं इसकूँ हमनैं ज्ञान

रेकैं कहा है ये ज्ञान तुमारे मानें सामान्य ज्ञान और विशेषज्ञानतैं वि-
लण है ज्यो कहो कि न्याय के मतमैं निर्विषयक ज्ञान मान्यां नहीं यातैं
शेष ज्ञानोंके अभावोंकूं इस ज्ञान के विषय मानि लेवैंगे तो ये विशेष
न हीं होगा ये विलक्षण ज्ञान कैसें मान्यां जाय तो हम कहैं हैं कि
ज्ञान अभावोंकूं विषय नहीं करै है और भावोंकूं भी विषय नहीं करै
से तूष्णीम्भाव नाम ज्यो अवस्था होय है उस समयका ज्ञान है देखो
न्यायके मतमैं कितनी भूल है कि जिस ज्ञानका मानणां न्यायके मतसें
हैं अशुद्ध है ऐसे व्यवसायज्ञानकूं तो मानैं है और जिस ज्ञानका मानणां
न्यायके मतसें बणि सकै है ऐसे तूष्णीम्भाव नाम अवस्थाके ज्ञानकूं
नहीं मानैं है।

ज्यो कहो कि व्यवसाय ज्ञानका मानणां कैसें असङ्गतहै तो हम कहैं
के व्यवसाय ज्ञान नाम करिकैं रूप रसादिकोंके ज्ञानोंकूं न्याय शास्त्र मैं
हैं और चर्ममनःसंयोगकूं तो ज्ञानसामान्यका कारण मान्यां है
जुदे जुदे इन्द्रियोंके संयोगकूं ज्ञानविशेषोंके कारण मानैं हैं और
विशेषकी उत्पत्ति सामान्यज्ञानके कारण और विशेष ज्ञानके का-
इन दोनूं तैं मानैं हैं तो जब चक्षु तैं घटका ज्ञान होगा तब चक्षु
मन इनका संयोग और चर्म और मनका संयोग ये दोनूं कारण होंगे
यह नहीं काहेतें कि न्यायके मतमैं मन सावयव नहीं है ज्यो मन
वयव होता तब तो कोई अवयव सैं चर्म संयुक्त हो जाता और कोई
वयव सें चक्षुतैं संयुक्त हो जाता और न्यायके मतमैं चर्म और चक्षु
वयव नहीं हैं ज्यो चर्म और चक्षु ये निरवयव होते तो निरवयवका
योग देशका अवरोधक नहीं होय है यातैं चर्मका और मनका तथा
चक्षुका और मनका संयोग हो जाता तो विशेष ज्ञान जिसकूं मान्यां उस-
उत्पत्ति हो जाती परन्तु न तो एक काल मैं मनका संयोग चर्म और
तैं हो सकै और नैं चर्मका और चक्षुका संयोग मनतैं ही सकै तो
ष ज्ञानके कारण नहीं होवैं तैं विशेष ज्ञानकी उत्पत्तिका मानणां
सङ्गत ही है और तूष्णींभाव अवस्था मैं ज्यो ज्ञान यो केवल चर्ममनके
योग तैंहीं होय है यातैं इसका मानणां असङ्गत नहीं है और ज्यो
नैं ज्ञान सामान्य ज्यो है सो ज्ञान विशेषतैं भिन्न न हुवा ऐसा कथन
या सो असङ्गत है काहेतें कि ज्ञान सामान्य ज्यो है सो ज्ञान विशेषरूप

होय तो ज्ञान विशेषका नाश भयें तैं सामान्यना ... ... और ज्ञानविशेष ज्यो है सो ज्ञानसामान्यरूप ही है काहेतैं कि सामान्यके नाश भयें ज्ञान विशेष रहै नहीं ज्यो कहो कि ज्ञान ज्ञान सामान्यरूप है तो इसमैं ज्ञानसामान्य व्यवहार होणां चाहिये हम कहैं हैं कि विषयके सन्निधान सैं ज्ञानसामान्य मैं विशेषपणों ... पित है सो सामान्यपणांका आवरण कर राख्या है यातैं ज्ञान विशे ज्ञानसामान्यपणांका भान होवै नहीं।

विचार दृष्टि तैं देखो कि ज्ञान रूप परमात्माका कैसा प्रती महिमा है कि जिसके निज रूपका आवरण करणेंका सामर्थ्य कोई बी ... राखै है देखो वेदान्तियों नैं बी जिस अज्ञानकी कल्पना किई है वो इसके आवरण करणेंका सामर्थ्य नहीं राखै है ज्यो अज्ञान इस ज्ञान परमात्माका आवरण करि लेवै तो आकारवालापणां तो किसमैं ... करै और आप कैसें सिद्ध होय और ये ज्ञान रूप परमात्मा कैसा है आपतैं विरुद्ध ज्यो अज्ञान ताकूं बी सिद्ध करै है और इसके सम्बन्ध तैं ... आकारवाला दीखै है और इसके सम्बन्ध विना आप निराकार रहै है ... कहो कि इसमैं दृष्टान्त कहा है तो हम कहैं हैं कि स्वाज्ञान शब्द ही ... न्त है देखो ये पद स्व और अज्ञान इन दोय शब्दोंका बणाया हुवा ... अज्ञान शब्द ज्ञान शब्द विना सिद्ध होवै नहीं तो वाच्य वाचकके अभे ... सैं ज्ञान शब्द परमात्मा ही है तो इसनैं ही अज्ञानकूं सिद्ध किया है ... अज्ञानशब्द मैं ज्ञान शब्द न रहै तो अज्ञान शब्द बणैं ही नहीं और स्व ज्यो है सो परमात्माका वाचक है तो वाच्यवाचक के अभेद ... स्व शब्द परमात्माही है तो देखो स्वशब्द निराकार है अर्थात् ... आकार नहीं है किन्तु अकार है तो स्वशब्द निराकार है और अ शब्दका इससें सम्बन्ध होय है तब ये स्वशब्द आकार वाला दीखै है ... स्वाज्ञान इस शब्द मैं स्वशब्द आकार वाला है अकार वाला नहीं है ... स्वाज्ञान इस शब्द मैं तैं अज्ञान शब्दकूं दूर कर देवैं तो स्व शब्द नि... रहिजावै है अर्थात् स्वशब्द आकारवाला नहीं रहै है ये दृष्टान्त ... स्व विद्याके जाणनें वाले जे पुरुष तिनके हृदय मैं उत्पन्न हो ... कैसा और उदार भूमि को सरैहैं तिनकी ... बुद्धि है ... दृष्टान्त बोध आनन्द ... कहैं नहीं।

अब कहो तूष्णीम्भाव नाम अवस्था मैं विशेष ज्ञानतैं विलक्षण ज्ञान
मान्य सिद्ध हुवा अथवा नहीं ज्यो कहो कि युक्ति और अनुभवतैं येज्ञान-
मान्य सिद्ध हुवा और विशेष ज्ञानतैं विलक्षण वी हुआ परन्तु न्यायशास्त्र
व्यवसाय ज्ञान और अनुव्यवसाय ज्ञान इनतैं विलक्षण ज्ञानमान्यों
हीं यातैं हम इसकूं नित्य स्वप्रकाश ज्ञान ज्यो आपनैं पूर्व सिद्ध कि-
है तद्रूप मानैं गे और अवस्था भेद तैं इस मैं भेद है स्वरूप तैं भेद
हीं ऐसें मानैं गे तो हम कहैं हैं कि मनका मानणाँ व्यर्थ हुवा काहे तैं
क आत्मा मैं ज्ञानकी उत्पत्तिके अर्थ तुमनैं मनकूं मान्यों है सो ज्ञान
। नित्य सिद्ध होगया आत्मा इस सैं जुदा सिद्ध हुवा नहीं और ज्यो इस
ान मैं हीं मनका संयोग मानि करि कैं कोई अनित्य ज्ञानकी कल्प-
। करि लेवो सो बणैं नहीं काहे तैं कि मन तो तुमारे मत मैं द्रव्य है
ौर ज्ञान ज्यो है सो गुण है इनका संयोग वर्णं सकै नहीं द्रव्योंका ही
ंयोग होय है ये न्यायवालोंका नियम है यातैं मनका मानणाँ व्यर्थ
ी है।

और कहो कि तुम चर्म और मनके संयोग करिकैं आत्मा मैं ज्ञान
ी उत्पत्ति मानों हो तो ये कहो कि सुषुप्तिके अव्यवहित उत्तर क्षण मैं
ाथम चर्म सैं मनका संयोग कैान से देश मैं होय है चर्म तो पुरीतति के
िना सर्व शरीर मैं है ज्यो कहो कि मनके प्रथम संयोगका देश तो
ोलखा नहीं तो हम कहैं हैं कि कोई देश मानि लेवो तो मन तुमारे मत
ैं परमाणु रूप है तो ये मन जिस देश मैं चर्म सैं संयुक्त होगा उस ही
ेश मैं आत्मा मैं ज्ञानकूं पैदा करेगा अथवा अन्य देश मैं वी ज्ञानकूं
ैदा करैगा ज्यो कहो कि उस ही देश मैं ज्ञानकूं पैदा करैगा तो हम
हैं हैं कि ऐसें मानणों तो असङ्गत है काहे तैं कि ज्ञानकी प्रतीति सर्व
ारीर मैं होय है ज्यो कहो कि अन्य देश मैं वी ज्ञानकूं पैदा करै है तो
हम कहैं हैं कि आत्मा तुमारे मत मैं व्यापक है यातैं पटदेश मैं वी
ज्ञानकी प्रतीति होणीं चाहिये ज्यो कहो कि जितने देश मैं चर्म है तत-
े मैं ज्ञानकूं पैदा करै है जैसें पृथ्वी पटके पैदा करणेके योग्य है पर-
ंतु जितने देश मैं स्निग्ध है अर्थात् चिकणीं है उस सैं हीं पट होय है
ो हम कहैं हैं कि पृथ्वीकूं तो तुम सावयव मानों हो यातैं कोई देश
ो पट होणे के योग्य मान सकोगे और कोई देश पट होणे के अयोग्य

ये देखो कि वेदमैं परमाणु किसकूँ कहा है ज्यो वेदकूँ देखते हैं ते
पनिषद्की ये श्रुति है कि

अणोरणीयान् महतो महीयान् नात्मास्ति ज
निहितो गुहायाम् तमक्रतुः पश्यति वीतशोको
धातुः प्रसादान्महिमानमात्मनः ॥

इसका अर्थ ये है कि ये आत्मा ज्यो है सो अणुतैं अणु है म
महान् है ब्रह्माकूँ आदि लेकरिकैं तृण पर्यन्त ज्यो है ताके हृदयमैं नि
अर्थात् सर्व को आत्मा है जब पुरुष निष्काम होय है और शोक
रहित होय है तब इन्द्रियोंके प्रसादतैं इस आत्माकूँ जाणैं है अ
महिमाकूँ जाणैं है और अन्य उपनिषदों की ये दोय श्रुतियाँ हैं कि

एषोऽणुरात्मा चेतसा वेदितव्यः ॥

और

सूक्ष्मात् सूक्ष्मतरं नित्यम् ॥

इनका अर्थ ये है कि ये अणु आत्मा चित्ततैं जाणयौं जाय
सूक्ष्मसैं अति सूक्ष्म है नित्य है तो परमाणु आत्मा हुया अब वि
करो कि गौतमजीनैं मूल उपादान कारण परमाणु मान्याँ है तो प
मूल उपादान कारण हुया तो इससैं ही कार्यद्रव्योंकी उत्पत्ति मा
अब विचार करो कि कार्य ज्यो है सो अपणैं उपादान कारणतैं भि
होवै नहीं जैसैं कपालतैं घट होय है तो कपाल उपादान है सो पृ
तो घट कार्य है सो भी पृथ्वीही होय है तैसैं परमाणु परमात्मा इ
हुया तो कार्य इसमैं विजातीय कैसैं होसकै यातैं कार्य द्रव्य मात्र प
त्मा ही भये और

नेह नानास्ति किञ्चन ॥

ये श्रुति है इसका अर्थ ये है कि यहाँ नाना कुछ नहीं है तो
श्रुति में कार्योंका निषेध सिद्ध होय है और गौतमजीका असत्कार्य
वाद है इसका तात्पर्य ये है कि कारण में नहीं वर्तमान ही कार्य उत्पन्न
है अर्थात् कपालादिक जे हैं उन में घटादिक कार्य नहीं हैं वे ही उ
[illegible] हैं तो जैसे मृत्तिका थी है सो घट हुया है तो घट मृत्तिका है
उपादान में असत् अर्थात् नहीं है सो कार्य हुया है तो कार्य [illegible]

ही है अर्थात् कार्य नहीं रूप ही है तो गौत्तमजी महाराजके मत तैं ये सिद्ध हुवा कि जैसें सामान्य उपादान ज्यो मृत्तिका तातैं जे कार्य भये हैं ते मृत्तिका रूप ही हैं तैसें ही सारे कार्योंका सामान्य उपादान कारण परमाणु है अर्थात् परमात्मा हीं है तो सारे कार्य सामान्य उपादान रूप ही हैं अर्थात् परमात्मा हीं हैं अब तुम अपणें अनुभव तैं देखो सामान्य उपादानका ये स्वभाव है कि अपणें स्वरूप तैं वणाँ हीं रहै है जैसें घटादिक जे कार्य द्रव्य हैं उनका सामान्य उपादान मृत्तिका है तो घटादिकोंके आदि मध्य अन्त मैं मृत्तिका वर्णीं हीं रहै है तैसें कार्य द्रव्य मात्रका सामान्य उपादान परमाणु है अर्थात् परमात्मा है तो कार्य द्रव्योंके आदि मध्य अन्त मैं परमात्मा वणाँ हीं रहै है और जैसें घटादि कार्यावस्था मैं मृत्तिका रूप सामान्य उपादान हीं घटादि रूप प्रतीत होय है तैसें हीं कार्यद्रव्य मात्रावस्था मैं परमाणु कहिये परमात्म रूप ही सामान्य उपादान कार्यद्रव्यमात्र रूप करि कैं प्रतीत होय है तो गौत्तमजीका मत और श्रुति इनकी ऐकार्थकता तैं ये सिद्ध होगया कि कार्य द्रव्य सारे परमात्मा ही हैं ये ही गौत्तमजीका अभिप्राय है सो ये अभिप्रायतो परमाणुकूँ मूल उपादान मान्याँ यातैं सिद्ध हुवा ।

और गौत्तमजी नैं असत्कार्यवाद मान्याँ तो ये सिद्ध हुवा कि जैसें मृत्तिका घट होय है तो घट मृत्तिका ही है तैसें असत् कार्य होय हैं तो कार्य असत् ही हैं ज्यो कहो कि ऐसें गौत्तमजीका अभिप्राय मानणें तैं तो ये अर्थ सिद्ध होय है कि सद्रूप घटादिक कार्य जे हैं ते असत् हैं काहेतैं

अणोरणीयान् ॥

इस श्रुतिके प्रामाण्य तैं मूल उपादान सद्रूप हुवा तो कार्यद्रव्य जे हैं ते उपादानतैं विलक्षण होवैं नहीं यातैं कार्यद्रव्य सारे सद्रूप भये और

नेह नानास्ति किञ्चन ॥

इस श्रुतिके प्रामाण्य तैं नानाका निषेध हुवा तो कार्यद्रव्य सारे सद्रूप हुये तो जैसें उष्ण अग्नि शीतल है ऐसैं मानणाँ विरुद्ध है तैसें सद्रूप कार्यद्रव्य असत् हैं ऐसैं मानणाँ भी विरुद्ध ही है तो हम कहैं कि इस उपालम्भके योग्य तो वेद है देखो वेद ही कार्यद्रव्योंकूँ सद्रूप और

ये देखो कि वेदमैं परमाणु किसकूँ कहा है ज्यो वेदकूँ देखते हैं पनिषद्की ये श्रुति है कि

अणोरणीयान् महतो महीया नात्मास्ति ज
निहितो गुहायाम् तमक्रतु ऽ पश्यति वीतशोक
धातुः प्रसादान्महिमानमात्मनः ॥

इसका अर्थ ये है कि ये आत्मा ज्यो है सो अणुतैं अणु है महान् है ब्रह्माकूँ आदि लेकरिकैं तृण पर्यन्त ज्यो है ताके हृद अर्थात् सर्व को आत्मा है जब पुरुष निष्काम होय है ओर शोक रहित होय है तब इन्द्रियौंके प्रसादतैं इस आत्माकूँ जाणै है महिमाकूँ जाणै है ओर अन्य उपनिषदौं की ये दोय श्रुतियौं हैं

एषोऽ णुरात्मा चेतसा वेदितव्यः ॥

ओर

सूक्ष्मात् सूक्ष्मतरं नित्यम् ॥

इनका अर्थ ये है कि ये अणु आत्मा चित्ततैं जाणबौं सूक्ष्मतें अति सूक्ष्म है नित्य है ता परमाणु आत्मा हुवा करो कि गौतमजीनैं मुल उपादान कारण परमाणु मान्याँ है ता मुल उपादान कारण हुवा ता इसतें हीं कार्यद्रव्योंकी उत्पत्ति अब विचार करो कि कार्य ज्यो है सो अपणे उपादान कारणतें होवै नहीं जैसे कपालतें घट होय है ता कपाल उपादान है ता पट कार्य है सो यी पृथ्वीही होय है तैसें परमाणु परमात्मा हुवा ता कार्य इनसें विजातीय कैसें होसकै यातें कार्य द्रव्य मा त्मा हीं भये ओर

नेह नानास्ति किञ्चन ॥

ये श्रुति है इसका अर्थ ये है कि यहाँ नाना कुछ नहीं है श्रुति में कार्योंका निषेध सिद्ध होय है ओर गौतमजीका मत है इसका तात्पर्य ये है कि कारण में नहीं वर्त्तमान हीं कार्य है अर्थात् कपालादिक जे हैं उन में घटादिक कार्य नहीं हैं होय हैं ता जैसें मृत्तिका ज्यो है सो घट हुया है ता घट मृत्ति तैसे उपादान में असत् अर्थात् नहीं है सो कार्य हुवा है ता

ा है अर्थात् कार्य नहीं रूप ही है तो गौत्तमजी महाराजके मत तैं ये
द्ध हुवा कि जैसैं सामान्य उपादान ज्यो मृत्तिका तातैं जे कार्य भये हैं
ं मृत्तिका रूप ही हैं तैसैं ही सारे कार्योंका सामान्य उपादान कारण
माणु है अर्थात् परमात्मा हीं है तो सारे कार्य सामान्य उपादान रूप
हैं अर्थात् परमात्मा हीं हैं अब तुम अपणैं अनुभव तैं देखो सामान्य
पादानका ये स्वभाव है कि अपणैं स्वरूप तैं वणाँ हीं रहै है जैसैं घटा-
क जे कार्य द्रव्य हैं उनका सामान्य उपादान मृत्तिका है तो घटादिकोँ-
आदि मध्य अन्त मैं मृत्तिका वणीं हीं रहै है तैसैं कार्य द्रव्य मात्रका
मान्य उपादान परमाणु है अर्थात् परमात्मा है तो कार्य द्रव्योंके आदि
य अन्त मैं परमात्मा वणाँ हीं रहै है ओर जैसैं घटादि कार्यावस्था मैं
त्तिका रूप सामान्य उपादान हीं घटादि रूप प्रतीत होय है तैसैं हीं
द्रव्य मात्रावस्था मैं परमाणु कहिये परमात्म रूप ही सामान्य उपादान
द्रव्यमात्र रूप करि कैं प्रतीत होय है तो गौत्तमजीका मत ओर
र इनकी ऐकार्थकता तैं ये सिद्ध होगया कि कार्य द्रव्य सारे परमात्मा
हैं ये ही गौत्तमजीका अभिप्राय है सो ये अभिप्राय तो परमाणुकूँ मूल
दान मान्याँ यातैं सिद्ध हुवा ।

ओर गौत्तमजी नैं असत्कार्यवाद मान्याँ तो ये सिद्ध हुवा कि
मृत्तिका घट होय है तो घट मृत्तिका ही है तैसैं असत् कार्य होय हैं
कार्य असत् ही हैं ज्यो कहो कि ऐसैं गौत्तमजीका अभिप्राय मानणैं तैं
ये अर्थ सिद्ध होय है कि सद्रूप घटादिक कार्य जे हैं ते असत् हैं काहेतैं

अणोरणीयान् ॥

इस श्रुतिके प्रामाण्य तैं मूल उपादान सद्रूप हुवा तो कार्यद्रव्य जे
ते उपादानतैं विलक्षण होंवै नहीं यातैं कार्यद्रव्य सारे सद्रूप भये ओर

नेह नानास्ति किञ्चन ॥

इस श्रुतिके प्रामाण्य तैं नानाका निषेध हुवा तो कार्यद्रव्य सारे
द्रूप हुये तो जैसैं उष्ण अग्नि शीतल है ऐसैं मानणाँ विरुद्ध है तैसैं
कार्यद्रव्य असत् हैं ऐसैं मानणाँ भी विरुद्ध ही है तो हम कहैं कि
उपालम्भके योग्य तो वेद है देखो वेद ही कार्यद्रव्योंकूँ सद्रूप ओर

ोर असत् ये व्यवहार तो विरुद्ध हैं ज्यो कहो कि ये व्यवहार काला-
त है यातैं विरुद्ध नहीं तो हम कहैं हैं कि गौतमजीका मत अेार
ति इनकी एक वाक्यता करिकैं ज्यो ये अर्थ सिद्ध हुवा कि सद्रूप
ये द्रव्य असत् हैं ये वी विरुद्ध नहीं है काहेतैं कि सामान्य उपादानकी
ष्टितैं तो कार्य द्रव्य सारे सत् हैं अेार कार्यपर्णैंकी दृष्टि तैं सारे कार्य द्रव्य
सत् हैं ।

ज्यो कहो कि मूल उपादानकी दृष्टितैं कार्य द्रव्य सत् हैं अेार
पर्णैंकी दृष्टितैं असत् हैं तो स्वरूप तैं ये द्रव्य कहा हैं तो हम
कहैं तुम हीं गौतमजीके बणाये जे सूत्र हैं तिनमैं देखो ज्यो कहो
स्वरूपदृष्टि तैं तो कार्य द्रव्यौंकूं कुछ वी कहे नहीं तो हम कहैं हैं कि
वी कहे नहीं तो कुछ वी नहीं हैं ज्यो कार्य द्रव्य कुछ होते तो
मजी कुछ कहते ज्यो कहो कि कार्य द्रव्य कुछ वी नहीं हैं ऐसैं वी
मजी बोले नहीं तो हम कहैं हैं कि

यतो वाचो निवर्तन्ते ॥

ये श्रुति है इसका अर्थ ये है कि जिससैं वाणी निवृत होय है अ-
त् ज्यो वाणीका विषय नहीं है सो ही हैं जिनकूं तुम कार्य द्रव्य मानौं
ये अर्थ गौतमजीके नहीं बोलणैं तैं प्रतीत होय है ।

ज्यो कहोकि

तंत्वौपनिषदं पुरुषं पृच्छामि ॥

ये श्रुति है इसका अर्थ ये है कि उपनिषद् जिसका वर्णन करैं हैं
परमात्माकूं मैं पूछूं हूं तो परमात्मा वाणीका विषय नहीं है तो उ-
पद् उसकूं कैसें कहैं हैं तो हम कहैं हैं कि

यतो वाचो निवर्त्तन्ते ॥

इस श्रुतिका तात्पर्य ये है कि परमात्मा उपनिषदों तैं भिन्न ज्यो
ी ताका विषय नहीं है तो तुमनैं जिनकूं कार्यद्रव्य मानैं वे तो परमा-
रूप हैं अेार न्याय सूत्र उपनिषद् हैं नहीं याही तैं तुमारे मानैं कार्य
ौंकूं स्वरूप दृष्टितैं गौतमजीनैं अपणैं सूत्रौं मैं कुछ वी कहे नहीं यातैं
नैं जिनकूं कार्य द्रव्य मानैं वे परमात्मा हीं हैं ।

ज्यो कहो कि कार्य द्रव्य पूर्व काल ओर उत्तर कालमैं असत्
वर्त्तमान कालमैं वी असत् ही हैं जैसैं घट ज्यो है सो पूर्वकाल ओ
काल मैं पृथ्वी है तो वर्त्तमान काल मैं वी पृथ्वी ही है ऐसैं का
त्रिकालासत् हुये यातैं ये परमात्मा नहीं हो सकैं ऐसैं मानणैं मैं
का वचन वी प्रमाण है देखो उननैं अर्जुनकूं कही है कि

अव्यक्तादीनि भूतानि व्यक्तमध्यानि भारत
अव्यक्तनिधनान्येव तत्र का परिदेवना ॥

इसका अर्थ ये है कि सारे कार्य आदि मैं अव्यक्त हैं ओर म
व्यक्त हैं ओर अन्त मैं वी अव्यक्त हैं इनमैं सोच कहा है यहां
शब्दका अर्थ असत् है ज्यो कहो कि अव्यक्त शब्दका अर्थ असत्
व्यक्त शब्दका अर्थ सत् हुया तो श्रीकृष्णके कथन तैं कार्य द्रव्य
सत् सिद्ध हुये यातैं त्रिकालासत् कैसें होसकैं तो हम कहैं हैं कि
नैं ज्यो ये कही कि इसमैं सोच कहा है तो इसका तात्पर्य ये है कि
सत् दीखैं हैं उस समय मैं वी असत् ही हैं ये सोच करणैं के योग्य
ज्यो कार्य द्रव्य होवैं तो इनका सोच करणां वी उचित होवै ओर उ

नका सोच करणाँ वी उचित होवे ओर यहाँ ऐसा अनुमान वी बणँ जा-
गा कि जैसैं परमात्मा पूर्वोत्तरकाल सत् है तो वर्त्तमानकालसत् वी है
सें हीं कार्य द्रव्य पूर्वोत्तरकालसत् हैं यातैं वर्त्तमानकालसत् हैं तो
। सिद्ध हुवा कि त्रिकालसत् होणैं तैं कार्य द्रव्य सद्रूप हैं यातैं परमा-
मा हीं हैं ।

ज्यो कहोकि अव्यक्त शब्दका अर्थ सत् है ये आपनैं कहाँ देखा है तो
हम कहैं हैं कि

अव्यक्तोयमचिन्त्योयम् ॥

इस गीताके श्लोक मैं अव्यक्त शब्द करिकैं आत्माकूँ कहा है सो
त्मा सत् है ओर गीताका सप्तम अध्याय मैं श्रीकृष्ण नैं कही है कि

अव्यक्तं व्यक्तिमापन्नं मन्यन्ते मामबुद्धयः ॥

इसका अर्थ ये है कि अव्यक्त ज्यो मैं तिसकूँ मूर्त पुरुष व्यक्त मानैं
यहाँ वी अव्यक्त शब्दका अर्थ परमात्मा हीं है सो सत् है ओर व्यक्त
कहिये असत् ऐसैं मानवेवाले जे पुरुष तिनकूँ निर्बुद्धि कहे हैं ओर अष्टम
अध्याय मैं असैं कही है कि

अव्यक्तोक्षर इत्युक्तस्तमाहुः परमां गतिम् ॥

इसका अर्थ ये है कि जिसकूँ अव्यक्त ओर अक्षर कहा है उसकूँ प-
ण्डित परम गति कहैं हैं तो यहाँ वी अव्यक्त शब्दका अर्थ परमात्मा है
सो सत् है ऐसैं गीतमजीके मततैं कार्य द्रव्य परमात्मरूप सिद्ध भये ओर
मूल उपादान परमाणु परमात्मा सिद्ध हुवा ओर कार्यपणें की दृष्टि तैं सारे
कार्य द्रव्य असत् सिद्ध भये ज्यो कहो कि सद्रूप होणैं तैं कार्य द्रव्य परमात्म
रूप हुवे तैसैं असद्रूप होणैं तैं परमात्मा तैं भिन्न सिद्ध होंगे तो हम कहैं
कि गीताके नवम अध्याय मैं श्रीकृष्ण नैं कही है कि

सदसच्चाहमर्जुन ॥

इसका अर्थ ये है कि हे अर्जुन सत् ओर असत् ज्यो है सो मैं हूँ
॥ गीतमजीके मततैं कार्य द्रव्य सत् ओर असत् सिद्ध हुये हैं यातैं परमा-
मा हीं हैं ओर देखो कि गीतमजी आकाश काल दिशा ओर जीवात्मा इन-
कूँ व्यापक कहे हैं ओर श्रुति परमात्माकूँ व्यापक कहे है तो आकाश काल-

ज्यो कहो कि कार्य द्रव्य पूर्व काल ओर उत्तर कालमैं असत् हैं वर्त्तमान कालमैं वी असत् ही हैं जैसैं घट ज्यो है सो पूर्वकाल ओर काल मैं पृथ्वी है तो वर्त्तमान काल मैं वी पृथ्वी ही है ऐसैं कार्य त्रिकालासत् हुये यातैं ये परमात्मा नहीं हो सकैं ऐसैं मानणे मैं श्री का वचन वी प्रमाण है देखो उननैं अर्जुनकूं कही है कि

अव्यक्तादीनि भूतानि व्यक्तमध्यानि भारत
अव्यक्तनिधनान्येव तत्र का परिदेवना ॥

इसका अर्थ ये है कि सारे कार्य आदि मैं अव्यक्त हैं ओर मध्य व्यक्त हैं ओर अन्त मैं वी अव्यक्त हैं इनमैं सोच कहा है यहां अ शब्दका अर्थ असत् है ज्यो कहो कि अव्यक्त शब्दका अर्थ असत् है व्यक्त शब्दका अर्थ सत् हुवा तो श्रीकृष्णके कथन तैं कार्य द्रव्य म सत् सिद्ध हुये यातैं त्रिकालासत् कैसैं होसकैं तो हम कहैं हैं कि नैं ज्यो ये कही कि इसमैं सोच कहा है तो इसका तात्पर्य ये है कि सत् दीखैं हैं उस समय मैं वी असत् ही हैं ये सोच करणे के योग्य ज्यो कार्य द्रव्य होवैं तो इनका सोच करणां वी उचित होवै ओर तैं वी ये कार्य द्रव्य त्रिकालासत् सिद्ध होय हैं जैसैं अलीक पदार्थ कालासत् हैं यातैं वर्त्तमान कालासत् हैं तैसैं हीं कार्य द्रव्य वी पूर्वा

का सोध करणाँ बी उचित होवे और यहाँ ऐसा अनुमान बी बणै जा-
ा कि जैसें परमात्मा पूर्वोत्तरकाल सत् है तो वर्त्तमानकालसत् बी है
ं हीं कार्य द्रव्य पूर्वोत्तरकालसत् हैं यातें वर्त्तमानकालसत् हैं तो
सिद्ध हुवा कि त्रिकालसत् होणें तें कार्य द्रव्य सद्रूप हैं यातें परमा-
हीं हैं ।

ज्यो कहोकि अव्यक्त शब्दका अर्थ सत् है ये आपनें कहाँ देखा है तो
कहें हैं कि

अव्यक्तोयमचिन्त्योयम् ॥

इस गीताके श्लोक में अव्यक्त शब्द करिकें आत्माकूं कहा है सो
मा सत् है और गीताका सप्तम अध्याय में श्रीकृष्ण नें कही है कि

अव्यक्तं व्यक्तिमापन्नं मन्यन्ते मामबुद्धयः ॥

इसका अर्थ ये है कि अव्यक्त ज्यो मैं तिसकूं मूर्ख पुरुष व्यक्त मानैं
यहाँ बी अव्यक्त शब्दका अर्थ परमात्मा हीं है सो सत् है और व्यक्त
हेये असत् ऐसें मानवेवाले जे पुरुष तिनकूं निर्बुद्धि कहे हैं और अष्टम
याय में ऐसें कही है कि

अव्यक्तोक्षर इत्युक्तस्तमाहुः परमां गतिम् ॥

इसका अर्थ ये है कि जिसकूं अव्यक्त और अक्षर कहा है उसकूं प-
उत परम गति कहैं हैं तो यहाँ बी अव्यक्त शब्दका अर्थ परमात्मा है
सत् है ऐसें गौतमजीके मततें कार्य द्रव्य परमात्मरूप सिद्ध भये और
गदान परमाणु परमात्मा सिद्ध हुवा और कार्यपणें की दृष्टि तें सारे
व्य असत् सिद्ध भये ज्यो कहो कि सद्रूप होणें तें कार्य द्रव्य परमात्म
वे तैसें असद्रूप होणें तें परमात्मा तें भिन्न सिद्ध होंगे तो हम कहैं
गीताके नवम अध्याय में श्रीकृष्ण नें कही है कि

सदसच्चाहमर्जुन ॥

इसका अर्थ ये है कि हे अर्जुन सत् और असत् ज्यो है सो मैं हूँ
तमजीके मततें कार्य द्रव्य सत् और असत् सिद्ध हुये हैं यातें परमा-
ीं हैं और देखो कि गौतमजी आकाश काल दिशा और जीवात्मा इन-
ापक कहे हैं और श्रुति परमात्माकूं व्यापक कहे है तो आकाश काल-

दिशा और जीवात्मा ये परमात्मरूप सिद्ध भये और वेद में मन
परमाणु कहीं वी लिखा नहीं और गौतमजी नें मनकूं परमाणु
तो परमाणु नाम परमात्माका है यातें मन परमात्म रूप सिद्ध

ज्यो कहो कि आपनें पूर्व गौतमजीके मानें सारे द्रव्यों
व्यर्थ बताया है अब इनकूं आप कैसें परमात्मरूप करिकें मानों
घट पृथ्वीरूप सिद्ध होणें तें अपणें स्वरूप तें असिद्ध नहीं है
परमात्म रूप सिद्ध भये तो वी अपणें स्वरूपतें असिद्ध नहीं होंगे
का मानणां व्यर्थ न हुवा तो हम कहैं हैं कि पृथ्वी तें जुदा घटका
कुछ वी नहीं है ज्यो घटका स्वरूप जुदा है तो पृथ्वीकूं दूर करि
अनुभवतें देखो घटका स्वरूप कहा है ज्यो कहो कि पृथ्वी दूर करें
घटका स्वरूप कुछ है ही नहीं तो हम कहैं हैं कि सद्रूप परमात्मा
करणें तें द्रव्योंका स्वरूप कुछ है ही नहीं ज्यो कहो कि पृथ्वीके
तो घटका स्वरूप कुछ है तो घट सिद्ध होगया तैसें सद्रूप पर
होणें तें द्रव्योंका स्वरूप कुछ है तो द्रव्य सिद्ध होगये इनका
व्यर्थ न हुवा तो हम कहैं हैं कि पृथ्वीके होणें तें घटका स्वरूप कु
हो तो वी घट पृथ्वी है इसमें तुमारे कुछ वी सन्देह नहीं है तैसें
परमात्माके होणें तें द्रव्योंका स्वरूप कुछ मानों हो तो वी द्रव्य सा
परमात्मा हीं हैं ऐसें वी निः सन्देह हो करिकें मानों ज्यो कहो
घट पृथ्वी है ये व्यवहार होय है तैसें पृथ्वी घट है ये व्यवहार हो
यातें घट पृथ्वी तें विलक्षण है तैसें द्रव्य सद्रूप परमात्मा हैं तो वी
परमात्मा द्रव्य नहीं यातें द्रव्य सद्रूप परमात्मातें विलक्षण हैं तो
परमात्मा तें जुदे सिद्ध भये तो हम कहैं हैं कि यद्यपि पृथ्वी घट
व्यवहार घटतें जुदे देशमें होवे नहीं तो वी घट देश में पृथ्वी घट
व्यवहार होय है यातें घट पृथ्वी ही है तैसें द्रव्यों तें जुदे देश में
परमात्मा द्रव्य नहीं तो वी द्रव्य देशमें सद्रूप परमात्मा द्रव्य है यातें
परमात्मा हीं हैं ज्यो कहो कि घट देशमें वी घट और पृथ्वी जुदे हैं
कोई घट व्यवहार करे है और कोई पृथ्वी व्यवहार करें है यातें घ
तें विलक्षण है तैसें हीं द्रव्य देश में वी द्रव्य और सद्रूप परमात्मा
यातें कोई द्रव्य व्यवहार करै है और कोई सद्रूप परमात्म व्यवहा
है यातें द्रव्य सद्रूप परमात्मा तें विलक्षण हैं तो हम पूछैं हैं कि घ

घट पृथ्वी है ये व्यवहार होय है अथवा नहीं तो तुमकूं कहणाँ हीं होगा कि घट पृथ्वी है ये व्यवहार होय है तो तुमकूं ये वी कहणाँ हीं होगा कि द्रव्यदेश मैं द्रव्य सद्रूप परमात्मा हीं हैं ज्यों कहो कि द्रव्य सद्रूप परमात्मा है ऐसें तो कोई वी व्यवहार करे नहीं तो हम पूछैं हैं कि द्रव्य है ऐसें तुम व्यवहार करो हो अथवा नहीं तो तुमकूं कहणाँ हीं पड़ैगा कि द्रव्य हैं ऐसें हम व्यवहार करैं हैं तो हम कहैं हैं कि द्रव्य हैं यहाँ हैं इसका अर्थ सत् है तो द्रव्य हैं इस वाक्यका अर्थ द्रव्य सद्रूप हैं ये हुवा जो सत् तैं जुदे द्रव्य सिद्ध करोगे तो है तैं विलक्षण सिद्ध होंगे तो हीं कहो है तैं विलक्षण कहा है ज्यो कहो कि है तैं विलक्षण तो नहीं है तो हम कहैं हैं द्रव्योंकूं सद्रूप नहीं मानों तो सारे तुमारे मानें द्रव्य नहीं सिद्ध होंगे यातैं द्रव्योंकूं सद्रूप ही मानों और सद्रूप परमात्मा तैं मानों तो नहीं रूप मानों ये ही गौतमजीका अभिप्राय है ज्यो कहो न तो सारे द्रव्य प्रत्यक्ष तैं सिद्ध भये और नैं गौतमजीका मत और ते इनकी एक वाक्यता करणें तैं द्रव्य सिद्ध भये तो हम द्रव्योंकूं अनु- तैं सिद्ध करैंगे तो हम कहैं हैं कि द्रव्य सामान्यका आधार कोई न्याय- मत मैं है नहीं यातैं जिसकूं हेतु बणावोगे वो आश्रयासिद्ध हेतु होगा तैं द्रव्य सर्वथा सिद्ध हो सकैं नहीं ।

ज्यो कहो कि न्यायके मत तैं द्रव्य सिद्ध न भये तो हम योगके मत गुण समुदायकूं द्रव्य मानैंगे तो हम पूछैं हैं तुम ऊर्ध्वाधःक्रम करि- गुणोंका समुदाय मानोंगे अर्थात् जैसें धान्यराशि ज्यो है सो धान्य समु- य है तो ऊर्ध्वाधःक्रम करिकैं धान्योंका समुदाय है ऐसें मानोंगे अथवा क्तिक्रम करिकैं गुणोंका समुदाय मानोंगे अर्थात् जैसें माला मैं मणिन- समुदाय है तो पङ्क्तिक्रम करिकैं है तैसें गुणोंका समुदाय मानोंगे ज्यो कहो कि ऊर्ध्वाधःक्रम करिकैं गुणोंका समुदाय मानैंगे तो हम कहैं कि ऐसें मानणाँ तो असङ्गत है काहे तैं कि ज्यो ऊर्ध्वाधःक्रम करिकैं गुणोंका समुदाय घट द्रव्य होय तो ऊर्ध्वगत गुण करिकैं अन्य गुणोंका आ- रण होणाँ चाहिये जैसें ऊर्ध्वाधःक्रम करिकैं समुदित किये जे पट तिनमैं ऊर्ध्वगत ज्यो पट ता करिकैं अधोगत जे पट तिनका आवरण होय है अ- र्थात् जैसें ऊपर नीचैं ज्यो क्रम ता करिकैं इकट्ठे किये जे वस्त्र तिनमैं ऊपर वस्त्र करिकैं नीचैं के वस्त्र ढकि जाय हैं परन्तु गुण समुदायरूप ज्यो घट

द्रव्य तामैं सारे गुण निरावरण दीखैं हैं अर्थात् ये गुण इस दूसरे गु
है ये व्यवहार होवै नहीं यातैं ऊर्ध्वांध५क्रम करिकैं गुणोंका समुद
मानणाँ असङ्गतही है ।

ज्यो कहो कि सारे गुण स्वरूप तैं निरवयव हैं निरवयव आव
रण करणैं का स्वभाव राखै नहीं जैसैं न्यायके मतमैं आकाशकूँ
मान्याँ है तो आकाशका आवरण करणैंका स्वभाव नहीं मान्याँ
गुणोंका समुदाय ऊर्ध्वांध५क्रम करिकैं हुवा है तो वी एक गुण दूस
आवरण करै नहीं इस ही कारण तैं घटमैं सारे गुण दीखैं हैं तो ह
हैं कि गुण सारे निरवयव हैं तो इनकूँ नित्य मानणैं चाहिये जैसे
के मत मैं आकाशकूँ निरवयव मान्याँ है यातैं नित्य मान्याँ है य
कि नित्य मानणैं मैं निरवयवपणाँ कारण नहीं है किन्तु व्या
कारण है आकाश व्यापक है यातैं न्याय के मत मैं नित्य मान्याँ
हम कहैं हैं कि व्यापकपणाँ होणैं तैं नित्य मानणैं मैं न्यायके
अभिप्राय होता तो न्यायके मतमैं परमाणुकूँ नित्य नहीं मानते
कि न्याय के मत मैं परमाणु व्यापक नहीं है ज्यो कहो कि मध्यम
माणका न होणाँ नित्य मानणैं मैं कारण है आकाश मैं मध्यम प
नहीं यातैं न्यायके मत मैं आकाशकूँ नित्य मान्याँ है तो हम कहैं
मध्यम परिमाण के न होणैं तैं नित्य मानौं तो वी गुणोंकूँ नित्य
चाहिये काहेतैं कि गुणों मैं मध्यम परिमाण नहीं है न्यायके मतमैं

प्रत्येक घट मैं वी न्यायके मतवैं रही ऐसैं हीं बहुत्व मैं समुझो ज्यो कहो के एक घट है तहाँ दो घट हैं ये प्रतीति तो होवै नहीं परन्तु जहाँ दोय घट हैं तहाँ प्रत्येक घट मैं द्वित्व सङ्ख्यावाला घट है ये प्रतीति न्याय-वाले मानैं हैं तो हम पूछैं हैं कि न्यायवाले मानैं हैं यातैं हीं इस प्रतीति-कूँ तुम मानों हो अथवा तुमकूँ वी ये प्रतीति होय है ज्यो कहो कि मोकूँ तो प्रत्येक घट मैं ये प्रतीति होवै नहीं परन्तु न्यायवाले कैसैं मानैं हैं तो हम कहैं हैं कि न्यायवाले धान्यसमुदायकूँ देखि करिकैं विचार करणैं लगे ते यहाँ समुदाय पदका अर्थ कहा है तो उनकूँ कुछ वी मालुम हुवा नहीं ब उस धान्यसमुदाय मैं तैं एक एक धान्यकूँ अलग अलग किया तो धान्यसमुदाय दीखा नहीं तब उननैं विचार किया कि प्रत्येक धान्य एक देश मैं रहै तब तो लोकूँ नैं समुदाय व्यवहार किया और प्रत्येक धान्य एक देश मैं न रहै तब समुदाय व्यवहार लोकूँ नैं किया नहीं तो समुदाय प्र-त्येकरूप है ऐसैं उन नैं नियम कर लिया पीछैं विचार किया कि समुदायके गुण प्रत्येक मैं रहैं हैं अथवा नहीं तो ज्यो श्वेत रूप समुदा मैं दीखा उस-कूँ प्रत्येक मैं देखा तो उन नैं नियम कर लिया कि समुदायमैं ज्यो गुण रहै सो प्रत्येक मैं वी रहै है परन्तु धान्यकूँ प्रत्येक और समुदित अर्थात् इकट्ठे करणैं मैं ज्यो उनकूँ भ्रम हुवा तातैं ये विचार न किया कि समुदाय-की सङ्ख्या प्रत्येक मैं कैसैं रहैगी समुदाय मैं तो द्वित्व बहुत्व रहैंगे प्रत्येक मैं एकत्व रहैगा यातैं द्वित्व और बहुत्व जे सङ्ख्या समुदाय मैं रहैं हैं तिनकूँ न्यायवाले प्रत्येक मैं वी मानैं हैं ज्यो कहो कि द्वित्व और बहुत्व प्रतीति प्रत्येक मैं कैसैं मानैं हैं ज्यो द्वित्वबहुत्वकी प्रतीति प्रत्येक मैं होती तो मोकूँ वी होती परन्तु मोकूँ तो द्वित्वादिककी प्रतीति समुदाय मैं होय है प्रत्येक मैं होवै नहीं तो हम कहैं हैं कि न्यायवाले तो नियमके अनुकूल अनुभवकी कल्पना करैं हैं अनुभवके अनुकूल नियमकी कल्पना करैं नहीं और अपणैं हीं अनुभवकूँ ठीक मानैं हैं और युक्ति के और शास्त्रके अनुभवके विरोध होय तहाँ अनुभवकूँ अशुद्ध मानि लेवैं हैं यातैं उनके सारे अनुभव शुद्ध नहीं हैं कितनैं अनुभव अशुद्ध वी हैं।

इसमैं एक दृष्टान्त कहैं हैं सो सुणों एक न्यायका पण्डित तेलीके घर गया तो उस समय मैं वो तेली तेलकूँ तिलों मैं तैं निकालता रहा तब वो पण्डित तेल निकालनैंके साधनोंकी सार्थकताका विचार करणैं लगा तो

ओर साधनं तो अपणीं युक्ति तैं सार्थक मानें परन्तु वृषभोंके घण्टा पण्डितकूं व्यर्थ मालुम हुई तो तेलीतैं प्रश्न किया कि भाई तैनें भोंके कण्ठों में घण्टाबन्धन काहेकूं किया है तो तेली नें उत्तर दि तैलयन्त्रके भ्रमणतैं आनन्दकूं प्राप्त हो करिकैं जब निद्रित जैसा हो तब घण्टानादतैं वृषभोंके गमनका अनुमान होता रहे है तब पण्डि कही कि भाई तेरी ये कल्पना तो व्यर्थ है काहेतैं कि ये दोनूं वृषभ न करैं और शिरोंकूं कम्पित करिकैं घण्टा नाद करैं तो तेरा अनुमान होजाय तब तेलीनैं उत्तर दिया कि ये न्यायके पण्डित नहीं हैं कि प्रकार करिकैं मेरे अनुमानकूं व्यर्थ करि देवैं तो ऐसा वचन सुणि पण्डित चुप्प हो रहा ये कथा लोक में प्रसिद्ध है यातैं अर्थात् पहिले हुये नियमके अनुकूल अनुभवकी कल्पना किई है यातैं न्यायवाले प में द्वित्वकी तथा बहुत्वकी प्रतीति मानैं हैं ।

अब कहो समुदायके गुणोंकूं प्रत्येक में मानणां और प्रत्येक में दायके गुणोंकी प्रतीति मानणीं ये दोनूं हीं असङ्गत हुये अथवा नहीं कहो कि नियमके अनुरोध तें ये दोनूं कल्पना जे न्यायवालोंनें कि असङ्गत हुई परन्तु आप मोकूं इन दोनूं कल्पनावोंकूं असङ्गत बता कहा समुझायो हो सो कहो तो हम कहैं हैं कि ये दोनूं कल्पना अ भई यातैं समुदाय में वर्त्तमान जे द्वित्व बहुत्व सङ्ख्या उनकूं प्रत्ये मानणां असङ्गत हुया तो इसके दृष्टान्त तें समुदाय में रहणें वाले परि कूं प्रत्येक में मान्यां सो असङ्गत हुया यातैं गुणोंमें मध्यम परिमाण करिकैं अनित्यपणां मान्यां सो असङ्गत हुया तो गुणोंकूं नित्य हो

यम परिमाण नहीं है कि ज्यो घट द्रव्यकूं मध्य परिमाणका आश्रय
द्ध करै और जो उसही मध्यम परिमाणसें घट द्रव्यकूं मध्यम परिमा-
ा आश्रय सिद्ध करोगे और उसही मध्यम परिमाणकूं रक्खोगे तो
स्माश्रय दोष होगा यातैं मध्यम परिमाणके आश्रय मैं न रहणाँ नित्य
नणें मैं कारण कहा सो असङ्गत हुवा ।

ज्यो कहो कि इन्द्रियोंके विषय होणें के योग्य न होणाँ नित्य मा-
नें मैं कारण है तो हम कहैं हैं कि इन्द्रियाँ इन्द्रियोंके विषय नहीं या-
इनकूं नित्य मानणें चाहिये अन्त मैं येही मानणाँ पडैगा कि नित्य
ानणें मैं निरवयवपणाँ हीं कारण है देखो न्यायके मतमैं परमाणु आका-
काल दिशा आत्मा मन जाति विशेष इनकूं नित्य मानैं हैं सो ये सारे
रवयव हैं ज्यो कहो कि गुणों मैं अनित्यपणाँ सिद्ध करणेंकी कोई भी
क्ति न भई तो मत हो ये तो अप्रकृत है निरवयवपणाँ तो सिद्ध रह्या या-
ऊर्ध्वगत गुण करिकैं अधोगत गुणोंके आवरणकी आपत्ति दिई सो तो
भई तो हम कहैं हैं कि गुणों मैं निरवयवपणाँ तो तुम मानों हीं हो और
निरयपणाँ कोई भी युक्ति तैं सिद्ध हुवा नहीं तो गुण नित्य सिद्ध भये
ये नित्य सिद्ध भये तो नित्य और सत्य ये पर्याय हैं अर्थात् एकार्थक हैं
ा गुण सत्य सिद्ध भये ज्यो सत्य सिद्ध हुये तो परमात्म रूप सिद्ध हुये
ाहेतैं कि

सत्यं ज्ञान मनन्तं ब्रह्म ॥

इस श्रुति मैं सत्यनाम परमात्माका है ब्रह्म ज्यो परमात्मा सो सत्य
 ज्ञान रूप है और अनन्त है ये इस श्रुतिका अर्थ है और

नित्यो नित्यानाम् ॥

इस श्रुति मैं नित्य शब्द परमात्माकूं कहै है ।

ज्यो कहो कि हम गुणों कूं सावयव मानैंगे और इनका आवरण
करणेंका स्वभाव नहीं मानैंगे जैसें दर्पण सावयव है और आवरण करणेंका
स्वभाव नहीं राखे है तो हम कहैं हैं कि गुण सावयव भये तो अवयवी
ये ज्यो अवयवी भये तो कार्य भये ज्यो कार्य भये तो इनके अवयवों-
ं भी गुणहीं मानोंगे उन अवयवोंके समुदायरूप होंगे कार्यरूप गुण तो
ार्यरूपगुण गुण समुदायरूप भये तो प्रत्येक गुणकूं द्रव्य मानणाँ चाहिये
ये प्रत्येक गुण द्रव्य भये तो पटादिक द्रव्योंकूं तुमनैं योगका मत मानि-
!

ो हम कहैं हैं ऐसैं मानौं तो यी आवरण तो सिद्ध ही रहा काहेतैं कि पा-
मैं अनुद्भूत गन्धके रहणें तैं अथ हम कहैं हैं कि तुम गुणौंका आवरण करणेंका
ाय नहीं है ऐसैं हीं मानौं परन्तु ये कहो कि सर्व गुणों मैं अधोगत
तो कोन है और ऊर्ध्वगत गुण कोन है और इन दोनूं गुणौंके मध्यमैं
कोन गुण किस किस गुणके अधोगत है और कोन कोन गुण किस
गुणके ऊर्ध्वगत है तो विनिगमना नहीं होणें तैं ये ही कहणाँ पडै-
कि इस प्रश्नका उत्तर तो मैं देसकूं नहीं तो हम कहैं हैं कि ऊर्ध्वा-
क्रम करिकैं गुणौंका समुदाय मानणाँ असङ्गत हुवा।

ज्यो कहो कि पङ्क्तिक्रम करिकैं हम गुणौंका समुदाय मानैंगे तो हम
हैं कि ऐसैं मानणाँ यी असङ्गत ही है काहेतैं कि सारे घट मैं प्रत्येक
की प्रतीति होवै है यातैं द्रव्यौंकूं गुणसमुदायरूप मानणाँ यी असङ्गत
है अब कहो द्रव्यौंका मानणाँ असङ्गत हुवा अथवा नहीं ज्यो कहो कि
यौंका मानणाँ तो असङ्गत हुवा परन्तु गुणौंका मानणाँ तो असङ्गत हुवा है
नहीं यातैं हम गुणौंकूं सिद्ध करैंगे तो हम कहैं हैं कि ये कथन तो
ारा असङ्गत है काहेतैं कि गुणौंके आधार हैं द्रव्य ये सिद्ध हुये नहीं तो
राधार गुण कैसैं सिद्ध होंगे ज्यो कहो कि जैसैं न्याय वाले नित्य द्रव्यौं-
मानैं हैं उन सारे द्रव्यौंका आधार कोईकूं यी नहीं मान्याँ है तैसैं
गुणौंकूं मानैंगे और इनका आधार कोईकूं यी नहीं मानैंगे तो हम
हैं कि गुणौंकूं निराधार और वी किसी नैं मान्याँ है अथवा तुमहीं
गे ज्यो कहो कि गुणौंकूं निराधार योगवाले मानैं हैं देखो
नैं गुणसमुदायकूं द्रव्य मान्याँ है तो समुदाय पदार्थ गुणौंतैं विलक्षण
तो गुणरूप ही हुवा तो उस समुदायका आधार उनैं कोई यी यता-
नहीं तो गुणौंकूं निराधार मानणाँ सिद्ध होगया तैसैं ही हम यी गुणौंकूं
ाधार मानैंगे तो हम कहैं हैं कि न्यायवालों नैं नित्यद्रव्यौंकूं निराधार
ैं हैं सो गौतमजीका मत और श्रुति इनकी एक वाक्यता करणें तैं ये
परमात्मरूप सिद्ध हुये हैं तैसैं ही ज्यो तुम गुणौंकूं निराधार मानौं
तो इनकूं यी परमात्मरूप ही मानौं काहेतैं कि श्रुति निराधार पर-
त्माकूं कहै है देखो कठोपनिषद् मैं लिखा है कि

तस्मिँल्लोकाः श्रिताः सर्वे तदुनात्येति कश्चन॥

करिकैं गुण समुदायरूप मानैं हैं सो मानणाँ असङ्गत हुवा काहेतैं कि
दिक द्रव्य तो द्रव्य समुदायरूप भये ज्यो कहो कि योगके मततैं
द्रव्य गुणसमुदायरूप मानैं हैं तहाँ गुण शब्दका अर्थ विजातीय गु
तो घट द्रव्य ज्यो है सो विजातीय गुण जे रूप रस इत्यादिक गुण ति
समुदायरूप है श्रोर प्रत्येक गुण जे हैं तिनके जे अवयव हैं ये तो सजा
गुण हैं उनके समुदायरूप हैं प्रत्येक गुण यातैं प्रत्येक गुणोंकूं गुणसमु
मानि करिकैं द्रव्य नहीं मान सकैं काहेतैं कि हम तो विजातीय गुण
दायकूं द्रव्य मानैं हैं तो हम कहैं हैं कि तुमारे कथन तैं ये सिद्ध हुवा
सजातीयगुणसमुदाय तो कार्य गुण हैं ये द्रव्य नहीं हैं श्रोर विजा
गुण समुदाय द्रव्य हैं ये गुण नहीं हैं तो हम पूछैं हैं कि कार्यरूप जे
उनके अवयवरूप जे गुण उनकूं सावयव मानोगे अथवा निरवयव मानोगे
सावयव मानोगे तो अनवस्था होगी यातैं निरवयव ही मानोगे ज्यो नि
यव मानैं तो वे परमाणु हीं सिद्ध होंगे ज्यो परमाणु सिद्ध होंगे तो
परमाणु शब्द करिकैं परमात्माकूं हीं कहै है यातैं अवयवरूप गुण
मानैं ये परमात्मरूप सिद्ध हुये तो वेही कार्य गुणोंके उपादान होंगे
उपादानतैं विलक्षण कार्य होवै नहीं यातैं कार्यगुण परमात्मरूप सिद्ध
ज्यो कार्य गुण परमात्मरूप सिद्ध भये तो कार्य गुणोंके समुदायकूं तुम
मानों हो श्रोर समुदाय प्रत्येकरूप मानों हो तो घटादि द्रव्य प्रत्येक

तो हम कहैं हैं ऐसैं मानौ तो बी आवरण तो सिद्ध ही रहा काहेतैं कि पा-
णमैं अनुद्भूत गन्धके रहणैं तैं अब हम कहैं हैं कि तुम गुणोंका आवरण करणैंका
अभाव नहीं है ऐसैं हीं मानौं परन्तु ये कहो कि सर्व गुणों मैं अधोगत
ण तो कोन है और ऊर्ध्वगत गुण कोन है और इन दोनूं गुणोंके मध्यमैं
ान कोन गुण किस किस गुणके अधोगत है और कोन कोन गुण किस
कस गुणके ऊर्ध्वगत है तो विनिगमना नहीं होणै तैं ये ही कहणाँ पडे-
॰ कि इस प्रश्नका उत्तर तो मैं देसकूं नहीं तो हम कहैं हैं कि ऊर्ध्वा-
धक्रम करिकैं गुणोंका समुदाय मानणाँ असङ्गत हुवा।

ज्यो कहो कि पङ्क्तिक्रम करिकैं हम गुणोंका समुदाय मानैंगे तो हम
हैं हैं कि ऐसैं मानणाँ बी असङ्गत ही है काहेतैं कि सारे घट मैं प्रत्येक
णकी प्रतीति होवै है यातैं द्रव्योंकूं गुणसमुदायरूप मानणाँ बी असङ्गत
ी है अब कहो द्रव्योंका मानणाँ असङ्गत हुवा अथवा नहीं ज्यो कहो कि
व्योंका मानणाँ तो असङ्गत हुवा परन्तु गुणोंका मानणाँ तो असङ्गत हुवा है
ी नहीं यातैं हम गुणोंकूं सिद्ध करैंगे तो हम कहैं हैं कि ये कथन तो
मारा असङ्गत है काहेतैं कि गुणोंके आधार हैं द्रव्य वे सिद्ध हुये नहीं तो
निराधार गुण कैसैं सिद्ध होंगे ज्यो कहो कि जैसैं न्याय वाले नित्य द्रव्यौं-
ं मानैं हैं उन सारे द्रव्योंका आधार कोईकूं बी नहीं मान्याँ है तैं सैं
म गुणोंकूं मानैंगे और इनका आधार कोईकूं बी नहीं मानैंगे तो हम
हैं हैं कि गुणोंकूं निराधार और बी किसी नैं मान्याँ है अथवा तुमहीं
ानेंगे ज्यो कहो कि गुणोंकूं निराधार योगवाले मानैं हैं देखो
नैं गुणसमुदायकूं द्रव्य मान्याँ है तो समुदाय पदार्थ गुणोंतैं विलक्षण
ि तो गुणरूप ही हुवा तो उस समुदायका आधार उननैं कोई बी बता-
नहीं तो गुणोंकूं निराधार मानणाँ सिद्ध होगया तैसैं ही हम बी गुणोंकूं
ाधार मानैंगे तो हम कहैं हैं कि न्यायवालों नैं नित्यद्रव्योंकूं निराधार
नैं हैं तो गौतमजीका मत और श्रुति इनकी एक वाक्यता करणैं तैं वे
व परमात्मरूप सिद्ध हुवे हैं तैसें ही ज्यो तुम गुणोंकूं निराधार मानौं
तो इनकूं बी परमात्मरूप ही मानौं काहेतैं कि श्रुति निराधार पर-
त्माकूं कहै है देखो कठोपनिषद् मैं लिखा है कि

तस्मिँल्लोकाः श्रिताः सर्वे तदुनात्येति कश्चन ॥

करिकैं गुण समुदायरूप मानैं हैं सो मानणाँ असङ्गत हुवा काहेतैं दिक द्रव्य तो द्रव्य समुदायरूप भये ज्यो कहो कि योगके मत द्रव्य गुणसमुदायरूप मानैं हैं तहाँ गुण शब्दका अर्थ विजाती तो घट द्रव्य ज्यो है सो विजातीय गुण जे रूप रस इत्यादिक गु समुदायरूप है और प्रत्येक गुण जे हैं तिनके जे अवयव हैं ये तो गुण हैं उनके समुदायरूप हैं प्रत्येक गुण यातैं प्रत्येक गुणोंकूं गु मानि करिकैं द्रव्य नहीं मान सकैं काहेतैं कि हम तो विजातीय दायकूं द्रव्य मानैं हैं तो हम कहैं हैं कि तुमारे कथन तैं ये सिद्ध सजातीयगुणसमुदाय तो कार्य गुण हैं ये द्रव्य नहीं हैं और गुण समुदाय द्रव्य हैं ये गुण नहीं हैं तो हम पूछैं हैं कि कार्य उनके अवयवरूप जे गुण उनकूं सावयव मानोंगे ... निरवयव मा सावयव मानोंगे तो अनवस्था होगी यातैं निरवयव ही मानोंगे त्यो यव मानैं तो वे परमाणु ही सिद्ध होंगे ज्यो परमाणु सिद्ध होंगे परमाणु शब्द करिकैं परमात्माकूं ही कहे है यातैं अवयवरूप गुण मानें ये परमात्मरूप सिद्ध हुये तो वेही कार्य गुणोंके उपादान । उपादानतैं विलक्षण कार्य होवै नहीं यातैं कार्यगुण परमात्मरूप ज्यो कार्य गुण परमात्मरूप सिद्ध भये तो कार्य गुणोंके समुदायकूं द्र मानों हो और समुदाय प्रत्येकरूप मानों हो तो घटादि द्रव्य प्रत्ये गुणरूप होवैं तैं परमात्मरूप ही सिद्ध होंगे ।

और ज्यो तुमनैं दर्पणके दृष्टान्त तैं गुणोंमें आवरणकरणेका नहीं बताया सो असङ्गत है काहेतैं कि तुम पाषाणादिक में गन्ध मानों हो और तेजःसंयोग करिकैं उसकूं उद्भूत मानों हो तो ये सि कि तेजःसंयोगतैं पहिले पाषाणादिक में गन्धके आवरण रहै है संयोग भये तैं उस गन्धका आवरण नष्ट होजाय है तब यो गन्ध होजाय है जब तुमही विचारतैं देखो ज्यो उस गन्धके आवरण नहीं तो अनुद्भूत कैसे हुया और ज्यो आवरण हुया तो यहां गुण है बिना और किसीमें यो आवरण होसकै नहीं तो गुणोंका आवरण का स्वभाव सिद्ध होगया तो ऊर्ध्वगत गुणों करिकैं अधोगत गुणोंका रण होयो ... चाहिये ज्यो कहो कि यहां तो तेजःसंयोगके होवे तैं ... नाश हो करिकैं दूसरा द्रव्य पैदा हुया है उसका ...

हम कहैं हैं ऐसैं मानौं तो यी आवरण तो सिद्ध ही रहा काहेतैं कि पा-
ि अनुद्भूत गन्धके रहणैं तैं अब हम कहैं हैं कि तुम गुणौंका आवरण करणेंका
व नहीं है ऐसैं हीं मानौं परन्तु ये कहो कि सर्व गुणौं में अधोगत
ो कोन है और ऊर्ध्वगत गुण कोन है और इन दोनूं गुणौंके मध्यमैं
कोन गुण किस किस गुणके अधोगत है और कोन कोन गुण किस
कुणके ऊर्ध्वगत है तो विनिगमना नहीं ऐयौं तैं ये ही कहणाँ पडै-
क इस प्रश्नका उत्तर तो मैं देसकूं नहीं तो हम कहैं हैं कि ऊर्ध्वा-
क्रम करिकैं गुणौंका समुदाय मानणाँ असङ्गत हुवा।

ज्यो कहो कि पङ्क्तिक्रम करिकैं हम गुणौंका समुदाय मानैंगे तो हम
हैं कि ऐसैं मानणाँ यी असङ्गत ही है काहेतैं कि सारे घट में प्रत्येक
े प्रतीति होवै है यातैं द्रव्योंकूं गुणसमुदायरूप मानणाँ यी असङ्गत
! अब कहो द्रव्योंका मानणाँ असङ्गत हुवा अथवा नहीं ज्यो कहो कि
का मानणाँ तो असङ्गत हुवा परन्तु गुणौंका मानणाँ तो असङ्गत हुवा है
हीं यातैं हम गुणौंकूं सिद्ध करैंगे तो हम कहैं हैं कि ये कथन तो
त असङ्गत है काहेतैं कि गुणौंके आधार हैं द्रव्य वे सिद्ध हुये नहीं तो
धार गुण कैसें सिद्ध होंगे ज्यो कहो कि जैसें न्याय वाले नित्य द्रव्यों-
ानैं हैं उन सारे द्रव्योंका आधार कोईकूं यी नहीं मान्याँ है तैंसैं
गुणौंकूं मानैंगे और इनका आधार कोईकूं यी नहीं मानैंगे तो हम
हैं कि गुणौंकूं निराधार और वी किसी नैं मान्याँ है अथवा तुमहीं
ोगे ज्यो कहो कि गुणौंकूं निराधार योगवाले मानैं हैं देखो
नैं गुणसमुदायकूं द्रव्य मान्याँ है तो समुदाय पदार्थ गुणौंतैं विलक्षण
तो गुणरूप ही हुवा तो उस समुदायका आधार उननैं कोई यी यता-
नहीं तो गुणौंकूं निराधार मानणाँ सिद्ध होगया तैंसैं ही हम यी गुणौंकूं
धार मानैंगे तो हम कहैं हैं कि न्यायवालों नैं नित्यद्रव्योंकूं निराधार
हैं तो गौतमजीका मत और श्रुति इनकी एक वाक्यता करणें तैं वे
परमात्मरूप सिद्ध हुये हैं तैंसें ही ज्यो तुम गुणौंकूं निराधार मानौं
यी परमात्मरूप ही मानौं काहेतैं कि श्रुति निराधार पर-
.हो कठोपनिषद् में लिखा है कि

ॐल्लोकाः श्रिताः सर्वे तदुनात्येति कश्चन

इसका अर्थ ये है कि सारेलोक उस मैं आश्रय कर रह्यो है उल्लङ्घन कोई वी नहीँ करै है तो इसका तात्पर्य ये है कि धार है उसका आधार कोई वी नहीँ है और निरालम्बोपनिषद् मैं लम्ब शब्द करिकैं परमात्माकूँ कहा है तो निरालम्ब नाम का है।

और ज्यो तुम नैं कही कि योगवाले गुणोंकूँ निराधार मानैं कथन असङ्गत है काहेतैं कि योगवालोंका अभिप्राय गुणोंकूँ निराधा णे मैं होता तो गुणसमुदायकूँ द्रव्य नहीँ मानते देखो विचार न्यायवालोंनैं द्रव्य मानैं हैं तो उनका अभिप्राय ये ही है कि गुण नहीँ हैं गुणोंके आधार द्रव्य हैं तैसें हीँ योग वालोँ नैं गुणसमुदा मान्याँ है तो इनका अभिप्राय वी ये ही है कि गुण निराधार न गुणोंके आधार द्रव्य हैं ज्यो कहो कि योग वालोंके मतमैं तो द्रव्य मुदायरूप है और समुदाय प्रत्येक रूप है तो समुदायका प्रत्येक होवै तैं आधारपणाँ और आधेयपणाँ कैसे सिदुध होगा आधार आधेयपणाँ तो भेद होय तहाँ वणैं है तो हम कहैं हैं कि जैसें ज्यो है सो धान्यसमुदायरूप है और धान्यसमुदाय प्रत्येकरूप तो समुदायका प्रत्येकतैं अभेद सिद्ध हुया तो वी धान्यराशि धा इस लोक व्यवहार सैं धान्य तो आधेय सिद्ध होय है और आधार सिदुध होय है तैसें हीँ घट द्रव्यज्यो है सो गुणसमु और गुणसमुदाय प्रत्येक गुण रूप है तो गुणसमुदायका प्रत्ये अभेद सिदुध हुया तो वी घट द्रव्य गुणवाला है इस व्यवहार सैं आधेय सिद्ध होय हैं और घट द्रव्य आधार सिद्ध होय है यातें प्रत्येक सैं अभेद है तो वी योगवाले समुदायकूँ आधार मा प्रत्येककूँ आधेय मानैं हैं तो योगके मतसैं गुणोंकूँ निराध पणाँ सिद्ध न हुया ज्यो कहोकि गुणोंकूँ निराधार हम हीं म हम कहैं हैं कि गुणोंकूँ परमात्मातैं भिन्न मानों हो अथवा अभिन्न [illegible] मानों अभिन्न मानों तब तो विवाद ही नहीँ और [illegible] हो तो गुणोंकूँ गगनमैं गन्धर्वनगर मानोंहो अर्थात् व निराधार गन्धर्व नगरकी कल्पना करै है तैसें हीं [illegible] कल्पना करोहो।

ज्यो कहो कि जे पण्डित आधार मानैं हैं ये भी मूल आधारकूं निरा-
र मानैं हैं और उस मूल आधारकूं गन्धर्वनगरके तुल्य नहीं मानैं हैं तैसें
ैं हम गुणोंकूं निराधार मानैंगे और गन्धर्वनगरके तुल्य नहीं मानैंगे तो
म पूछैं हैं कि तुम गुण किनकूं कहो हो ज्यो कहो कि द्रव्य और कर्म इन
 तो भिन्न होंयँ और जिनमैं जाति रहै वे गुण तो हम कहैं हैं कि द्रव्य
ा सिद्ध हुये नहीं और कर्मका तथा जातिका अब ही निर्णय हुवा नहीं
ौर भेद पूर्व अलीक सिद्ध हुया है तो हम गुणोंकूं कैसें जाणैं यातैं गुणों-
ा स्वरूप लक्षण कहो जातैं हम गुणोंकूं जाणैं ज्यो कहो कि गुणोंका स्व-
ूप लक्षण तो नहीं है तो हम कहैं हैं कि जिनकूं तुम गुण मानों हो ये
्वरूप तैं नहीं हैं ज्यो गुण स्वरूपतैं होते तो इनका स्वरूप लक्षण होता
्य तुमहीं विचार करो नैं तो गुणोंका कोई आधार है और नैं स्वरूप है
ो गुण गन्धर्व नगरके तुल्य नहीं हैं तो कहा हैं ज्यो कहो कि गन्धर्व-
गर वी कुछ है ज्यो गन्धर्वनगर कुछ वी नहीं होता तो जैसें सुस्साका
ींग नहीं दीखे है तैसें नहीं दीखता तैसें हीं गुण यी कुछ हैं ज्यो गुण कु-
छ वी नहीं होते तो येवी सुस्साके सींगकी तरैंहैं नहीं दीखते यातैं हम
ुणोंकूं मानैं हैं तो हम पूछैं हैं कि कुछ शब्दका अर्थ कहा है अर्थात् कुछ
शब्दका नहीं ये अर्थ है अथवा है ये अर्थ है ज्यो कहो कि नहीं ये कुछ
शब्दका अर्थ है तो हम कहैं हैं कि गुण वी कुछ हैं इसका अर्थ ये हुवा कि
ुण वी नहीं हैं तो ये सिद्ध होगया कि जैसें द्रव्य नहीं हैं तैसें गुण वी
नहीं हैं ज्यो कहो कि है ये कुछ शब्दका अर्थ है तो हम कहैं हैं कि गुणवी
ैं है तो ये सिद्ध होगया कि गुण वी सद्रूप हैं तो इस कथन तैं वी गुण
कार्यपर्वे की दृष्टितैं असत् हैं और मूल उपादान की दृष्टितैं सत् हैं येही
सिद्ध होय है ज्यो कहो कि हमनैं तो गुणोंकूं निराधार मानैं हैं यातैं मूल
उपादानकी दृष्टितैं गुण सत् हैं ये आपका कथन असङ्गत हुवा तो हम क-
हैं हैं कि मूल उपादानकी दृष्टि विनाहीं गुण सत् हैं ऐसें समुझो ज्यो कहो
कि गुणोंकूं मैंनें अव ही कार्य कहे नहीं यातैं गुण कार्यपर्वेकी दृष्टितैं असत्
हैं ये आपका कथन असङ्गत हुवा तो हम कहैं हैं कि गुण कार्यपर्वेकी दृष्टि
विना हीं असत् हैं ऐसे समुझो ज्यो कहो कि उपादानकी दृष्टि और कार्य
पर्वेकी दृष्टि इनके विना गुणोंकूं सत् और असत् कहोगे तो आपका वचन
विरुद्ध होगा काहेतैं कि ऐसेंहि विरुद्ध व्यवहार तो लोक मैं होवहै निरहेतु

अर्थ ये है कि जिसका लक्षण नहीं तो रूप अलक्षण हीं सिद्ध है ऐसें
तैं ये तुमारा मान्याँ रूप परमात्मरूप सिद्ध होय है काहेतैं कि
पद मैं परमात्माकूँ अलिङ्ग कहा है सो अलिङ्ग शब्द और अलक्षण
समान अर्थकूँ कहैं हैं ज्यो कहे कि रूप शब्द करिकैं कह्या जाय सो
हम कहैं हैं कि रूप शब्द करकैं तो रूप शब्द वी कह्या जाय है या
शब्दकूँ रूप मानणाँ चाहिये ज्यो कहो कि रूप शब्द तैं भिन्न और श
ब्द करिकैं कह्या जाय सो रूप तो हम कहैं हैं कि रूप शब्द करि
रूप नाम ज्यो पुरुष सो वी कह्या जाय है और वो रूप शब्द सें भि
है यातैं उस पुरुषकूँ वी रूप मानणाँ चाहिये और विचार करो कि
द्वार और लक्षण तो पदार्थ होय तब होय हैं सो रूपके उपादान
तो हैं पृथ्वी जल तेज और असमवायि कारण है उपादानोंके अवयवं
रूप सो नै तो उपादान कारण सिद्ध हुये और नै उपादानों के अ
सिद्ध भये तो कारणोंके विना रूपकी सिद्धि कैसें मानी जाय यातैं
मानणाँ असङ्गत है ।

ऐसें हीं रसन इन्द्रिय करिकैं जाणयाँ जाय ऐसा ज्यो गुण सो
और घ्राण इन्द्रिय करिकैं जाणयाँ जाय ऐसा ज्यो गुण सो गन्ध और
त्वगिन्द्रिय करिकैं जाणयाँ जाय ऐसा ज्यो गुण सो स्पर्श इन लक्षणों
कैं इन रस गन्ध स्पर्शोंका मानणाँ वी असङ्गत ही है अब कहो तुम
किसकूँ कहो हो ज्यो कहो कि ये एक है ये दोय हैं इत्यादिक जे व्यवहा
का ज्यो असाधारण कारण सो सङ्ख्या तो हम पूछैं हैं कि तुम अ
रण कारण किसकूँ कहो हो ज्यो कहो कि ज्यो एक कार्यका कारण हे
असाधारण कारण तो हम पूछैं हैं कि ये एक है ये दोय हैं इत्यादि
ज्ञान उनका कारण सङ्ख्या है अथवा नहीं तो तुमकूँ कहणाँ हीं
कि ये एक है ये दोय हैं इत्यादिक जे ज्ञान तिनको कारण सङ्ख्या
हम कहैं हैं कि सङ्ख्याकूँ ये एक है ये दोय हैं इत्यादिक व्यवहा
असाधारण कारण नहीं मानणाँ चाहिये काहेतैं कि ये तो उभयं
कौ कारण भई यातैं ये एककौ कारण न भई किन्तु व्यवहार और
इन दोनूँका कारण भई ज्यो कहो कि व्यवहार और ज्ञान इन
भई तो यां व्यवहारकौ कारण भई यातैं ये व्यवहारकौ अ
है तो हम कहैं हैं कि तुमनैं परमेश्वर काल इत्यादिकूँ भी अ

ण कारण क्यौं नहीं मानैं सो कहो ये परमेश्वर और काल इत्यादिक वी
र्थ कार्यांके कारण हैं तो वी एक एक के कारण होंगे ज्यो कहो कि एक
क कार्यकी दृष्टि तैं साधारण कारणोंकूं वी असाधारण कारण कहैंगे तो
हम कहैं हैं कि सर्व कार्यांकी दृष्टितैं साधारण कारण मानैंगे
ग्रेर एक कार्यकी दृष्टितैं असाधारण कारण मानैंगे तो स्वरूपतैं
ारण नहीं हैं ऐसैं वी कहणाँ हीं पडैगा तो सङ्ख्या वी स्वरूपतैं
ारण नहीं है ऐसैं वी कहणाँ पडैगा तो सङ्ख्याकूं स्वरूपतैं मानणाँ अ-
ङ्गत हुवा ज्यो कहो कि स्वरूपतैं कारण नहीं होणैं तैं सङ्ख्याका मानणाँ
असङ्गत होगा तो परमात्माका मानणाँ वी असङ्गत होगा काहेतैं कि पर-
ात्मा वी स्वरूपतैं कारण नहीं है तो हम कहैं हैं कि परमात्माकूं तो श्रु-
ते सत्यरूप वर्णन करै है यातैं परमात्मा तो है और सङ्ख्याकूं स्वरूप तैं
द्ध वी कही नहीं यातैं सङ्ख्याका मानणाँ असङ्गत ही है ।

ऐसे हीं ये इतनें परिमाणवाला है इस व्यवहारका ज्यो असाधारण
ारण सो परिमाण और ये इस सैं जुदा है इस व्यवहारका ज्यो असा-
ारण कारण सो पृथक्त्व और ये इससैं संयुक्त है इस व्यवहार का ज्यो अ-
ाधारण कारण सो संयोग और ये इससैं पर है इस व्यवहारका ज्यो
साधारण कारण सो परत्व और ये इससैं अपर है इस व्यवहारका ज्यो
साधारण कारण सो अपरत्व इनका मानणाँ वी असङ्गत ही है और वि-
ागका मानणाँ वी असङ्गत ही है काहेतैं कि संयोगका नाश करणें वा-
ा ज्यो गुण सो विभाग है ज्यो संयोग ही नहीं तो इस संयोगका नाश
रणेंवाला गुण मानणाँ असङ्गत ही है ।

अब कहो तुम गुरुत्व किसकूं कहो हो ज्यो कहो कि प्रथम ज्यो
तन क्रिया तिसका ज्यो असमवायि कारण सो गुरुत्व तो हम पूछैं हैं कि
म असमवायि कारण किसकूं कहो हो तो तुमकूं कहणाँ हीं पडैगा कि
र्यके समवायि कारण मैं समवाय सम्बन्ध करिकैं रहै और उस कार्यका का-
ण होय सो असमवायि कारण तो हम कहैं हैं कि कार्य तो भई तुमारी
तन क्रिया उसके उपादान कारण होंगे पृथ्वी और जल वे सिद्ध भये नहीं
तैं आधार विना गुरुत्व गुणका मानणाँ असङ्गत हुवा ऐसैंहीं द्रवत्वका
नणाँ वी असङ्गत ही है काहे सैं कि आद्यस्यन्दनका अर्थात् प्रथम भर-
का ज्यो असमवायि कारण सो द्रवत्व ये द्रव्यत्वका लक्षण है तो भरणाँ-

अर्थ ये है कि जिसका लक्षण नहीं तो रूप अलक्षण हीं सिद्ध है एवं
तैं ये तुमारा मान्याँ रूप परमात्मरूप सिद्ध होय है काहेतैं कि
पद् मैं परमात्माकूँ अलिङ्ग कह्या है सो अलिङ्ग शब्द और अलक्ष
समान अर्थकूँ कहैं हैं ज्यो कहो कि रूप शब्द करिकैं कह्या जाय हो
हम कहैं हैं कि रूप शब्द करकैं तो रूप शब्द ही कह्या जाय है य
शब्दकूँ रूप मानणाँ चाहिये ज्यो कहो कि रूप शब्द तैं भिन्न और
ब्द करिकैं कह्या जाय सो रूप तो हम कहैं हैं कि रूप शब्द क
रूप नाम ज्यो पुरुष सो ही कह्या जाय है और वो रूप शब्द सैं
है यातैं उस पुरुषकूँ ही रूप मानणाँ चाहिये और विचार करो कि
हार और लक्षण तो पदार्थ होय तब होय हैं सो रूपके उपादान
तो हैं पृथ्वी जल तेज और असमवायि कारण है उपादानोंके अभ
रूप सो नै तो उपादान कारण सिद्ध हुये और नै उपादानों के
सिद्ध भये तो कारणोंके विना रूपकी सिद्धि कैसे मानी जाय यातैं

कारण क्यों नहीं मानें सो कहो ये परमेश्वर और काल इत्यादिक वी कार्योंके कारण हैं तो वी एक एक के कारण होंगे ज्यो कहो कि एक कार्यकी दृष्टि तें साधारण कारणोंकूं वी असाधारण कारण कहेंगे तो कहें हैं कि सर्व कार्योंकी दृष्टितें साधारण कारण मानेंगे र एक कार्यकी दृष्टितें असाधारण कारण मानेंगे तो स्वरूपतें रण नहीं हैं ऐसें वी कहणाँ हीं पड़ेगा तो सङ्ख्या वी स्वरूपतें रण नहीं है ऐसें वी कहणाँ पड़ेगा तो सङ्ख्याकूं स्वरूपतें मानणाँ अ-ङ्गत हुवा ज्यो कहो कि स्वरूपतें कारण नहीं होणेंतें सङ्ख्याका मानणाँ सङ्गत होगा तो परमात्माका मानणाँ वी असङ्गत होगा काहेतें कि पर-त्मा वी स्वरूपतें कारण नहीं है तो हम कहें हैं कि परमात्माकूं तो श्रु-सत्यरूप वर्णन करै है यातें परमात्मा तो है और सङ्ख्याकूं स्वरूप तें ड वी कहीं नहीं यातें सङ्ख्याका मानणाँ असङ्गत ही है ।

ऐसे हीं ये इतनें परिमाणवाला है इस व्यवहारका ज्यो असाधारण रण सो परिमाण और ये इस सें जुदा है इस व्यवहारका ज्यो असा-रण कारण सो पृथक्त्व और ये इससें संयुक्त है इस व्यवहार का ज्यो अ-रण कारण सो संयोग और ये इससें पर है इस व्यवहारका ज्यो धारण कारण सो परत्व और ये इससें अपर है इस व्यवहारका ज्यो धारण कारण सो अपरत्व इनका मानणाँ वी असङ्गत ही है और वि-का मानणाँ वी असङ्गत ही है काहेतें कि संयोगका नाश करणें वा-ज्यो गुण सो विभाग है ज्यो संयोग ही नहीं तो इस संयोगका नाश वेवाला गुण मानणाँ असङ्गत ही है ।

अब कहो तुम गुरुत्व किसकूं कहो हो ज्यो कहो कि प्रथम ज्यो न क्रिया तिसका ज्यो असमवायि कारण सो गुरुत्व तो हम पूछें हैं कि असमवायि कारण किसकूं कहो हो तो तुमकूं कहणाँ हीं पड़ेगा कि के समवायि कारण में समवाय सम्बन्ध करिकें रहे और उस कार्यका का-होय सो असमवायि कारण तो हम कहें हैं कि कार्य तो भई तुमारी न क्रिया उसके उपादान कारण होंगे पृथ्वी और जल के बिन्दु भये नहीं

रूप ज्यो क्रिया सो यहाँ कार्य मानीं जायगी उसके उपादान होवे,
जल तेज ये सिद्ध भये नहीं यातैं आधार विना द्रवत्वका मानणां -
है ऐसें हीं चूर्णके पिण्ड होणेंका कारण गुण स्नेह मान्यां है ओर -
उसकी स्थिति मानीं है तो जल सिद्ध हुवा नहीं यातैं स्नेहका मानणां
असङ्गत ही है ओर शब्दके गुणपणेंका खण्डन आकाशके खण्डनमें
लिखा है यातैं शब्दगुणका मानणाँ असङ्गत है ओर ज्ञान जो है
त्मरूप सिद्ध हुवा है यातैं ज्ञानकूँ गुण मानणाँ असङ्गत है अ
परमात्मरूप ही सिद्ध हुवा है यातैं इसकूँ वी गुण मानणाँ असङ्
आत्मा नित्य सुखरूप है यातैं इसमें दुःख ओर द्वेष ये वणें सकें
पहिलें आत्मामें इच्छा ओर यत्न इनके नहीं सिद्ध होणें तैं कर्त्ता
हुवा नहीं यातैं इसमें धर्म ओर अधर्म मानणाँ असङ्गत है ओ
तुमनें तीन मानें हैं वेग १ भावना २ ओर स्थितिस्थापक ३ इन
तुमनें पृथ्वी जल तेज वायु ओर मन इनमें मानों हो सो ये सि
ओर स्थितिस्थापकक तुम पृथ्वीमें मानों हो सो सिद्धभई नहीं
ना तुम अनुभवतैं जन्य मानों हो ओर अनुभवकूँ तुम जन्य माने
अनित्यज्ञान सिद्ध हुवा नहीं ओर विषय कोई वी सिद्ध हुवा न
इन तीनों प्रकारके संस्कारोंका मानणाँ वी असङ्गत ही है।

अब कहो गुणोंका मानणाँ असङ्गत हुवा अथवा नहीं ज्यो
गुणोंका मानणाँ असङ्गत हुवा तो हम कर्मकूँ अर्थात् क्रियाकूँ सि
तो हम कहें हैं कि तुमारे क्रियाका लक्षण ये है कि संयोगतें भिन्न
योगका असमवायि कारण होय सो कर्म तो ज्यो संयोग ही सिद्ध
तो उसका कारण कर्म मानणाँवी असङ्गत ही है।

ऋषिनैं वी द्रव्य गुण कर्म इन तीनूंकूं सत् कहे हैं और श्रुतिनैं सत् पर-
रमाकूं कहाहै तो कणाद ऋषिका कथन और श्रुति इनकी एक वाक्यता
ोनै तैं द्रव्य गुण कर्म परमात्मरूप सिद्ध हुये और गौतम ऋषि और कणाद
षि दोनूं हीं न्यायके आचार्य हैं यातैं कणाद ऋषिका वी असत्कार्यवाद मत
तो इनके मततैं वी कार्यपणें की दृष्टितैं कार्य असत् हैं ये ही सिद्ध
ाय है।

और देखो कि ये कठोपनिषद्की श्रुति है कि

मृत्योः स मृत्यु माप्नोति य इह नानेव पश्यति ॥

इसका अर्थ ये है कि ज्यो नाना जैसा देखता है सो मरण सैं मरण
ं प्राप्त होय है अर्थात् वारम्वार मरता है तो इस श्रुति सैं ये सिद्ध
ाय है कि जिसकूं अभेदज्ञान है और ऐसैं देखै है कि सर्व ज्यो है ब्रह्म
ी है सो ही नाना जैसा दीखै है तो उसकूं यी अनर्थ की माप्ती होय है
ी गौतमकणाद इत्यादिक ऋषि सर्वज्ञ रहे उनका तात्पर्य भेद मानणें में
ये कैसें मान्यां जाय यातैं सर्व ऋषियोंका तात्पर्य अभेद में हीं है
ार विचार करिकैं देखो कि द्रव्य गुण कर्म जे कार्य हैं उनका ही मूल उपा-
ान परमाणु हो सकै है और उनकूं हीं कणाद ऋषि नैं सत् शब्द करिकैं
ाहे तो परमाणु शब्दका अर्थ परमात्मा हीं है ज्यो कहो कि परमाणु
ूल उपादान होणें तैं हीं द्रव्य गुण कर्म सद्रूप सिद्ध होगये तो कणाद
षि नैं द्रव्य गुण कर्मोंकूं ज्यो फेर कहे कि ये सत् हैं तो इसका तात्पर्य
कहा है तो हम कहैं हैं कि नित्य द्रव्य और नित्य गुण जे न्याय में मानें
हैं उनका मूल उपादान परमाणु नहीं मान्यां है तो किसी कूं ऐसा भ्रम
न होजावै कि नित्य द्रव्य और नित्य गुण ये सद्रूप परमात्मा नहीं हैं यातैं
कणाद ऋषिनैं द्रव्य गुण कर्म इनकूं सत् कहे हैं।

ज्यो कहो कि द्रव्य गुण कर्म इन में सत्ता जातिके रहणें तैं कणाद
ऋषिनैं इन कूं सत् कहे हैं तो हम कहैं हैं कि द्रव्य गुण कर्म इनकूं सत्
कहे यातैं ये सिद्ध होय है कि जाति विशेष समवाय ये असत् हैं यातैं
सत्ता जातिके रहणें तैं द्रव्य गुण कर्म इनकूं सत् कहे हैं ये
असङ्गत है।

ज्यो कहोकि न्यायके आचार्यों नैं जिन पदार्थोंकूं प्रमाण सिद्ध ताये हैं उनका आप अपलाप कैसें करो हो तो हम कहें हैं कि हमनैं इनकूं परमात्म रूप सिद्ध किये हैं अपलाप तो गौतमजीनैं हीं किया देखो न्याय दर्शन मैं ये सूत्र है कि

स्वप्नमिथ्याभिमानवदयं प्रमाणप्रमेयाभिमानः

इसका अर्थ ये है कि प्रमाण और प्रमेय इनका ज्यो अभिमान स्वप्नका झूंटा ज्यो अभिमान ताकी तरेंह सें है अर्थात् जैसें स्वप्न का अभिमान झूंटा है तैसें प्रमाण और प्रमेय जे हैं तिनका अभिमान ज्यो है यो झूंटा है अब विचार दृष्टि तैं देखो स्वप्न का ज्यो अभिमान सो झूंटा है सो स्वप्न के विषय झूंटे हैं यातैं झूंटा है तैसें हीं प्रमाण प्रमेय जे हैं तिनका अभिमान ज्यो झूंटा है सो प्रमाण और प्रमेय जे ते झूंटे हैं यातैं झूटा है ये गौतमजीके सूत्रका तात्पर्य है तो तुमहीं गौतमजी नैं पदार्थोंका अपलाप किया है अथवा हम अपलाप करें हैं

ज्यो कहो कि ये मिथ्याभिमान मिटे कैसें तो हम कहें हैं कि वे जी ही कहें हैं कि

मिथ्योपलब्धिविनाशस्तत्वज्ञानात् स्वप्नविषयाभिमानवत्प्रतिबोधे ॥

इसका अर्थ ये है कि मिथ्या ज्ञानकी निवृत्ति तत्वज्ञान तैं है जैसें जागे सें स्वप्न के विषयोंका अभिमान निवृत्त होय है।
ज्यो कहो कि तत्व ज्ञान का स्वरूप कहा है तो इसका स्वरूप कहें हैं

दोहा ॥

वासुदेवमय सकल ये श्रुतियाँ कहत पुकार।
ज्ञान साधि इमि तात तू सहज उतारि भवपार ? ॥
कारण भव तारण अमल वारण पति रिछपाल।
गिरिधारण जारण कुमति दुखदारण नँदलाल ॥
मोर मुकुट करमें लकुट जिहिं कटि तट पट पीत।
लटपट [illegible] कटक गटि जिहिं [illegible]

प्रेम लाय नँदलाल सों ज्यो टपकावै नैन।
हृदय तिमिर ताको मिटै या विध उपजत चैन४ ॥

इति श्री जयपुरनिवासि दधीचिवंशोद्भव डेरोल्यायटङ्क पण्डित
गोपीनाथविरचिते स्वानुभवसारे वेदान्त मुख्यसिद्धान्ते
श्रीज्ञानसिद्धगुरूपदेशे न्यायमतविवेचने
प्रथमो भागः १ ॥

॥ श्रीकृष्णो जयति ॥

द्वितीय भागः ॥

दोहा ॥

गोपी मण्डल वृत्ति सब साक्षी कृष्ण सरूप ।
सन्धिन में भासत रहे ये है रास अनूप १ ॥
गोपी हरिकी प्राण है हरि गोपिन के प्राण ।
भेद वेद माने नहीं या विध समझि सुजान२ ॥

चोपाई ॥

सुनि उपदेश विमल मति हरख्यो । रोम उठे परमानँद वर
नैनन दोऊ नीर बहायो । वासुदेवमय जगत लखा
तनकी गयो सकल सुधि भूली । दई भेद सिर दो कर
भई समाधि विकलप न लेख्यो । आप आपकूँ हरिहिं दे
महुर्त दोय माँहि सुधि पाई । गुरुपद दीन्हो सीस न
गुरु कर दे सिर लियो उठाई । अपणे कण्ठ लियो लपटा
पुनि बैठाइ वाच इमि बोली । हूवे सन्देह फेरि यो गा
कठिन पन्थ ये कृष्ण बनायो । सो मैं तात तोद दरसा

दोहा ॥

या विध गुरु के वचन सुणि शिष्य विमलमति नाम
मदन लग्यो यों जोरि कर पनि कीन्हों परणाम

कीन्हों प्रभु उपदेश ज्यो करि करुणा की दृष्टि।
भेद अग्नि नाश्यो सहज भई अमृतकी वृष्टि ८
अव में पूरणकाम हूँ नहिँ मेरे सन्देह ।
तउ मत ले वेदान्तको पूछों कछु रुचि येह ९
पुनि पुनि आनँद लाभतें को धापे जग माँहिँ ।
यातें मो मन हटत है प्रश्नपन्थतें नाँहिँ १०
याविधि शिषको वचन सुणिँ ज्ञानसिद्ध मुसकाय ।
कहन लगे सो कहत हूँ सुनिये चित्तलगाय ११

अब हम पूछैं हैं कि ज्यो हमनैं न्यायके मतका विवेचन तुमकूँ क-
े तिससैं तुम कहा समुझे सो कहा ज्यो कहो कि न्यायके आचार्योंका
भिप्राय

सर्वं खल्विदं ब्रह्म ॥

इस श्रुतिके अनुसार सर्वकूँ ब्रह्मरूपत्वप्रतिपादनमैं है और
थोंके वर्णनमैं नहीं है जयो पदार्थों के वर्णन मैं इनका अभि
होता तो न्याय के आचार्य द्रव्य गुण कर्म इनमैं सत् ऐसा
हार नहीं करते काहेतैं कि द्रव्य गुण कर्म इन मैं सत् ऐसे
हार करखैं तैं उनका अभिप्राय ये सिद्ध होय है कि ये जाति वि-
और समवाय इनकूँ असत् मानैं हैं और विशेष तो नित्य द्रव्यों मैं
वाय सम्बन्ध तैं रहैं हैं और जाति जयो है सो द्रव्य गुण कर्म इनमैं सम-
सम्बन्ध तैं रहै है और कार्य द्रव्य अवयवों मैं समवायसम्बन्ध करिकैं
हैं और गुण तथा क्रिया ये द्रव्यों मैं समवायसम्बन्ध करिकैं रहैं हैं ऐसे
यके आचार्य मानैं हैं तो इस सैं ये सिद्ध होय है कि द्रव्य गुण कर्म जा-
और विशेष इनका जयो सम्बन्ध सो असत् है अर्थात् मिथ्या है अब
इनका अभिप्राय भेद मानणैं मैं होय तो इनके सम्बन्धकूँ असत्
कहैं तो इनका अभिप्राय ये ही है कि द्रव्य गुण और कर्म जिनकूँ
वे सद्रूप एक परमात्मा ही हैं सम्बन्ध तो भेद होय वहां होय ये तो
हैं आपका आपसैं सम्बन्ध कहणां बणै नहीं । और द्रव्य गुण तथा
इनमैं जयो जाति और विशेष इनका समवायसम्बन्ध कहा तो सत् मैं

असत् जे हैं तिनको असत् सम्बन्ध है ये कहा तो न्यायवालोंका
त्पर्य सिद्ध होगया कि सद्रूप परमात्मामैं जाति विशेष समवायये नि
ये तात्पर्य मैं नैं आपके चरणारविन्दोंकी कृपातैं समुझ्या है ज्यो
चरणारविन्दोंकी कृपा नहीं होती तो न्यायके आचार्योंका ये गूढ़ अ
मैं कैसें आवेंता ॥ ओर आपका दर्शन हुवा सो न्यायके आचार्योंकी
का फल है काहेतैं कि गैातमजी महाराजनैं ये सूत्र लिखा है कि

ज्ञानग्रहणाभ्यसस्तद्विद्यैश्च सह सम्वादः॥

ज्ञानविद्यावाले जे हैं तिन करिकैं साथ ज्यो सम्वाद है सो
नग्रहणाभ्यास है ये इस सूत्र का अर्थ है तो यत्न करतें करतें आपका
हुवा मैंनैं ये विचार किया कि न्यायविद्या ज्यो है सो ज्ञानविद्या
है ॥ ओर श्री कृष्ण महाराज नैं भी अर्जुनकूं कही है कि

उपदेक्ष्यन्ति ते ज्ञानं ज्ञानिनस्तत्वदर्शिनः॥

इसका अर्थ ये है कि तत्वसाक्षात्कार वाले ज्ञानी तोकूं इ
उपदेश करैंगे सो वे पुरुष आप हैं ज्यो कहो कि न्यायविद्या ज्यो
ज्ञान विद्या नहीं है ये तुम कैसें जाणों हो तो हम कहैं हैं कि य
हां ये सूत्र लिखा है कि

तत्वाध्यवसायसंरक्षणार्थं जल्पवितण्डे बीज
रोहसंरक्षणार्थं कण्टकशाखावरणवत् ॥

इसका अर्थ ये है कि तत्वनिश्चयकी रक्षाके अर्थ जल्प वि
तण्डा हैं जैसें बीज ओर अङ्कुर इनकी रक्षाके अर्थ कण्टकशाखा
का आवरण होय है ओर वात्स्यायन ऋषिके किये प्रमाण प्रमेय सू
त्र मैं लिखा है कि

तेषांपृथग्वचनमन्तरेणाध्यात्मविद्यामात्रमि
स्यात् यथोपनिषदः ॥

इसका अर्थ ये है कि संशयादिकका जुदा कथन न होय तो
अध्यात्म विद्या होय जैसें उपनिषद् जे हैं ते केवल अध्यात्म विद्या
मैं के जाणूं हूं कि न्याय विद्या अध्यात्म विद्या नहीं है उपनिष

अध्यात्म विद्या हैं ॥ ज्यो कहो कि ऐसें हमारा कथन विरुद्ध होगा का-
ं कि हमनें कहीहै कि न्यायका तात्पर्य केवल परमात्माके मानणें में
पदार्थोंकूं मानणें में नहीं है तो हम कहें हैं कि आपका कथन विरुद्ध
हीं है काहे तें कि आपनें तो आज पर्यन्त कोई वी ग्रन्थकारनें लिखा
हीं सो न्यायका गूढ तात्पर्य वेदके अनुकूल कहा है ॥ ज्यो कहो कि ग्रन्थ
रोंकूं ये तात्पर्य मालुम रहा ओर नहीं लिखा है अथवा ये तात्पर्य नहीं
लुम रहा यातें नहीं लिखा है ये कहो तो हम कहें हैं कि इसका निर्ण-
हम नहीं कर सकें काहेतें कि नहीं मालुम होयें तें जैसें नहीं लिखणा
णे है तैसें मालुम होणें तें वी नहीं लिखणाँ वणें है काहेतें कि इस ता-
र्यकूं गूढ जाणिं करिकें ग्रन्थकार गूढ ही राखें तो वी आश्चर्य नहीं है ॥
हाराज न्यायमतके विवेचन तें जैसा समुझा तैसें आपतें मालुम किया
समें ज्यो कुछ न्यूनता होय तो आप कृपा करिकें फेरि उपदेश करि देयो॥
हम कहें हैं कि तुमारी बुद्धि निर्मल ओर निर्विक्षेप है ओर अति ती-
है ऐसे बुद्धिमान् पुरुष अध्यात्मविद्याके उपदेश लेणेंके अधिकारी
य हैं ॥

अब तुमनें ज्यो कही कि मैं वेदान्तका मत लेकरिकें पूछणेंकी इ-
छूं हूं सो कहो तुमारा प्रश्न कहा है परन्तु प्रथम ये कहो कि तुम नें
तके कोन कोन ग्रन्थ देखे हैं ॥ ज्यो कहो कि वेदान्तके ग्रन्थ तो मैं
स्कृत में तथा भाषा में बहुत देखे हैं परन्तु विचारसागर ओर वृत्ति-
र नाम जे दोय सद्ग्रन्थ हैं उनकूं बहुत ही देखे हैं कारणये है कि
ग्रन्थों में बहुत ग्रन्थों में तें अर्थ संग्रह किया है अब मैं ये पूछूं हूं कि
नें पूर्व ये कही कि आत्मा मैं ज्यो न ज्यादयाँगयापणाँ है सो स्वप्र-
णाँ है तो न आवयाँगयापणाँ ज्यो है सो अज्ञातता शब्दका अर्थ है
आवयाँगयापणाँ ज्यो है सो ज्ञातताशब्दका अर्थ है अर्थात् अज्ञातता-
भाषामें न आवयाँगयापणाँ कहें हैं ओर आदयाँगयापणाँ भाषा में
... कहें हैं ओर अज्ञातता शब्दका अर्थ तो ये है कि अज्ञानविषयता
ज्ञातता शब्दका अर्थ है ज्ञानविषयता तो ज्यो आत्मा न आदयाँ-
यणाँ करिकें आदयाँ गया तो अज्ञातता करिकें आदयाँगया ज्यो अज्ञा-
करिकें आवयाँ गया सो अज्ञानविषयता करिकें आदयाँ गया तो अ-
विषयता करिकें ज्यो आदयाँ उसका आकार ये है कि आत्मा मैं न

जाणयाँ हुवा है अब ज्यो ज्ञानीकूँ आत्मा मेरै न जाणयाँ हुवा है
ज्ञान हुवा तो ज्ञानी पुरुष मैं अज्ञानीतैं विलक्षणता कहा भई अर्थात्
नी पुरुष अज्ञानीतैं विलक्षण न हुवा काहेतैं कि अज्ञानीकूँ वी ऐसा
होवै है कि आत्मा मेरै न जाणयाँ हुवा है अर्थात् मैं आत्माकूँ नहीं
ता हूँ ॥ तो हम पूछैं हैं कि अज्ञातता शब्दका अर्थ ज्यो तुमनैं ये
कि अज्ञानविषयता तो ये कहो कि अज्ञानविषयता ज्यो है सो कि
है अर्थात् वेदान्तमत वाले इसका स्वरूप कहा मानैं हैं तो इस प्र
तात्पर्य है कि जैसें न्याय मैं ये घट है इस ज्ञानके विषय तीन मानें
तो घट और दूसरी घटत्व जाति और तीसरा घट द्रव्य और घटत्व
इनका सम्बन्ध तो इनमैं ज्यो विषयता है तिसकूँ विशेष्यतारूपा
तारूपा संसर्गतारूपा मानी है अर्थात् घटमैं ज्यो ज्ञानकी विषयता है
सकूँ तो विशेष्यतारूपा मानीं है और घटत्व मैं ज्यो ज्ञानकी विषय
सो प्रकारतारूपा है और घट घटत्व जे हैं तिनका ज्यो सम्बन्ध है
ज्यो ज्ञानकीविषयता है सो संसर्गतारूपा है ऐसैं मानी है तैसें मैं
ज्ञात है इस प्रतीतिसें ज्यो घटमैं अज्ञातता मानी जाय है अर्थात्
विषयता मानीं जाय है सो विशेष्यतारूपा है अथवा प्रकारतारूपा है
या संसर्गतारूपा है अथवा विशेष्यतादित्रितयरूपा है अथवा इन
विलक्षण है तो विशेष्यतादित्रितय मैं कोई एक रूपा तो नहीं मा
कोगे काहेतैं कि विनिगमना नहीं है और ज्यो विशेष्यतादित्रित
मानोंगे तो त्रितय शब्द तीनके समुदायकूँ कहै है और तीनका
यह प्रकार करिकै होसकै है तो विनिगमना नहीं होवै तैं किसी
के समुदायरूप नहीं मान सकोगे और ज्यो च्यारोंतैं विलक्षण
तम अज्ञानकी विषयताका स्वरूप कहो परन्तु प्रथम ये कहो कि
विषयि भाव ज्यो है ताकूँ पदार्थका ज्ञान होय तबी हीं मानों हो
पदार्थका अज्ञान होय तहाँ बी मानों हो ज्यो कहो कि पदार्थका
नहीं हीं विषयविषयिभाव होय है तो हम कहैं हैं कि अज्ञात
नर्हा असङ्गत हुवा काहे तैं कि अज्ञान विषयकूँ अज्ञात कहा है
नकूँ तुम अर मानों हो ओ अज्ञात भइ हुवा तो वे पदार्थ
कैसें करै हैं। वेदान्तमत वाले यो ज्ञान दो प्रकारका मानें हैं एक
मूल ज्ञान है और दूसरा अन्तःकरणका ओ वृत्ति तद्रूप ज्ञान है

भूत ज्ञानके विषय तो अन्तःकरण और अन्तःकरणकी वृत्तियां हैं और
वृत्तिरूप जो ज्ञान ताके विषय अन्य पदार्थ हैं तो वेदान्तमतवाले भी
पदार्थोंका ज्ञान होय तहाँ हीं विषयविषयिभाव मानैं हैं अब जो अ-
ज्ञान जड हुवा तो पदार्थोंके साथ इसका विषयविषयिभाव कैसें होय ॥
जो कहो कि न्यायवाले भी कोई ज्ञानविषयताकूं विषयरूपा मानैं हैं और
कोई ज्ञानरूपा मानैं हैं और कोई ज्ञाततारूपा मानैं हैं परन्तु या ज्ञात-
कूं ज्ञानरूपा नहीं मानैं हैं किन्तु ज्ञानजन्य मानैं हैं तैसें हम वेदान्त
तसें ज्ञान विषयताकूं ज्ञाततारूपा मानैं हैं परन्तु इस ज्ञातताकूं ज्ञान-
पा मानैं हैं काहेतैं कि वेदान्तमतवाले अन्तःकरणावच्छिन्न चेतनकूं प्र-
ता मानैं हैं और अन्तःकरणकी वृत्तिकूं प्रमाण मानैं हैं और जहाँ
माण करिकैं पदार्थका प्रत्यक्ष होय है तहाँ ऐसें मानैं हैं कि आभास स-
हित अन्तःकरणकी वृत्ति विषयतैं मिल करिकैं विषयाकार होय है तहाँ
त्ति तो विषयके अज्ञानकूं दूर करै है और वृत्ति मैं जो आभास है सो
विषयका प्रकाश करै है यो विषय मैं आभासका प्रकाश है उसकूं हम ज्ञान
नैं हैं और उस विषयकूं ज्ञात मानैं हैं और उस विषय मैं ज्ञानकी वि-
यता है उसकूं ज्ञाततारूपा मानैं हैं तो यो ज्ञातता ज्ञानतैं विलक्षण नहीं
ाहेतैं कि ज्ञातता जो है सो ज्ञात जो विषय ताका धर्म है तो ज्ञात
ो विषय ताका धर्म ज्ञान हीं है और जो यो ज्ञानतैं विलक्षण होय तो
वषय मैं आभासका प्रकाश न होय तब भी विषय मैं ज्ञात व्यवहार होवो
ाहिये ऐसें ज्ञातता ज्ञानरूपा है ॥ तैसेंहीं विषय मैं जो अज्ञातता है
उसकूं अज्ञानरूपा मानैं हैं जो कहो कि अज्ञातता शब्दका अर्थ अज्ञान
वषयता है और अज्ञान जो है सो जड है तो पदार्थोंके साथ इसका विषय-
वषयि भाव कैसें होय ॥ तो हम कहैं हैं कि जड पदार्थों मैं भी विषयवि-
यि भाव होय है देखो लोक मैं शस्त्रविद्यावाले जे हैं तिनकूं ऐसें कहते
खे हैं कि ये लक्ष्य अर्थात् निशाणा हमारे बाणका विषय है तो बाण भी जड
और लक्ष्य भी जड है इनका विषयविषयिभाव होय है और देखो कि
त्ति भी जड है और अज्ञान भी जड है इनका विषयविषयिभाव है जो
अज्ञान वृत्तिका विषय न होय तो वृत्ति अज्ञानका नाश कैसें करै ऐसें लक्ष्य
जो है सो बाणका विषय न होय तो बाण उसका नाश नहीं करै है ऐसें
हम जड पदार्थों मैं भी विषयविषयिभाव मानैं हैं ॥ परन्तु इतना भेद है

कि उदय और वाण इनका ज्यो विषयविषयिभाव है सो तो ... विषय है और अज्ञान तथा वृत्ति इनका ज्यो विषयविषयिभाव है तिस ब्रह्म चेतन प्रकाशे है अर्थात् शुद्ध चेतनका विषय है और अज्ञात पदार्थ का और अज्ञानका ज्यो विषयविषयिभाव है सो भी शुद्ध चेतनका विषय है ॥ तो हम पूछैं हैं कि ये जडपदार्थोंके विषयविषयिभावकी व्यवस्था तुमनैं कोन से ग्रन्थ मैं तैं कही है ज्यो कहो कि न तो निश्चल नैं अपणें किये संग्रहों मैं लिखी और मैंनैं अन्य ग्रन्थोंमें भी देखी परन्तु वेदान्त मत वाले ऐसैं मानैं हैं कि अज्ञान ज्यो है सो शुद्ध चेतन आश्रित रहै है और उसहीकूँ विषय करै है और विद्यारण्य पञ्चदशी के कूटस्थदीपमैं कही है कि

चिदाभासान्तधीवृत्तिर्ज्ञानं लोहान्तकुन्तवत्
जाड्यमज्ञानमेताभ्यां व्याप्तः कुम्भो द्विधोच्यते॥

इसका अर्थ ये है कि चिदाभास सहित अन्तःकरण की वृत्ति है सो ज्ञान है जैसें लोह करिकैं युक्त भाला होय है और जडता है सो अज्ञान है इन करिकैं व्याप्त ज्यो घट सो ज्ञात और अज्ञात कहावै है तो ये सिद्ध हुवा कि वेदान्तमतवाले अज्ञानका विषय चेतनकूँ भी कहैं हैं और जडकूँ भी मानैं हैं यातैं मैंनैं कल्पना करिकैं अज्ञात पदार्थ अज्ञान इनके विषयविषयिभावकी व्यवस्था कही है ॥ तो हम पूछैं हैं कि अज्ञान और वृत्ति इनका विषयविषयिभाव किसके मतमें है वेदान्तमतवाले तो वृत्ति और अज्ञान इन दोनूँकूँ केवल साक्षिभास्य मानैं हैं अब ज्यो अज्ञान और वृत्ति इनका विषयविषयिभाव मानोगे तो अज्ञान और वृत्ति इनमैं केवलसाक्षिभास्यता कैसें बणैंगी सो कहो। कहो कि अज्ञानमैं ज्यो केवलसाक्षिभास्यता है सो तो प्रकाशकता और अज्ञानमैं प्रतिबिम्बता ज्यो है सो नाशकतारूपा है अर्थात् अज्ञान है सो साक्षी ही प्रकाशित होय है और वृत्ति मैं नष्ट होय है और ... केवलसाक्षिभास्यता है सो भी प्रकाशकतारूपा ही है अर्थात् वृत्ति भी साक्षी ही प्रकाशित होय है तो अज्ञान और वृत्ति इनमैं केवल साक्षिभास्यता भी है और अज्ञान और वृत्ति इनका विषयविषयिभाव भी है ... तो हम कहैं हैं कि तुम्हारे कथन तैं ये सिद्ध हुवा कि साक्षीनैं ...

वृत्ति साक्षीतैं प्रकाशित अज्ञानकूं नष्ट करै है तो ये भी कहो कि वृत्ति
ज्यो आभास है उसका भी प्रकाश अज्ञानमैं होय है अथवा नहीं ज्यो
ा कि अज्ञानका प्रकाश चिदाभास नहीं करै है काहेतैं कि वेदान्तमत-
तौंका ये क्रम है कि प्रथम तो वृत्ति ज्यो है सो अज्ञानका नाश करैहै
र पीछैं विषयाकार होय है और पीछैं आभास विषयका प्रकाश करै है
आभासका जयो प्रकाश ताके पूर्वकालमैं हीं वृत्ति नैं अज्ञानका नाश
: दिया अब अज्ञान रहा ही नहीं तो आभास अज्ञानका प्रकाश कैसें करै
तें आभासका प्रकाश अज्ञानमैं नहीं होय है और साक्षी चेतन सर्वका सा-
क है किसीका भी बाधक नहीं और नित्यप्रकाशरूप है उससैं वृत्ति और
ज्ञान और आभास समान प्रकाशित होवैं हैं॥ तो ये और कहो कि वृत्ति
र अज्ञान इनका जयो साक्षी प्रकाश करै है सो निरावरण साक्षी प्रकाश
टे है अथवा सावरण साक्षी प्रकाश करैहै जयो कहो कि निरावरण साक्षी
काश करै है तो हम कहैं हैं कि वे वेदान्तमतवाले धन्य हैं जयो साक्षी प-
ात्माकूं अज्ञानका आश्रय और विषय मानैं हैं इनकी अपेक्षातैं तो भेद
ादी ही परम उत्तम हैं जयो परमात्म रूप जयो साक्षी है तिसमैं अज्ञान
हीं मानैं हैं देखो उनके जीव और परमात्मा इनका भेद मानणैं मैं ये प्र-
ण श्रुति है कि

द्वासुपर्णा सयुजा सखाया समानं वृक्षं परि
पस्वजाते तयोरन्यः पिप्पलं स्वाद्वत्त्यनश्नन्नन्योऽभि
चाकशीति॥

इसका अर्थ ये है कि दोय पक्षी हैं साथ रहैं हैं समान धर्मवाले हैं
मानवृक्षके ऊपर बैठे हैं उन मैं एक तो स्वादु जयो फल तिसकूं भोजन
रै है और दूसरा जयो है सो भोजन नहीं करैहै और साक्षी हो करिकैं देखै
तो ये श्रुति रूपकातिशयोक्ति अलङ्कार करिकैं उपदेश करै है यहां दो
पक्षी इस कथन तैं द्वैतवादी जीव और ईश्वर इनकूं लेवैं हैं तिन मैं
व तो कर्मफलकूं भोगै है और ईश्वर साक्षी हो करिकैं देखै है
मैं मानैं हैं और वेदान्तमतवाले दोय पक्षी इस कथनतैं आभास और
क्षी ऐसैं अर्थ करैं हैं और साक्षीकूं शुद्ध परमात्मरूप मानैं हैं॥ तो
खो द्वैतवादी साक्षीमैं अज्ञान नहीं मानैं हैं और वेदान्त मतवाले साक्षी
रमात्मा मैं अज्ञान मानैं हैं तो धन्य ही हैं परन्तु तुम ये कहो कि साक्षी-

कूँ निरावरण तुम हीं कहो हो अथवा और वी कोई वेदान्ती मानें
जयो कहो कि एक वाचस्पति मिश्रका मत ये है कि साक्षी में अज्ञान
है इस मतसें हम साक्षीकूँ निरावरण कहैं हैं तो हम पूछैं हैं कि व.
ति मिश्र अज्ञानका आश्रय किसकूँ मानैं हैं जयो कहो कि वाचस्पति
अ अज्ञानका आश्रय तो जीवकूँ मानैं हैं और परमात्माकूँ उस अज्ञ
विषय मानैं हैं तो हम पूछैं हैं कि जीवाश्रित जयो अज्ञान सो
मतमें जीवका आवरण करैगा जयो जीव अज्ञान करिकैं आवृत हुवा सो
सें घट अज्ञानावृत होणैं तैं अज्ञात कहावै है तैसें जीव जयो है सो
होणाँ चाहिये परन्तु मैं अज्ञानी हूँ ऐसी प्रतीति होय है यातैं मैं
अर्थ जयो जीव सो अज्ञान करिकैं युक्त मालुम होय है सो कैसें ॥
हो कि जैसें घट अज्ञात है इस प्रतीति सें अज्ञान करिकैं युक्त घट
होय है सो अज्ञान और घट ये दोनूँ हीं साक्षी परमात्माके विषय हैं
हीं मैं अज्ञानी हूँ इस प्रतीति सें अज्ञान और अहं शब्दका अर्थ
दोनूँ साक्षीके विषय हैं तो हम पूछैं हैं कि मैं अज्ञानीहूँ ऐसी जयो
सोही साक्षी है अथवा साक्षी इससें भिन्न है तो तुमकूँ कहणाँ
कि ये ज्यो प्रतीति सोही साक्षी है काहेतैं कि मैं शब्दका अर्थ जीव
अज्ञान ये दोनूँ इस प्रतीति के विषय हैं और अज्ञान और अज्ञानावृ
[illegible]

उपकृतं वहु तत्र किमुच्यते सुजनता प्रथिता भवता परम् विदधदीदृशमेव सदा सखे सुखितमास्व ततः शरदां शतम् ॥ १ ॥

इसका वाच्य अर्थ ये है कि कोई पुरुष अपणीं हानि करणें वाले पुरुष सें कहै है कि तैंनें मेरा वडा उपकार किया कहा कहूं तैंनें केवल सज्जनपणाँ विख्यात किया हे मित्र ऐसाही सदा करता हुया सुख सें सो वर्ष पर्यन्त जीवता रहै तो इसका तात्पर्यार्थ ये है कि तैंनें मेरी वडी हानि करी कुछ नहीं कहूं तैंनें केवल दुर्जनपणाँ विख्यात किया ऐसा ही सदा करनेवाला तू है यातैं अब ही मृत्युकूं प्राप्त हो १ तो लक्षणा वृत्तिसें इसका विपरीत अर्थ होय है तैसें हीं दीपक घटसें अप्रकाशित है इसका अर्थ ये है कि घट दीपक सें प्रकाशित है तो हम कहैं हैं कि साक्षी मेरैसें अप्रकाशित है अर्थात् साक्षी मेरै अप्रकाशित है इसका अर्थ ये है कि मैं साक्षीसें प्रकाशित हूं अर्थात् स्वप्रकाश साक्षी मेरा प्रकाश करै है ये मेरै साक्षी प्रकाशित है इसका अर्थ है ॥ अब कहो अज्ञान वादियोंकी मानी हुई आवरणरूपा अज्ञानविषयता नें तो साक्षी में सिद्ध भई और नें अहं शब्दका अर्थ ज्यो जीव तामें सिद्ध हुई तो आवरणकूं सिद्ध करणेंके अर्थ ही अज्ञान वादियोंनें अज्ञान मान्यां है तो आवरण सिद्ध नहीं होवें तैं अज्ञानका मानना असद्भूत हुवा अथवा नहीं ॥

ज्यो कहो कि अज्ञानवादी आवरण दो प्रकारके मानैं हैं एक तो असत्वापादक और दूसरा अभानापादक तो असत्वापादक ज्यो आवरण तिसका नाश तो परोक्ष ज्ञानतैं मानैं हैं और अभानापादक ज्यो आवरण तिसका नाश अपरोक्ष ज्ञानतैं माने हैं और अवान्तर वाक्यों करिकैं तो परोक्ष ज्ञान मानैं हैं और महावाक्यों करिकैं अपरोक्ष ज्ञान मानैं हैं और परोक्ष ज्ञानमें तो श्रद्धाकूं सहकारिकारण मानैं हैं और अपरोक्ष ज्ञान में विचारकूं सहकारिकारण मानैं हैं ये ज्ये श्रद्धा और विचार हैं तिनकूं सहकारिकारण मानणें में विद्यारण्य स्वामी नें ध्यानदीप में कही है कि

परोक्षज्ञानमश्रद्धा प्रतिबध्नाति नेतरत्
अविचारोऽपरोक्षस्य ज्ञानस्य प्रतिबन्धकः ॥ १ ॥

इसका अर्थ ये है कि अश्रद्धा ज्यो है सो परोक्ष ज्ञानकी प्रतिबन्धक है और अविचार ज्योहै सो अपरोक्ष ज्ञानका प्रतिबन्धक है १ तो अश्रद्धा और अविचार इनकूँ दोय ज्ञानोंके प्रतिबन्धक कहये तें इनके अभाव जे श्रद्धा और विचार ते कारण सिद्ध होय हैं और असत्वापादक ज्यो आवरण सो तो विषयाश्रित होय है और अभानापादक ज्यो आवरण सो प्रमाता में रहे है और इनका मूल कारण ज्यो अज्ञान सो शुद्ध चेतन में रहे । तो ये सिद्ध हुवा कि शुद्ध चेतनाश्रित ज्यो अज्ञान ताके किये जे असत्वापादक और अभानापादक आवरण ते विषय और प्रमाता में क्रमसें रहें हैं तो जहाँ आप्तवाक्य करिकैं विषयाश्रित असत्वापादक आवरण नष्ट हो जाय है तहाँ अभानापादक आवरण प्रतीत होय है जैसें घट है इस आप्तवाक्य करिकैं जिस घटमें असत्वापादक आवरण नष्ट होय तहाँहीं घट अज्ञात है ये प्रतीति होय है सो ये असत्वापादक अज्ञान अज्ञाततारूप नहीं है काहेतें कि ज्यो ये अज्ञाततारूप होय तो इसके रहतें भी मेरे घट अज्ञात है ऐसें प्रतीति होणी चाहिये सो होये नहीं जब ज्यो अज्ञातता स्वप्रकाशतारूपा सिद्ध किई तो ये असत्वापादक अज्ञान किंरूप होगा सो कहो । तो हम कहैं हैं कि अज्ञानवादी ऐसें मानें हैं कि असत्वापादक अज्ञानके रहते हुये अभानापादक अज्ञान रहै है और असत्वापादक अज्ञानके नहीं रहतें भी अभानापादक अज्ञान रहै है और अभानापादक अज्ञानके रहतें असत्वापादक अज्ञान रहै भी है और नहीं भी रहै है और अभानापादक अज्ञानके नहीं रहतें असत्वापादक अज्ञान रहै ही नहीं तो ये विचार करो कि अज्ञानकी निवृत्ति किंरूपा है सो ज्ञानके अभावका नाम अज्ञान है और निवृत्ति नाम भी अभावका ही है तो अज्ञानकी निवृत्ति ज्यो है सो ज्ञानके अभावका अभाव हुवा तो अज्ञानकी निवृत्ति ज्ञानरूपा भई तो अभानापादक अज्ञानके रहतें ज्यो असत्वापादक अज्ञान निवृत्त होगा तहाँ तो अज्ञानकी निवृत्ति परोक्षज्ञानरूपा होगी और जहाँ अभानापादक अज्ञानकी निवृत्ति होगी तहाँ अज्ञानकी निवृत्ति अपरोक्षज्ञानरूपा होगी परन्तु जहाँ अभानापादक अज्ञानकी निवृत्ति होगी तहाँ असत्वापादक अज्ञानकी निवृत्ति भी होगी सो किंरूपा होगी सो विचार बुद्धिसें देखें तो भी अपरोक्ष ज्ञानरूपा होगी काहेतें कि अज्ञान निवृत्ति ज्ञानरूपा होय है ये तो अनुभव सिद्ध है और यहाँ अपरोक्षज्ञानतें भिन्न कोई ज्ञान है नहीं जब कि

चार करो कि असत्वापादक ज्यो अज्ञान सो अभानापादक अज्ञान के रहतैं-हीं रहै है ये अज्ञानवादियोंके अनुभवसिद्ध है यद्यपि अभानापादक अज्ञानके रहतैं असत्वापादक अज्ञान नष्ट भी होजाय है परन्तु रहै तो अभानापादक अज्ञानके रहतैं हीं रहै ता ये सिद्ध हुवा कि असत्वापादक अज्ञान का और अभानापादक अज्ञान के नाशक जे परोक्ष ज्ञान और अपरोक्ष ज्ञान तिनके नहीं होणेंके समय मैं अभानापादक अज्ञान ज्यो है सो असत्वापादक अज्ञानका साधक है अब ज्यो अभानापादक अज्ञान स्वप्रकाशतारूप होणें तैं स्वरूपतैं असिद्ध हुवा तो असत्वापादक अज्ञान कैसैं सिद्ध होय यातैं असत्वापादक अज्ञान कि रूप होगा ये प्रश्न हीं असङ्गत है ॥

और ज्यो ये कही कि शुद्ध चेतनाश्रित ज्यो अज्ञान ताके किये जे असत्वापादक और अभानापादक आवरण ते विषय और प्रमातामैं क्रमतैं रहैं हैं ये कथन ता अत्यन्त ही असङ्गत है काहेतैं कि इस कथनतैं तो ये सिद्ध होय है कि शुद्ध ब्रह्मरूप परमात्मा ता परम अज्ञानी है और प्रमाता ज्यो है सो अज्ञानी है और विषय जे हैं ते अज्ञानी हैं काहेतैं कि देखो अज्ञानवादी शुद्ध चेतन मैं अज्ञान मानैं हैं और उस अज्ञानका विषय भी उसही चेतनकूं मानैं हैं यातैं ये ब्रह्मचेतन तो परम अज्ञानी हुवा और प्रमाता अज्ञानी हुवा काहेतैं कि प्रमाता मैं तो अज्ञान रहाही अज्ञान नैं प्रमाताका आवरण नहीं किया और विषयों मैं असत्वापादक अज्ञान रहा यातैं अज्ञानी भये और ज्यो कहो कि असत्वापादक और अभानापादक दोनूं हीं अज्ञान प्रमाता मैं रहैं हैं प्रमाताकूं विषय नहीं करैं हैं मैं अज्ञानी हूं इस प्रतीतिसैं तो प्रमातामैं अज्ञान रहै है और मैं नहीं हूं और नहीं मालुम होवूं हूं ये दोनूं प्रतीति होवै नहीं यातैं असत्वापादक और अभानापादक इन दोनूं अज्ञानोंका विषय प्रमाता नहीं है अन्य पदार्थ जे हैं ते इन अज्ञानोंके विषय हैं यातैं आपनैं ज्यो ये कही कि विषय जे हैं ते अज्ञानी हैं ये आपका कथन असङ्गत है तो हम कहैं हैं कि विषय अज्ञानी नहीं हैं ऐसैं मानों परन्तु ये विचार तो करो कि नित्य ज्ञान रूप ब्रह्म ता जिनके मतमैं परम अज्ञानी और प्रमाता अज्ञानी और विषय अज्ञानी नहीं उनका मत कैसा उत्तम है ।

अभी देखो तो यही इस मतमें सच्चिदानन्दरूप ब्रह्मकूँ कैसी आपत्ति है कि आप अज्ञानी और आपके अज्ञानका विषय और जीवके अज्ञानका विषय और जीवके ज्ञान तें जिसका अज्ञान मिटै देखो इनकी अपेक्षातें तो वाचस्पतिका कथन हीं उत्तम है कि परमात्मा में परम अज्ञानी होनेकी आपत्ति नहीं है ये तो कहो इस विषय में सद्गुरुही निश्चलदासजीनें कोन सा मत अङ्गीकृत किया है ॥ क्यों कहो कि सद्गुरुही नें तो विचारसागरके पंचम तरङ्ग में ऐसे लिखा है कि सङ्क्षेपशारीरक विवरण वेदान्तमुक्तावली अद्वैतसिद्धि अद्वैतदीपिका आदि ग्रन्थों में स्वाश्रयस्वविषयक ही अज्ञानका अङ्गीकार किया है और वाचस्पतिका मतभी लिखा है परन्तु इसकूँ खण्डित कर दिया है तो हम कहें हैं कि यातें तो ये सिद्ध होय है कि सद्गुरुही भी अज्ञानकूँ शुद्ध चेतनके आश्रित और उसकूँहीं विषय करनें वाला मानें हैं परन्तु ये कहो कि उसनें यहां प्रमाण तो कहा कहा है और वाचस्पति नें क्यों ये कही है कि मैं अज्ञानी हूँ ब्रह्मकूँ नहीं जानूँ हूँ इस अनुभवसें अज्ञान जीवाश्रित है और ब्रह्मकूँ विषय करैहै तासें गुरुहांनें ब्रह्माश्रित और ब्रह्मविषयक अज्ञानके माननें में अनुभव कहा कहा है क्यों कहोकि वहां प्रमाण और अनुभव तो कुछ भी कहा नहीं परन्तु एक तो ये युक्ति कहीहै कि जीव क्यो है सो अज्ञानका कार्यहै और अज्ञान निराश्रय रहै नहीं यातें ब्रह्माश्रित है और ये कही है कि शुद्ध चेतनाश्रित अज्ञानका जीवकूँ अभिमान होय है ॥ तो हम पूछें हैं कि ब्रह्माश्रित अज्ञानका जीवकूँ अभिमान होय है तो ईश्वरके आश्रित क्यों ज्ञान ताका जीवकूँ अभिमान नहीं होवे है यामें कारण कहा है सो कहो देखो ब्रह्माश्रित अज्ञानका जीवकूँ अभिमान हुवा तो अन्यके आश्रित वस्तुका अन्यकूँ अभिमान हुवा यातें ईश्वराश्रित ज्ञानका भी जीवकूँ अभिमान होवोहीं चाहिये इसका समाधान सद्गुरुहांनें कहा लिखा है सो कहो ॥

क्यों कहो कि उसनें तो इसका समाधान कुछ भी लिखा नहीं परन्तु हम इसका समाधान ये कहैं हैं कि जीव जदा है सो परमार्थे शुद्धरूप ही है यातें शुद्धाश्रित अज्ञानका जीवकूँ अभिमान होय है और जीव [illegible] है सो वास्तवे ईश्वररूप नहीं यातें ईश्वर के ज्ञानका जीवकूँ अभिमान है नहीं सो हम कहैं हैं कि ये उत्तर तो अज्ञानवादियों के मतसें सिद्ध है क्योंकि इनके मतमें जीव और ईश्वर इनमें भेद और अभेद इन

रकैं भेद मान्याँ है समष्टि नाम समुदायका है और व्यष्टि नाम प्रत्येकका है
और दृष्टान्त लिखा है कि जैसें वृक्ष समुदाय ज्यो है सो वन है तैसें तो ईश्वर
है और जैसें प्रत्येक ज्यो है सो वृक्ष है तैसें जीव है तो ये सिद्ध हुवा कि
प्रत्येक जीवोंके जे अविद्या उपाधि तिनका समुदाय सो ईश्वरकी उपाधि है
तो समुदाय ज्यो है सो प्रत्येक तैं भिन्न होवै नहीँ तो ईश्वर प्रत्येक जीव
रूप हुवा तो प्रत्येक जीव सर्वज्ञ होणेंहीं चाहिये ॥ और देखो कि ये दोष
वाचस्पतिके मतमैं नहीं है काहेतैं कि वाचस्पतिनैं तो अनन्त जीवों मैं
अनन्त अज्ञान मानैं हैं और अनन्त अज्ञानों के कल्पित अनन्त ईश्वर मानैं
हैं यातैं हमनैं इनकी अपेक्षातैं वाचस्पतिका मत उत्तम कहा है ॥ ज्यो क-
होकि वनका ज्यो आकाश सो वनकी दृष्टि करिकैं वनाकाश कहावै है और
वो ही आकाश प्रत्येक वृक्षकी दृष्टि करिकैं वृक्षाकाश कहावै है और वो ही
आकाश वन और वृक्ष इनकी दृष्टि विना केवल आकाश है तैसें हीं ब्रह्म
ज्यो है सो अविद्याकी दृष्टिसैं जीव कहावै है और वोही ब्रह्म मायाकी दृष्टि
करिकैं ईश्वर कहावै है और वो ही दोनूँकी दृष्टि विना शुद्ध ब्रह्म कहावै है तो
जैसें वनोपाधिक आकाश वनाकाश है तैसें अविद्या समष्टयुपाधिक ब्रह्म ई-
श्वर है वो ईश्वर अविद्या समष्टिका प्रकाशक है यातैं उसकूं सर्वज्ञ मानैं हैं
और अविद्या व्यष्टयुपाधिक ज्यो जीव सो अविद्याव्यष्टिका प्रकाशक है
यातैं अल्पज्ञ है और ब्रह्म ज्यो है सो ईश्वर और जीव इनका परमार्थ स्व-
रूप है तो जीव और ईश्वर ये अविद्याके आश्रय हैं यातैं तो ब्रह्मकूं
अविद्याका आश्रय कहा है और ब्रह्म ज्यो है सो जीव और ईश्वर इनकूं
अपणें स्वरूप तैं जुदा दीखै नहीं यातैं अविद्याका विषय है और ईश्वर-
कूं मैं ब्रह्म हूँ ये अखण्ड ज्ञान है यातैं ईश्वरकी दृष्टि मैं तो ब्रह्म कै आवरण
नहीं है और जीवकूं मैं ब्रह्म हूँ ये ज्ञान है नहीं और मैं ब्रह्मकूं नहीं
जाणूँहूँ ये ज्ञान है यातैं जीव अविद्याभिमानी है तो ये सिद्ध होगया कि
ब्रह्माश्रित और ब्रह्मविषयक ज्यो अज्ञान ताका अभिमान जीवकूं होय
है ॥ तो हम कहैं हैं कि ये व्यवस्था तो हमनैं आज पर्यन्त नैं तो कोई
अज्ञानवादीके ग्रन्थ मैं देखी और नैं किसीके मुख तैं सुणीं तुमनैं किस
ग्रन्थ मैं ये कल्पना देखी है सो कहो ॥

ज्यो कहो कि ये कल्पना तो मैंनैं किई है तो हम कहैं हैं कि ये
कल्पना परम उत्तम है और तुम परम बुद्धिमान् हो ज्यो ऐसी

कल्पना किई है ॥ अब तुम ही तुमारी कल्पनाका विचार करो देखो ज्यो
तुमनैं ये कही कि अविद्यासमष्टिका प्रकाशक होवै तैं ईश्वर सर्वज्ञ है सो
इससे ये सिद्ध होय है कि ब्रह्म हीं अविद्यासमष्टिकी कल्पना तैं ईश्व
है तो ये सिद्ध होय है कि वस्तुगत्या ब्रह्म तैं जुदा ईश्वर नहीं है और
ज्यो तुमनैं ये कही के अविद्याव्यष्ट्युपाधिक जीव है तो अविद्या व्यष्टि
की कल्पना तैं ब्रह्म हीं जीव है तो वस्तुगत्या ब्रह्म तैं जुदा जीव नहीं
है और ज्यो ये कही कि ईश्वर और जीव ये अविद्याके आश्रय हैं याते
ब्रह्मकूं अविद्याका आश्रय कहा है तो इस सैं ये सिद्ध होय है कि ब्रह्मतैं
जुदे अलीक जे ईश्वर और जीव इन के आश्रित ज्यो अविद्या ताका आश्र
ब्रह्म है तो ये सिद्ध हुआ कि ब्रह्म ज्यो है सो वस्तुगत्या अविद्याका आ
श्रय नहीं है और ज्यो ये कही कि ब्रह्म ज्यो है सो जीव और ईश्वर इनकूं
अपनें स्वरूपतैं जुदा दीसै नहीं यातैं अज्ञानका विषय है ॥ सो हम पूछै
हैं कि ये अज्ञानकी विषयता किंरूपा अर्थात् अज्ञानका विषय है इसका
अर्थ ये है कि ब्रह्म ज्यो है सो अपणां स्वरूप भूत ज्यो ज्ञान तातैं भिन्न
ज्यो ज्ञान ताका विषय नहीं है अथवा अज्ञान करिकैं ढका है ये अज्ञानका
विषय है इस वाक्य का अर्थ है ॥ ज्यो कहो कि स्वरूपभूत ज्ञानतैं भिन्न
ज्ञानका विषय नहीं है ये अज्ञानका विषय है इसका अर्थ है तो हम कहैं हैं
कि इस कथन तैं तो अज्ञानविषयता स्वप्रकाशतारूपा सिद्ध होय है योही
हम कहैं हैं सो ब्रह्मकूं अज्ञान करिकैं आवृत माननां अयुक्त हुआ तो अ-
ज्ञानका माननां व्यर्थ है ॥

शब्द का अर्थ जीव ये दोनूँ हैं तिनमैं अज्ञान तो विशेषण है और मैं शब्द का अर्थ विशेष्य है तो विशेषण ज्यो है सो विशेष्य मैं रहै है ये नियम है यातैं अविद्या करिकैं तुमारा मान्याँ ज्यो जीव तिसका आवरण होणाँहीं चाहिये ॥ ज्यो कहो कि ये तो केवल अविद्याका अभिमानी है अविद्या-का आश्रय तो ब्रह्म है यातैं अविद्या करिकैं जीवका आवरण नहीं होय है जैसैं राजापणाँका ज्यो अभिमानी तिससैं प्रजादण्डादिक जे राजापणाँके कार्य ते नहीं होय हैं तो हम कहैं हैं कि आत्मज्ञान करिकैं जीवका ब्रह्म होणाँ मानैं हैं सो असङ्गत हुवा काहेतैं कि जैसैं राजापणेंका अभिमान विवेकसैं मिटजाय तो पुरुष राजा नहीं हो जाय है ॥ ज्यो कहो कि पुरुष और राजा ये तो परस्पर भिन्न हैं यातैं राजापणेंका अभिमान मिटैं पुरुष ज्यो है सो राजा नहीं होय है और जीव तो वस्तुगत्या ब्रह्महीं है यातैं आत्मज्ञान करिकैं जीवका ब्रह्म होणाँ असङ्गत नहीं तो हम कहैं हैं कि जीव जो है सो वस्तुगत्या ब्रह्म है तो अज्ञान वादी ब्रह्ममैं अज्ञान और अज्ञानकी विषयता इनकूँ मानैं हैं तो जीव मैं यो ये दोनूँ मानाँ जो जीवमैं अज्ञान और अज्ञानकी विषयता मानी तो अज्ञान जिसमैं रहै उसका आवरण करै है तो जीवका आवरण होणाँ हीं चाहिये ॥

जो कहो कि जीवमैं अविद्याका किया आवरण है याही तैं मैं ब्रह्म हूँ ऐसैं जीवकूँ ज्ञान नहीं है तो हम पूछैं हैं तुम ब्रह्म किसकूँ कहो हो अर्थात् तुम ब्रह्मका स्वरूप कहा मानौंहो जो कहो कि हम ब्रह्मका स्वरूप सत् चित् और आनन्द मानैं हैं तो हम पूछैं हैं तुमहीं कहो मैं असत् जड दुःखहूँ ये प्रतीति तुमकूँ होवे है अथवा नहीं तो तुमकूँ कहणाँ हीं पडैगा कि ये प्रतीति तो मोकूँ होवै नहीं परन्तु मैं सत् चित् आनन्द हूँ ये प्रतीति यी होवै नहीं तो हम पूछैं हैं स्वरूपभूत जो अनुभव तासैं भिन्न ज्यो अनुभव ताका विषय मैं सच्चिदानन्द नहीं हूँ ये मैं सत् चित् आनन्द हूँ ये प्रतीति होवै नहीं इस वाक्यका अर्थ है अथवा स्वरूप भूत ज्यो अनुभव ताका विषय मैं सच्चिदानन्द नहीं हूँ ये मैं सत् चित् आनन्द हूँ ये प्रतीति होवै नहीं इस वाक्यका अर्थ है ज्यो कहो कि स्वरूपभूत अनुभव तैं भिन्न अनुभवका विषय मैं सच्चिदानन्द नहीं हूँ ये इस वाक्यका अर्थ है तो हम पूछैं हैं स्वरूपभूत अनुभवतैं भिन्न अनुभव मानि करिकैं

उसकी विषयताका निषेध अपणें सच्चिदानन्द रूपमैं करो हो अथवा स्वरूपभूत अनुभवतैं भिन्न अनुभव नहीं मानि करिकैं उस अनुभवकी विषयताका निषेध अपणें सच्चिदानन्दरूप मैं करो हो। ज्यो कहोकि भिन्न अनुभव मानि करिकैं उसकी विषयताका निषेध अपणें स्वरूपमैं करैं हैं तो हम पूछैं हैं ये अनुभव ज्यो तुम मान्यौं हो सो ब्रह्मरूप अनुभव है अथवा ब्रह्मतैं विलक्षण है ज्यो कहोकि स्वरूपभूत अनुभव तैं भिन्न मान्यां हुवा अनुभव ब्रह्मरूप है तो हम कहैं हैं कि

अयमात्मा ब्रह्म ॥

ये महा वाक्य ज्यो आत्माकूं ब्रह्मरूप वर्णन करैहै तो स्वरूपभूतअनुभव सैं भिन्न अनुभव मानणां असंभूत है॥ज्यो कहो कि विलक्षण है तो हम कहैं हैं कि स्वरूप भूत अनुभव तैं भिन्न और ब्रह्मतैं विलक्षण तो अनुभव वेदमैं कहीं भी वर्णन किया नहीं यातैं ये तुमारा मान्यां हुवा अनुभव तो अलीक है॥ज्यो कहो कि स्वरूपभूत अनुभव तैं भिन्न अनुभव नहीं मानि करिकैं अनुभव की विषयताका अपणे मैं निषेध करैं हैं सो हम कहैं हैं कि ये कथनतो बहुत ही ठीक है काहेतैं कि स्वरूपभूत अनुभवसैं भिन्न कोई अनुभव नहीं है यातैं अपणां सच्चिदानन्दरूप अन्य अनुभवका विषय नहीं है ये ही हम कहैं हैं॥ ज्यो कहो कि स्वरूपभूत ज्यो अनुभव ताका विषय मैं सच्चिदानन्द नहीं हूं ये मैं सत् चित् आनन्द हूं ये प्रतीति होवै नहीं इस वाक्यका अर्थ है तो हम पूछैं हैं तुम सत् चित् आनन्द हो अथवा नहीं ज्यो कहो कि मैं सत् चित् आनन्द नहीं हूं तो तुमारे कथन तैं ये सिद्ध होय है कि मैं असत् जड़ दुःख हूं सो कहो तुम असत् जड़ दुःख हो अथवा नहीं तो तुम ये ही कहोगे कि मैं असत् जड़ दुःख नहीं हूं तो ये सिद्ध हो गया कि मैं सत् चित् आनन्द हूं ये हमकूं अनुभव है॥ ज्यो कहो कि जैसें घट पट आदि पदार्थ ज्ञात होवैं हैं तैसैं ये सच्चिदानन्द आपणां ज्ञात होवै नहीं तो हम

[illegible]

विज्ञातम विजानताम् ॥

ये श्रुति वाक्य इसका अज्ञातता करिकैं ज्ञान वर्णन करे है सो ये अज्ञातता स्वप्रकाशतारूपा है काहे तैं कि वृत्तिरूप ज्यो ज्ञान ताके विषयकूँ तो लोक मैं ज्ञात कहैं हैं और वृत्तिरूपज्ञानका विषय नहीँ होय तिसकूँ अज्ञात कहैं हैं सो ये आत्मा वृत्तिरूपज्ञानका विषय नहीँ अर्थात् वृत्तिरूप ज्ञान इसका विषय है यातैं अज्ञात है और मैं असत् जड दुःख हूँ ये प्रतीति होवै नहीँ यातैं सच्चिदानन्द रूप करिकैं सर्व के ज्ञात है यातैं जीव मैं अज्ञानका किया आवरण मान्याँ सो असिद्ध हुवा तो अज्ञान जिस मैं रहै उस मैं आवरण करै है ऐसें मानणाँ असङ्गत हुवा ॥

और ज्यो कहो कि अज्ञान ज्यो है सो अपणाँ आश्रय और अपणें आश्रय तैं ज्यो अन्य इन दोनूँका आवरण करै है तो हम कहैं हैं कि ये कथन तो सर्वथा असङ्गत है काहेतैं कि ज्यो अज्ञान वादियोंका मान्याँ अज्ञान अपणें आश्रयका और अपणें आश्रय तैं ज्यो अन्य इन दोनूँका आवरण करता तो परमात्मा और जीव और जगत् इनमैं तैं कुछ बी प्रतीत नहीँ होता यातैं आवरण सिद्ध नहीँ होणें तैं आवरणका हेतु अज्ञान मानणाँ सर्वथा असङ्गत है ॥ अब कहो तुमनैं जयो पूर्व ये कही कि ब्रह्म ज्यो है सो जीव और ईश्वर इनकूँ अपणें स्वरूप तैं जुदा दीखै नहीँ यातैं अविद्याका विषय है ये कथन असङ्गत हुवा अथवा नहीँ जिसकूँ तुम नैं अविद्या मानीँ सो तो स्वप्रकाशतारूपा भई काहेतैं कि तुम अज्ञातताकूँ अज्ञान कहो हो और अविद्या ज्यो है सो अज्ञानका पर्याय है तो अविद्या अज्ञान हीँ है अब ज्यो परमात्मरूप साक्षी मैं अज्ञातता स्वप्रकाशता रूपा भई तो ज्ञाततारूपा हुई ज्यो अज्ञातता ज्ञाततारूपा भई तो ज्ञानरूपा भई तो ज्ञान ज्यो है सो परमात्म रूप है सो अज्ञातता परमात्म रूपा भई तो अज्ञातता नाम अज्ञानका है और अविद्या ज्यो है सो अज्ञान का पर्याय है तो अविद्या परमात्मरूपा भई तो अविद्याकूँ तमकी तरैं आवरण करणेंका स्वभाव वाली मानीँ सो मानणाँ असङ्गत हीं है ।

और ज्यो ये कही कि ईश्वरकूँ मैं ब्रह्म हूँ ये अखण्ड ज्ञान है और जीवकूँ मैं ब्रह्म हूँ ये ज्ञान है नहीँ और मैं ब्रह्मकूँ नहीँ जाणूँ हूँ ये ज्ञान है यातैं जीव अविद्याभिमानी है तो हम पूछैं हैं कि तुम जीव समष्टिकूँ हीं ईश्वर मानो हो अथवा जीव समष्टि तैं विलक्षण ईश्वर मानो हो

जो कहो कि जीव समष्टि जो है सो ईश्वर है तो हम पूछैं हैं कि जं समष्टि जो है सो ईश्वर है तो जीवसमष्टिकूं सर्वज्ञ मानोंगे जो जं समष्टिकूं सर्वज्ञ मानो तो ये सर्वज्ञता कहा है अर्थात् प्रत्येक जीव में सर्वज्ञता नहीं है ये अनुभवसिद्ध है परन्तु जीवसमष्टि में सर्वज्ञता हो स है जैसें एक एक शास्त्र के पढे भये छै पुरुष हैं तहां प्रत्येक पुरुष षट्शास्त्र ज्ञ नहीं है तो भी षट्समुदाय जो है सो षट्शास्त्रज्ञ कहावै है तैसेंही सः ज्ञता ईश्वर में है ऐसें मानों हो अथवा ये सर्वज्ञाता कोई विलक्षण है कहो जो कहो कि जैसें छै पुरुषों में षट्शास्त्रज्ञता है तैसें हीं जीवसम ष्टिरूप जो परमेश्वर तामें सर्वज्ञता है तो हम कहैं हैं कि धन्य हैं आप नवादी जे मूर्खमण्डलकूं परमेश्वर मानैं हैं अजी विचार तो करो एक मूर्ख अनन्त अनर्थोंका हेतु होय है तो मूर्खमण्डलरूप ईश्वर कितने अन र्थोंका हेतु होगा ऐसा परमेश्वर माननेंका दण्ड इनकूं ये ही है कि ये पू जो स्वप्रकाशतारूपा अज्ञातता ब्रह्मरूपा अनुभवतें सिद्ध भई सो इनकूं इनके कल्पित अज्ञानरूप करिकैं प्रतीत रहेगी यातें जीवन्मुक्तिका आनन्द इनकूं आगम होवे नहीं ॥ जो कहो कि ईश्वर में जो सर्वज्ञता है सो विलक्षण है तो हम कहैं हैं कि मायाकी वृत्तिरूप कहोगे माया जो है सो अविद्यासमष्टिरूप मानों हो तो अविद्यासमष्टिकी वृत्तिरूपा ही होगी ईश्वरकी सर्वज्ञता तो पूर्व कही सर्वज्ञतातें ये सर्वज्ञता विलक्षण न भई किन्तु तद्रूप ही भई ॥ जो कहो कि ईश्वरके उपाधि तो माया है सो शुद्ध सत्त्वप्रधाना है और जीवके उपाधि अविद्या है सो मलिनसत्त्वप्रधाना है माया में जो आभास सो तो ईश्वर है और अविद्या में जो आभास सो जीव है यो शुद्धसत्त्वप्रधाना माया ईश्वरकी उपाधि है तो उस उपाधिकी शुद्धतातें ईश्वर सर्वज्ञ है और मलिनसत्त्वप्रधाना अविद्या जीवकी उपाधि है सो उस उपाधिकी मलिनतातें जीव अल्पज्ञ है तो ईश्वर में जो सर्व ज्ञता है सो शुद्धसत्त्वप्रधाना जो माया ताकी वृत्तिरूपा है यातें पूर्व कही जो सर्वज्ञता तातें विलक्षण है और माया और अविद्या इन में सत्त्वकी शुद्धि और अशुद्धि इन करिकैं हीं भेद है और वस्तुगत्या ये दोनूं एक ही हैं प्रत्येक अंशकी दृष्टितैं इनकूं अविद्यावादी अविद्या मानैं हैं और समुदाय की दृष्टितैं माया मानैं हैं ॥ तो हम कहैं हैं कि देखो तुम इनके कहने का विचार तो करो प्रत्येक अंश मलिन होय तो उनका समुदाय शुद्ध कैसे

हो सकै जैसें घट के प्रत्येक अवयव मलिन होवैं तो उनका समुदाय ज्यो घट सो शुद्ध नहीं होय है इसकी व्यवस्था विचारसागरमें अथवा वृत्तिप्रभाकरमें सङ्ग्रही नैं कहा लिखी है सो कहो ॥ ज्यो कहो कि इसका विचार तो इन ग्रन्थोंमें कहीं देखा नहीं और ये यी निश्चय है कि अन्य ग्रन्थोंमें यी ये विचार नहीं है ज्यो अन्य ग्रन्थोंमें ये विचार होता तो निश्चलदासजी अवश्य लिखते तो हम पूछैं हैं तुमहीं कल्पना करिकैं इस विषय मैं कुछ कहो ॥

ज्यो कहो कि

ईश्वरासिद्धेः॥

ये साङ्ख्यसूत्र है इसका अर्थ ये है कि ईश्वर कोई यी युक्ति तें सिद्ध नहीं है अर्थात् श्रुतिसिद्ध है यातैं मैं इस विषय मैं कल्पना कर सकूँ नहीं केवल वेद के कथन तें ईश्वरकूँ मानूँ हूँ तो हम कहैं हैं कि ये तो हमारे यी सम्मत है काहे तैं कि ।

यतो वा इमानि भूतानि जायन्ते येन जातानि जीवन्ति यत्प्रयन्त्यभिसम्विशन्ति तद्ब्रह्म तद्विजिज्ञासस्व ॥

ये श्रुति है इसका अर्थ ये है कि जिस सें येभूत पैदा होय हैं और पैदा हुये जिससें जीवैं हैं और जाते हुये जिस मैं प्रवेश करजाय हैं सो ब्रह्म है तू उसकूँ जाणवेकी इच्छा करि तो इससें ये सिद्ध होय है कि सच्चिदानन्दरूप ब्रह्महीं ईश्वर है अविद्यायादियोंका कल्पित अविद्यासमष्टरुपाधिक होणें तैं मूर्खमण्डलरूप ईश्वर ज्यो है सो तो अलीक है ॥ और ज्यो ये कहो कि अविद्यायादी तो अविद्याकूँ जीव और ईश्वर इनकी यी कारण मानैं हैं तो हम कहैं हैं कि

ईक्षतेर्नाशब्दम्॥

ये ब्रह्मसूत्र है इसका अर्थ ये है कि अशब्द ज्यो प्रकृति सो कारण नहीं है काहेतैं कि वेदमें कारणका ईक्षण धर्म श्रवण किया है सो ईक्षण नाम ज्ञानका है तो इस व्याप भगवानके वाक्यसें प्रकृतिमें कारणपणें

का निषेध ज्यो है सो स्पष्ट है यातैं प्रकृतिकूँ कारण माननों असङ्गत है। ज्यो कहो कि कारणका ईक्षण धर्म किस श्रुतिमैं है तो हम कहैं हैं कि

स ईक्षत लोकान्नु सृजा ॥

ये ऐतरेयोपनिषद्की श्रुति है इसका अर्थ ये है कि यो देखता हुआ लोकोंकूँ रचनेकी इच्छा करिकैं तो देखणों ये ईक्षणका अर्थ है सो ये ईक्षण साक्षीरूप ही है यातैं अपने स्वरूपतैं भिन्न ईश्वर नहीं है ॥ ज्यो कहोकि ईश्वर तो जगत्का कर्त्ता है साक्षीकूँ कर्त्ता माननेमैं प्रमाण कहा है तो हम कहैं हैं कि

य एष सुप्तेषु जागर्त्ति कामं कामं पुरुषो निर्मि-
माणः तदेव शुक्रं तद्ब्रह्म तदेवामृतमुच्यते ॥

ये कठोपनिषद्की श्रुति है इसका अर्थ ये है कि सूते जे हैं तिनमैं ज्यो ये पुरुष जागे है सो विषयोंका पैदा करनें वाला है सो ही शुद्ध है सो ही ब्रह्म है सो ही अविनाशी है तो प्रधानवादी कर्त्ताकूँ ईश्वर कहैं हैं और श्रुति इस साक्षी परमात्माकूँ विषयोंका पैदा करनें वाला कहै है तो येही ईश्वर है और इसकूँ ही श्रुति शुद्ध कहै है और ब्रह्म कहै है तो इसमैं अविद्या नहीं है यातैं ब्रह्म अथवा ईश्वर इसतैं भिन्न मानैं तो अलीक है ॥

ज्यो कहोकि शुद्ध चैतन्य मैं कर्त्तापणों कैसे हो सकै तो हम पूछैं हैं अब ज्यो माया तामैं कर्त्तापणों कैसें होसकै ज्यो कहोकि शुद्ध चैतन्य के प्रकाशसैं युक्त ज्यो माया तामैं कर्त्तापणों प्रधानवादी मानैं हैं तो हम कहैं हैं कि जिसके प्रकाशका ये प्रभाव है कि जिससैं प्रकाशित अविद्या वा है तो वो करनेंकूँ समर्थ होय है उसका प्रभाव ये नहीं कि जिससैं सृष्टि होय तो बड़ा ही आश्चर्य है ॥

अब कहो ईश्वरकूँ मैं ब्रह्म हूँ ये अपरोक्ष ज्ञान है अथवा ईश्वर अप-रोक्ष ज्ञानरूप है ज्यो कहोकि आपके किये निर्णय तैं अपरोक्ष ज्ञानरूप ईश्वर श्रुतिसिद्ध हुवा परन्तु अविद्यावादी पूर्व कहैं हैं कि

एको देवः सर्वभूतेषु गूढः सर्वव्यापी सर्वभूता-
न्तरात्मा कर्माध्यक्षः सर्वभूताधिवासः साक्षी चेताः
केवलो निर्गुणश्च ॥

ये श्रुति है इसका अर्थ ये है कि स्वप्रकाश परमात्मा एक है सर्व भूतों में गूढ है अर्थात् गुप्त है सर्वमें व्यापक है सर्व भूतोंका अन्तरात्मा है कर्म का अध्यक्ष है अर्थात् साधक है सर्व भूतोंका आधार है साक्षी है ज्ञानरूप है केवल है निर्गुण है तो ये श्रुति शुद्ध ब्रह्मका प्रतिपादन करै है और दूसरी श्रुति ये है कि

एक एव हि भूतात्मा भूते भूते व्यवस्थितः
एकधा वहुधा चैव दृश्यते जलचन्द्रवत् ॥

इसका अर्थ ये है कि सर्व भूतोंका आत्मा एक ही है सर्व भूतों में स्थित है जल में चन्द्रमाकी तरैंहैं एक प्रकार करिकैं और बहुत प्रकार करिकैं दीखै है तो प्रथम श्रुति में निर्गुणपरमात्माका गूढ ये विशेषण है और गूढ शब्दका अर्थ है गुप्त तो ब्रह्म में आवरण सिद्ध होगया और दूसरी श्रुति में जलचन्द्रके दृष्टान्त करिकैं ब्रह्मका एक प्रकार करिकैं और बहुत प्रकार करिकैं दीखणाँ वर्णन किया है तो ब्रह्म ज्ञानरूप है और साक्षी है अर्थात् ब्रह्म जो है सो द्रष्टा है दृश्य नहीं है और दूसरी श्रुति में एक प्रकार करिकैं और बहुत प्रकार करिकैं ब्रह्मका दीखणाँ वर्णन किया है तो अन्य प्रकार करिकैं तो ब्रह्मका दीखणाँ वणैं सकै नहीं यातैं जीव और ईश्वर जे हैं ते ब्रह्मके आभास हैं जैसें जल में चन्द्रमाका आभास होय है जो कहो कि यहाँ जलकी तरैंहैं कोन है तो हम कहैं हैं कि एक तो श्रुति ये है कि

अजामेकां लोहितशुक्लकृष्णाम् वह्वीः प्रजाः सृजमानाम् ॥

और दूसरी श्रुति ये है कि

इन्द्रोमायाभिः पुरुरूप ईयते ॥

तो प्रथम श्रुति में तो माया का वाचक अजा शब्द है तहाँ एक वचन है और दूसरी श्रुति में

मायाभिः ॥

यहाँ बहु वचन है तो मायाके अंशोंकी दृष्टि करिकैं तो बहु वचन है और अंशीरूप जो माया ताकी दृष्टितैं एक वचन है ये जो माया ता

जलकी तरेंहैं है तो अंशीरूप जयो माया सो तो समुद्रकी तरेंहैं है
अंशरूप जयो माया सो तरङ्गोंकी तरेंहैं है ओर जैसें समुद्र एक है तैसें
अंशीरूप माया एक है ओर जैसें तरङ्ग बहुत हैं तैसें अंशरूप माया ब
हैं उसकूं हीं अविद्या कहैं हैं उस माया मैं जयो आभास है सो तो ईश्वर
ओर अविद्या मैं आभास जीव है ओर माया ओर अविद्या ये अना
हैं ईश्वर ओर जीव आभासरूप हैं ओर मायाकल्पित हैं यातैं म
माया ओर अविद्या ये स्वतः सिद्ध हैं यामैं ये श्रुति प्रमाण है कि

जीवेशावाभासेन करोति माया चाविद्या च स्वयमेव भवति॥

इसका अर्थ ये है कि जीव ओर ईश्वर इनकूं आभास करिकैं
है ओर माया ओर अविद्या ये आप ही होय हैं तो ये सिद्ध हुया कि स
दानन्दरूप ब्रह्म अविद्या करिकैं आवृत है सो अविद्या अनादि है अ
जीव ओर ईश्वर अविद्या कल्पित हैं।

तो हम कहैं हैं कि आवरण तो अज्ञाततारूप है सो तो ब्रह्मक
सिद्ध भई है यातैं ब्रह्म जयो है सो गुप्त है इसका तात्पर्य तो ये है कि ब्र
जयो है सो किसीसें भी प्रकाशित नहीं है अर्थात् सर्वका प्रकाशक है सो
अविद्याकूं श्रुति अनादि सिद्ध बतावै है तो देखो विचार करो ब्रह्ममैं स
प्रकाशता अनादि सिद्ध है ओर जयो श्रुति जीव ओर ईश्वर इनकूं अविद्
कल्पित बतावै है सो ब्रह्मरूप बतावै है जैसें सुवर्ण ज्यो है ता करिकैं कल्पि
त भूषण सुवर्ण हीं होय है यातैं हीं बहुत श्रुतियों जीव ओर ईश्वर इनकूं
ब्रह्मवर्णन करैं हैं॥ अबी देखो श्रुतिनें जीव ओर ईश्वर इनकूं ज्यो आ
भास कहे तो जीव ओर ईश्वर नहीं हैं ये सिद्ध होय है काहेतें कि जैसें
न्याय मैं आभास हेतु हेतु नहीं है तैसें आभास जीव ईश्वर जे हैं ते जीव
ईश्वर नहीं हैं जैसें सत् हेतु ज्यो है सो हेतु है तैसें सत् जीव ईश्वर जे हैं
ते जीव ईश्वर हैं देखो अज्ञानवादी जीव ईश्वरकूं आभास कहैं हैं ये ही
इनकूं अविद्याकल्पित मानि करिकैं मिथ्या कहैं हैं।

अबी हम अविद्यावादियोंकूं पूछैं हैं तो देखो कोई तो जीव ईश्वर
इनकूं [illegible] मानि करिकैं मिथ्या कहैं हैं ओर कोई [illegible]
[illegible] मानि करिकैं जीव ओर ईश्वर इनकूं [illegible] हीं कहैं

हैं और बिम्बत्व प्रतिबिम्बत्व जे धर्म तिनकूँ कल्पित मानि करिकैं मिथ्या कहैं हैं और कोई ऐसैं कहैं हैं कि निरवयवका प्रतिबिम्ब होवे नहीं यातैं जैसैं महाकाश मैं गृहाकाश और घटाकाश ये कल्पित हैं तैसें ईश्वर और जीव ये कल्पित हैं और कोई ये कहै है कि अविद्या सैं ब्रह्म हीं एक जीव है जैसैं कुन्तीका पुत्र कर्णहीं राधाका पुत्र हुया है और यो जीव हुवा ज्यो ब्रह्म उसनैं हीं ईश्वर और जीव ये कल्पित किये हैं जैसें निद्रामैं पुरुष ईश्वरकूँ तथा अनन्त जीवोंकूँ कल्पित करै है तो स्वप्न मैं कल्पित ईश्वर तथा जीव ये जैसें ईश्वराभास और जीवाभास हैं तैसें हीं आभास ईश्वर जीव हैं ॥ अब विचार करिकैं देखो ज्यो ईश्वर और जीव ब्रह्मतैं भिन्न कुछ होते तो ये आपस मैं विवाद नहीं करते परन्तु ये आपस मैं विवाद करिकैं अपणें अपणें मत सिद्ध किये चाहैं हैं यातैं ये सिद्ध होय है कि इननैं हीं अज्ञ हुये जीव ईश्वर कल्पित किये हैं ॥

ओर ज्यो यें कही कि जीवकूँ मैं ब्रह्महूँ ये ज्ञान नहीं है ओर मैं ब्रह्मकूँ नहीं जाणूँ हूँ ये ज्ञान है यातैं जीव अविद्याभिमानी है तो इसका समाधान हम पूर्व करि आये हैं यहाँ इस प्रश्नका उत्तर देणाँ उचित नहीं॥ अब कहो ब्रह्माश्रित ओर ब्रह्मविषयक अज्ञानका जीवकूँ अभिमान होय है ये कथन असङ्गत हुवा अथवा नहीं ज्यो कहो कि युक्ति और अनुभवसैं अज्ञानका मानणाँ असङ्गत हुवा परन्तु

असुर्या नाम ते लोका अन्धे न तमसा वृताः
तांस्ते प्रेत्याभिगछन्ति ये के चात्महनो जनाः॥

ये ईशावास्य उपनिषद् की श्रुति है इसका अर्थ ये है कि असुरोंके ये ये लोक हैं ते अन्ध तम करिकैं आवृत्त हैं शरीर त्यागि करिकैं ये पुरुष तहाँ जाय हैं जे आत्म हन हैं ओर कठोपनिषद्की ये श्रुति है कि

अविद्यायामन्तरे वर्त्तमानाः स्वयं धीराऽ पण्डितम्मन्यमानाः दन्द्रम्यमानाऽ परियन्ति मूढा अन्धेनैव नीयमाना यथान्धाः ॥

इस का अर्थ ये है कि अविद्याके मध्य मैं वर्त्तमान और आप हम धीर हैं हम पण्डित हैं ऐसें अभिमान करैं ते अत्यन्त कुटिल और अनेक प्रकार की ज्यो गति ताकूँ प्राप्त होते हुये दुःखो करिकैं व्याप्त होय हैं ईमैं अन्ध के

आश्रय तैं चले अन्य और इसही उपनिषद्की ये दोय श्रुतियाँ

इन्द्रियेभ्यः परा ह्यर्था अर्थेभ्यश्च परं मनः
मनसश्च परा बुद्धिर्बुद्धेरात्मा महान् परः ॥१॥
महतऽपरमव्यक्तमव्यक्तात्पुरुषऽ परः
पुरुषान्न परं किञ्चित्सा काष्ठा सा परा गतिः ॥ २।

इनका अर्थ ये है कि इन्द्रियोंतैं सूक्ष्म अर्थ हैं अर्थात् इन्द्रि आरम्भक भूत हैं और उनतैं सूक्ष्म मनका आरम्भक भूत है और मनतैं सूक्ष्म बुद्धिका आरम्भक भूत है और बुद्धितैं सूक्ष्म महत्तत्व है १ और मह तैं सूक्ष्म अव्यक्त है और अव्यक्त तैं अति सूक्ष्म पुरुष है और पुरुषतैं कुछ नहीं है यहाँ सूक्ष्मताकी समाप्ति है सोही परम गति है २ ऐसे बहुत श्रुतियों करिकैं अविद्या सिद्ध होय है यातैं अविद्यावादी अवि मानैं हैं ॥ तो हम कहैं हैं कि पूर्व कही दोय श्रुतियों तो अविद्याव और ज्यो इनका विश्वास करैं हैं उनका महिमा वर्णन करैं हैं देखो

असुर्या नाम ॥

इस श्रुति के व्याख्यान मैं भाष्यकार ऐसे लिखैं हैं कि

आत्मानं घ्नन्ति ते आत्महनः के ते अविद्वांसः कथं ते आत्मानं नित्यं हिंसन्ति अविद्यादोषेण विद्यमानस्यात्मनस्तिरस्करणात् विद्यमानस्यात्मनो यत्कार्यं फलमजरामरत्वादि सम्वेदनादि तद्धि तस्यैव तिरोभूतं भवति ॥

मान ज्यो आत्मा ताका कार्य्य फल अक्षर अमरपणांकूं आदि लेकें अथवा सम्वेदनकूं आदि लेकें सो उसके ही प्रावृत होय है ॥ ज्यो कहो कि इस कथनतें तो अविद्यायादियोंकी निन्दा प्रतीत होय है ये महिमा कैसें तो हम कहैं हैं कि सच्चिदानन्दरूप परमात्मानें ज्यो वे कर्मफल अथवा जन्मरूप लोकोंकी रचना किई उन लोकोंकूं वे पुरुष जाय हैं ज्यो ये अविद्यावादी न होते तो परमात्माकी किई लोकरचना व्यर्थ होती यातें परमात्माकी लोक रचनाकूं सफल करणेंकूं इनका यत्न है तो परमात्माके उपकारक होयें तें ये महिमा ही है ये इनकी निन्दा नहीं है ये तो प्रथम श्रुतिका तात्पर्य है ॥ और द्वितीय श्रुतिमें इन अविद्यावादियोंका सङ्ग करणें वाले जे पुरुष तिनकी गति होय है सो स्पष्ट है ॥ और

इन्द्रियेभ्य ॥

इत्यादिक जे श्रुति इनमें अव्यक्त शब्द है तिसका अर्थ भाष्यकार ये करैं हैं कि

अव्यक्तं सर्वस्य जगतो वीजभूतम् ॥

इसका तात्पर्य आनन्दगिरि ऐसें वर्णन करैं हैं कि भायी ज्यो वटवृक्ष उसकूं पैदा करणेंकी ज्यो शक्ति उस शक्तिवाला ज्यो वटवीज सो अपणीं शक्ति करिकें सद्वितीय नहीं है तैसें हीं ब्रह्म ज्यो है सो भी माया शक्ति करिकें सद्वितीय नहीं है सत्यादिरूप करिकें इसका निरूपण करै तो इसका स्वरूप कुछ नहीं है यातें इसकूं अव्यक्त कही है अव्यक्तशब्दतें भी अद्वैतकी विरोधिनी नहीं है सर्व प्रपञ्चका कारण अव्यक्त है यो परमात्मा के अधीनहै यातें उपचार करिकें परमात्मा कारण है अव्यक्तकी तरहैं विकारीपणाँ करिकें कारण नहीं है अनादि है यातें अव्यक्त परतन्त्र है उमतें भिन्न मानणें में प्रमाण नहीं है आत्मसत्तावें हीं सत्तावान् है तो विवेक दृष्टितें विचार करो तो भाष्यकार मायाकूं ब्रह्मरूपा ही मानें हैं आनन्दगिरिके व्याख्यानसें ये अर्थ स्पष्ट प्रतीत होय है देखो आनन्दगिरिनें ज्यो ये कही कि ब्रह्म ज्यो है सो माया शक्ति करिकें सद्वितीय नहीं है ॥ तो विचार करो कि आपतें ही आप सद्वितीय नहीं होय है अर्थात् आपतें ही आप भिन्न नहीं होय है आपतें किञ्चित् भी विलक्षण होय कोई पदार्थ तब ही भेदकी कल्पना किई जाय है अब ज्यो माया शक्ति करिकें ब्रह्म सद्वितीय

नहीं है तो माया ब्रह्मतैं विलक्षण नहीं ये भाष्यकारका अभिप्राय सि
होय है ॥ ज्यो कहो कि आनन्दगिरि वटवीजके दृष्टान्ततैं ये कहे है
जैसें वीजमैं वटनिर्माणशक्ति है तैसें तो अव्यक्त है और जैसें वीज
तैसें ब्रह्म है तो यद्यपि शक्ति ज्यो है सो वीजतैं भिन्न दीखे नहीं तो भ
यो वीजतैं भिन्न हीं है देखो वीज अपणे स्वरूपतैं वणों रहे है और व
निर्माणशक्ति नष्ट हो जाय है तब वीजतैं वृक्ष होवे नहीं और जब वे
शक्ति रहे है तब वृक्ष होवे है तो ये अर्थ सिद्ध हुया कि शक्ति ज्यो है से
वीजतैं विलक्षण है और वीजमैं रहे है और शक्तिका प्रत्यक्ष होवे नहं
किन्तु अनुमिति होवे है तो ब्रह्ममैं अव्यक्तका मानणों सिद्ध हो गया ॥ तो
हम कहैं हैं कि देखो आनन्दगिरिके व्याख्यानतैं तो ब्रह्म ज्यो है सो वीः
सिद्ध होय है और अव्यक्त ज्यो है सो ब्रह्मवीजकी शक्ति सिद्ध होय है
और भाष्यकार अव्यक्तकूं वीज भूत कहै हैं तो इसके तात्पर्यका विचा
करणों चाहिये ॥ ज्यो इसका तात्पर्य विचारते हैं तो

वीजभूतम् ॥

इसका यौगिक अर्थ ये है कि अवीज ज्यो है सो वीज होय सो वीज
भूत तो यहां वीज होगा ब्रह्म सो सत् है तो अवीज होगा अव्यक्त सो
असत् होगा सो अवीजका वीज होणों ज्यो है सो असत्का सत् होणों है
तो इस भाष्यकारके वचनतैं तो ये सिद्ध होय है कि अव्यक्त ज्यो है सो
असत् है अर्थात् नहीं है काहेतैं कि असत् है इस कथनतैं हीं असत्का
सत् होणों सिद्ध होय है असत् नाम नहीं का है और है नाम सत्का है
तो अव्यक्तका नहीं होणों सिद्ध होगया ।

ज्यो कहो कि

अव्यक्तं सर्वस्य जगतो वीजभूतम् ॥

ऐसें तो भाष्यकार बोले और

अव्यक्तं नास्ति ॥

ऐसें नहीं बोले इसका कारण कहा है

अव्यक्तं नास्ति ॥

इस वचनमें जैसें भाष्यकार कहता तात्पर्य [illegible] होता

वीजभूतम् ॥

इस कथन तैं आपका कह्या तात्पर्य स्पष्ट मालुम होवै नहीं तो हम कहैं हैं कि ये आत्मविद्याका उपदेश है यातैं ऐसा दृष्टान्त कहणाँ उचित तो नहीं है तथापि कह्या अर्थ शिष्यके हृदय मैं जैसैं आरूढ होय तैसैं यत्न करणैं मैं दोष नहीं यातैं हम कहैं हैं कि जैसैं विषयी पुरुषोंकूँ तरुणीके आवृत कुचमण्डलके दर्शन तैं चमत्कार होय है तैसैं अनावृत कुचमण्डलके दर्शनतैं चमत्कार होवै नहीं तैसैं हीं अस्पष्टार्थ वाक्य जैसैं विद्वज्जनौं के हृदयमैं चमत्कार करै है तैसैं स्पष्टार्थ वाक्य चमत्कार करै नहीं यातैं भाष्यकार

अव्यक्तं नास्ति ॥

ऐसैं नहीं बोले और

अव्यक्तं सर्वस्य जगतो बीजभूतम् ॥

ऐसैं बोले हैं ॥ ज्यो कहो कि

बीजभूतम् ॥

इसका अर्थ ये भी होय है कि

बीजम् भूतम् इति बीजभूतम् ॥

अर्थात् बीज होय सो बीज भूत तो हम कहैं हैं कि ऐसैं अर्थ करो तो बहुत ही उत्तम है काहेतैं कि आनन्दगिरिनैं बीज तो मान्याँ है ब्रह्म-कूँ और शक्ति मान्याँ है अव्यक्तकूँ अब ज्यो

बीजभूतम् ॥

इसका अर्थ ये हुवा कि बीज होय सो बीजभूत तो अव्यक्त ज्यो है सो ब्रह्मरूप सिद्ध होगया॥ और ज्यो आनन्दगिरिनैं ये कही कि सत्वादिरूप करिकैं इसका निरूपण करै तो इसका स्वरूप कुछ नहीं है तो इस कथनतैं ये सिद्ध होय है कि सच्चिदानन्दरूप परमात्मातैं विलक्षण इसका स्वरूप कुछ होय तो इसका स्वरूप निरूपण किया जाय यातैं यो ये ब्रह्मरूप हीं सिद्ध होय है ॥ और ज्यो आनन्दगिरिनैं ये कही कि सर्व प्रपञ्चका कारण अव्यक्त है सो परमात्माके आधीन है यातैं उपचार करिकैं परमात्मा कारण है अव्यक्तको तरहँ विकारीपणाँ करिकैं कारण नहीं है तो यातैं ये सिद्ध होय है कि परमात्मामैं विकारीपणाँका दोष कोई नहीं लगावै यातैं अव्यक्तकी कल्पना है ॥ और ज्यो आनन्दगिरिनैं ये कही कि अनादि होवै तैं अव्य-

क्त परतन्त्र है तो इस कथनतैं आनन्दगिरिका ये तात्पर्य सिद्ध होय है
अव्यक्त परतन्त्र नहीं है ज्यो अनादि होणें तैं परतन्त्र मानणें में आन
गिरिका तात्पर्य होय तो सच्चिदानन्दरूप ज्यो ब्रह्म ताकूं यी आन
गिरि परतन्त्र कहे काहेतें कि ब्रह्म यी अनादि है ॥ याहीतें आनन्द
रिनें ऐसें कही है कि अव्यक्तकूं ब्रह्मसें भिन्न मानणें में प्रमाण न
है ॥ ओर ज्यो आनन्दगिरिनें ये कही कि आत्मसत्तासें सत्ताव
है तो यातें यी ये ही सिद्ध होय है कि अव्यक्त ब्रह्मरूप ही है काहेतें
ब्रह्म ज्यो है सो आपकी सत्तातें हीं सत्तावान् है ॥ ज्यो कहो कि आत्म
त्तावान् तो प्रपञ्च यी है तो हम कहें है कि प्रपञ्च ज्यो है सो यी ब्र
ही है यातें हीं

सर्वं खल्विदं ब्रह्म ॥

ये श्रुति सर्वकूं ब्रह्मरूप वर्णन करे है ।

अब कहो श्रुतिका तात्पर्य अविद्याके मानणें में नहीं है ये सिद्ध
या अथवा नहीं ज्यो कहो कि युक्ति ओर अनुभव तें तो अविद्या पूर्व
सिद्ध होगई ओर अब श्रुति तें यी सिद्ध भई नहीं तो श्रुति युक्ति ओ
अनुभव तें जो पदार्थ सिद्ध नहीं होय उस पदार्थका मानणां ज्यो है
अलीक पदार्थका मानणां है यातें सच्चिदानन्दरूप आत्मामें अविद्या मा
नणें तें ज्यो श्रुतिनें आत्महत्या दोष वर्णन कियो सो बहुत ही ठीक
ओर अविद्या मानणेंवाले जे पुरुष तिनकी स्तुति करणें वाले जे पु
तिनकूं अनर्थकी प्राप्ति ज्यो श्रुतिनें वर्णन किई सो यी बहुत ही ठीक
यातें सच्चिदानन्दरूप आत्मामें अविद्याका मानणां ओर अविद्यावादियोंकी
स्तुति करणां ये दोनूं हीं अयुक्त हैं परन्तु ज्यो अविद्या पदार्थ है ही नहीं
तो श्रुति महावाक्योपदेश करिकें आत्मज्ञान करावे है सो श्रुतिका व्यर्थ
व्यर्थ होगा काहेतें कि ज्यो अविद्या है ही नहीं तो श्रुति आत्मज्ञान करा
करिकें किसकी निवृत्ति करे है यातें श्रुतिका तात्पर्य अविद्याके मानणें
में है ॥ ओर

अजानकान् ॥

इत्यादिक ओर

मायाभागेन ॥

इत्यादिक श्रुतियाँ भी हैं यातैं भी अविद्या के मानणैं मैं श्रुतिका तात्पर्य सिद्ध होय है अब ज्यो अविद्या नहीं मानैंगे तो वेदका न मानणा सिद्ध होगा ज्यो वेदकूं न मान्यां तो वेदकूं न मानैं उनकूं हीं नास्तिक कहैं हैं तो तुमारे मैं नास्तिकपणांकी आपत्ति होगी ऐसैं कोई अविद्या वादी कहै तो इसका उत्तर कहा है सो कहो ।

तो हम कहैं हैं कि प्रथम ये विचार करणां चाहिये कि वेद ज्यो है सो आस्तिक है अथवा नास्तिक है ज्यो कहो कि वेद ज्यो है सो नास्तिक है तो हम पूछैं हैं कि प्रथम नास्तिकका लक्षण कहो तो तुम ये ही कहोगे कि वेदकूं नहीं मानैं सो नास्तिक तो हम पूछैं हैं कि वेदका न मानणां ज्यो तुम वर्णन करो हो सो वेदका ज्यो एक देश उसका न मानणां तुमारै अभिमत है अथवा सर्व देशका न मानणां तुमारै अभिमत है ज्यो कहो कि एक देशका न मानणां हमारै अभिमत है तो हम कहैं हैं कि ऐसैं मानौं तो तुम हीं नास्ति भये काहेतैं कि देखो

एषोन्तरात्मान्नरसमयः अन्योन्तरआत्मा प्राणमयः॥

इत्यादिक श्रुतियें शरीरादिककूं अन्तरात्मरूप वर्णन करैं हैं और तुम नहीं मानौं हो अब कहो नास्तिक तो तुम हो और वेदकूं नास्तिक मानौं हो इसका दण्ड तुमकूं कहा होगा ॥ ज्यो कहो कि इन शरीरादिकों कूं तो अन्तरात्मा वेद ही नहीं मानैं है देखो

नेति नेति ॥

वाक्यों करिकैं इन शरीरादिकों मैं अन्तरात्मापणेंका निषेध वेद ही करै है यातैं हम इनकूं अन्तरात्मा नहीं मानैं हैं तो हमारे मैं नास्तिक होणेंकी आपत्ति नहीं है ॥ तो हम कहैं हैं कि अपणें एक देशकूं न मानणें तैं वेद ही नास्तिक हुवा ॥ ज्यो कहो कि वेदकूं तो नास्तिक हमनैं पूर्व कहा ही है यातैं हमारे ये इष्टापत्ति है ॥ सो हम कहैं हैं कि वेदकूं नास्तिक मानणें मैं इष्टापत्ति मानैंगे तो तुमारे मैं नास्तिकपणांकी आपत्तिका उद्धार होणां कठिन हीं है काहे तैं कि नास्तिकमतानुयायी ज्यो है सो नास्तिक ही होय है ज्यो वेद नास्तिक हुवा तो वेदमतानुयायी होणें तैं तुमारे मैं नास्तिकपणेंका उद्धार होवै ही नहीं यातैं वेदकूं

आस्तिक ही मानों ॥ ज्यो कहो कि वेदके सर्व देशकूँ न मानैं सो नास्ति
तो हम कहैं हैं कि जिनकूँ तुम नास्तिक मानों हो उनकूँ वी आस्ति
मानवें चाहिये काहे तैं कि

असदेवेदमग्र आसीत् ॥

इस वेदकूँ वे वी मानैं हैं यातैं नास्तिकों मैं वेदके सर्व देशका
मानणाँ सिद्ध न हुवा। ज्यो कहो कि वेदके सर्व देशकूँ मानैं सो तो आस्ति
ओर ज्यो आस्तिक नहोय सो नास्तिक तो हम कहैं हैं कि ये तो तुमा
वचनकी चतुरता है इस तुमारे कथन तैं तो ये ही सिद्ध होय है कि ए
देशकूँ मानैं सो नास्तिक तो अविद्यावादी कोई श्रुतिकूँ तो सिद्धा
श्रुति मानि करिकैं अङ्गीकृत करैं हैं और कोई श्रुतिकूँ पूर्वप
श्रुति मानि करिकैं त्याग करैं हैं और कोई श्रुतिकूँ अर्थ
वाद मानि करिकैं त्याग करैं हैं यातैं ये ही नास्तिक हैं ॥ ज्यो कहो
सत् रूप परमात्माकूँ मानैं सो आस्तिक तो हम कहैं हैं कि ये अवि
वादी सत् रूप परमात्माकूँ मानैं हैं तैसे असत्‌रूप अविद्याकूँ वी म
हैं तो अद्वैं नास्तिक हैं यातैं नास्तिकपणांकी आपत्ति ज्यो है
अविद्यावादियों मैं है अविद्याकूँ नहीं मानैं उनमैं नास्तिकपणांकी आप
त्ति नहीं है ॥

और ज्यो ये कहो कि अविद्या पदार्थ है ही नहीं तो श्रुति महावाक्यो
पदेश करिकैं अविद्याकूँ निरस्त करके स्वयं आत्मज्ञान करावे है ते
अविद्याके नहीं होणें तैं श्रुतिका उपदेश व्यर्थ होगा तो हम कहैं हैं कि
तुम अविद्यावादियोंकूँ पूछो कि तुम ज्ञान किसकूँ कहो हो तो वे ये क
हैंगे कि

अहम् अस्मि ॥

इस वाक्यका और

अहं ब्रह्मास्मि ॥

इस वाक्यका एक ही अर्थ होगा ज्यो ये दोनूँ वाक्य एकार्थक होंगे तो

अहम् अस्मि ॥

ये वृत्ति और

अहं ब्रह्मास्मि ॥

ये वृत्ति एक ही होगी ज्यो ये दोनूँ वृत्ति एक हुई तो

अहं ब्रह्मास्मि ॥

इस वृत्तिकूँ अज्ञानवादी ज्ञान मानैं हैं तो

अहम् अस्मि ॥

इस वृत्तिकूँ बी ज्ञानहीं मानैंगे ज्यो इस वृत्तिकूँ ज्ञान मानी तो अज्ञानवादी जिनकूँ जीव मानैं हैं उनके सर्वके ये वृत्ति स्वतः सिद्ध मानैं हैं तो ज्ञान स्वतः सिद्ध हुया ज्यो ये ज्ञान स्वतः सिद्ध हुया तो अज्ञानवादी ज्ञानतें अविद्याकी निवृत्ति मानैं हैं तो अविद्याकी निवृत्ति स्वतः सिद्ध भई ज्यो अविद्याकी निवृत्ति स्वतः सिद्ध भई तो इस अविद्याकी निवृत्तिके अर्थ अज्ञानवादी महावाक्योपदेश करैं हैं यातें उनकूँ पूछो कि अज्ञाननिवृत्ति तो स्वतःसिद्ध है तुम महावाक्योपदेशका फल कहा मानों हो सो कहो ॥ ज्यो कहो कि अविद्यावादी

अहम् अस्मि ॥

इस वृत्तिकूँ तो अभिमान वृत्ति मानैं हैं और

अहं ब्रह्मास्मि ॥

या वृत्तिकूँ ज्ञान मानैं हैं इसमें कारण कहा है साक्षी तो दोनूं वृत्तियोंमें समान प्रकाश करै है तो हम कहैं हैं कि इसका कारण तो अविद्या

अहम् अस्मि ॥

इस वाक्यका ओर

अहं ब्रह्मास्मि ॥

इस वाक्यका एक ही अर्थ होगा ज्यो ये दोनूँ वाक्य एकार्थक होंगे तो

अहम् अस्मि ॥

ये वृत्ति ओर

अहं ब्रह्मास्मि ॥

ये वृत्ति एक ही होगी क्यो ये दोनूँ वृत्ति एक हुई तो

अहं ब्रह्मास्मि ॥

इस वृत्तिकूँ अज्ञानवादी ज्ञान मानैं हैं तो

अहम् अस्मि ॥

इस वृत्तिकूँ भी ज्ञानहीं मानैंगे ज्यो इस वृत्तिकूँ ज्ञान मानो तो अज्ञानवादी जिनकूँ जीव मानैं हैं उनके सबंके ये वृत्ति स्वतः सिद्ध मानैं हैं तो ज्ञान स्वतः सिद्ध हुया ज्यो ये ज्ञान स्वतः सिद्ध हुया तो अज्ञानवादी ज्ञानतैं अविद्याकी निवृत्ति मानैं हैं तो अविद्याकी निवृत्ति स्वतः सिद्ध भई ज्यो अविद्याकी निवृत्ति स्वतः सिद्ध भई तो इस अविद्याकी निवृत्तिके अर्थ अज्ञानवादी महावाक्योपदेश करैं हैं यातैं उनकूँ पूछो कि अज्ञाननिवृत्ति तो स्वतःसिद्ध है तुम महावाक्योपदेशका फल कहा मानों हो सो कहो ॥ क्यो कहो कि अविद्यावादी

अहम् अस्मि ॥

इस वृत्तिकूँ तो अभिमान वृत्ति मानैं हैं ओर

अहं ब्रह्मास्मि ॥

या वृत्तिकूँ ज्ञान मानैं हैं इसमें कारण कहा है काही तो दोनूँ वृत्तियों में समान प्रकाश करे है तो हम कहैं हैं कि इसका कारण तो अविद्या

वादी ही कहेंगे काहेतें कि वे ही इस सच्चिदानन्दरूप आत्माके अविद्याक
कलङ्क लगाय करिकें ज्ञान कराय करिकें अविद्याकूं निवृत्त करें हैं ओर मु
कहाय स्करिकें नाना प्रकार के व्यञ्जन भोजन करें हैं ॥ ओर ज्यो तुम
ये कही कि श्रुतियाँ भी अविद्याकूं प्रतिपादन करें हैं तो इसका उत्तर पू
होगया है यातें यहाँ उत्तर देवें में पुनरुक्ति होय है यातें इसका उत
देवाँ उचित नहीं ॥

अब कहो अविद्याका मानवाँ तो श्रुति युक्ति ओर अनुभवतें सि
हुया नहीं अब कहा पूछो हो तो कहो ॥ ज्यो कहो कि ज्ञानरूप ज्यो वृ
त्ति ताके पूर्व कालमें अज्ञान रहे है तहाँ अज्ञानवादी तो अज्ञान दो प्रकार
के मानें हैं तिनमें एक अज्ञान तो भावरूप मानें हैं उसकूं सांख्य मानें हैं
ओर उसकूं सदसद्विलक्षण मानें हैं ओर तमकी तरेंह उसका आवरण क
का स्वभाव मानें हैं ओर उसकूं सारे जगत्का परिणामी उपादान का
मानें हैं ओर दूसरा अज्ञान ज्ञानरूप वृत्तिका प्रागभावरूप मानें हैं प
अनादिसान्त दोनूंकूं हीं मानें हैं ओर ज्ञानरूप वृत्तिके उदय भयें दोनू
का ही नाश मानें हैं ओर न्यायवाले ज्ञानके अभावकूं हीं अज्ञान मानें
ओर ज्ञानतें उसका नाश मानें हैं ओर ज्ञानतें ज्यो अज्ञानका ध्वंस होय
तहाँ अज्ञानवादी जैसे अज्ञान दो प्रकार के मानें हैं तैसें अज्ञान के ध्व
भी दो प्रकारके मानें हैं तिनमें भावरूप ज्यो अज्ञान ताके ध्वंसकूं तो अ
भावरूप मानें हैं ओर ज्ञानप्रागभावरूप ज्यो अज्ञान ताके ध्वंसकूं भाव
रूप मानें हैं काहेतें कि द्वितीयाभाव ज्यो है सो प्रथमाभावप्रतियोगिक
होय है तो ज्ञानप्रागभावध्वंस ज्यो है सो ज्ञानके अभावका अभाव है त
ज्ञान रूप होना तो ज्ञान ज्यो है सो भाव है यातें अज्ञानके ध्वंसकूं भा
मानें हैं तो मैं ये पूछूं हूं कि अज्ञानवादियों नें तो अज्ञान दो प्रकार के मान
ओर न्यायवालों नें एक ज्ञानप्रागभावरूप हीं अज्ञान मान्यो है सो यो या ज

छे.पदार्थ ही लिखे हैं तो न्यायवाले छे पदार्थ ही मानैं हैं अब ज्यो न्याय वालौं नैं अभाव की कल्पना किई है तो ये अभाव पदार्थ सदसद्विलक्षण हीं कल्पित किया है काहेतैं कि देखो इस अभावपदार्थका अन्तर्भाव छे पदार्थौं मैं नहीं है तो अज्ञान कूँ न्यायवालौंनैं अभाव मान्यां है तो अज्ञान सदसद्विलक्षण हीं हुवा और अज्ञानवादी वी अज्ञानकूँ सदसद्विलक्षण हीं कहैं हैं और न्यायवाले ज्ञान प्रागभावरूप ज्यो अज्ञान है ताकूँ अनादिसान्त मानैं हैं और अज्ञानवादी वी अज्ञानकूँ अनादि सान्त ही मानैं हैं यातैं अज्ञानवादियौंका मान्यां हुवा अज्ञान ज्यो है सो न्यायवालौंका मान्यां हुवा ज्यो अज्ञान तातैं विलक्षण नहीं है ।। ज्यो कहो कि न्यायवाले जे हैं ते तो अज्ञानकूँ निरंश मानैं हैं और इसका आवरण करणैंका स्वभाव नहीं मानैं हैं और अज्ञानवादी जे हैं ते अज्ञानकूँ सांश मानैं हैं और इसका आवरण करणैंका स्वभाव मानैं हैं तो हम कहैं हैं कि अज्ञानवादियौं के मत मैं भाव अथवा अभाव ये नियत पदार्थ हैं नहीं किन्तु इस विषय मैं ये मीमांसकौंका मत मानैं हैं तो मीमांसक जे हैं ते अन्धकारकूँ द्रव्य मानैं हैं और इसकूँ सांश मानैं हैं और इसका आवरण करणैंका स्वभाव मानैं हैं तो अज्ञानवादी अपणैं कल्पित अज्ञानका तमका जैसा स्वभाव मानैं हैं यातैं इसकूँ सांश मानैं हैं और इसका आवरण करणैंका स्वभाव मानैं हैं परन्तु इतना विचार नहीं करैं हैं कि अज्ञान ज्यो है सो सच्चिदानन्दरूप आत्माका आवरण करि लेवै तब तो आप ही कैसें प्रतीत होय यातैं ये आवरक नहीं है किन्तु सुषुप्त्यादिक मैं वृत्तिरूप ज्ञान नहीं है यातैं वृत्तिरूप ज्ञानका अभाव रहै है सो ही अज्ञान है तो ये अज्ञान विलक्षण नहीं हुवा किन्तु न्यायवालौंका मान्यां अभावरूप अज्ञान हीं हुवा अब ज्यो ये अज्ञान न्यायवालौंका मान्यां ज्यो अज्ञान तातैं विलक्षण होय तो भविष्यत् अहंवृत्तिका प्रागभाव तो सुषुप्ति मैं अवश्य मानणां पडैगा काहेतैं कि सुषुप्ति के अव्यवहित उत्तर क्षण मैं होणैंवाली ज्यो अहंवृत्ति उसका प्रागभाव ज्यो है सो उस वृत्तिका कारण है और ज्यो वहां इस अज्ञानतैं विलक्षण तमःस्वभाव भावरूप अज्ञान और मानोंगे तो सुषुप्ति के उत्तरभावरूप और अभावरूप जे दोय अज्ञान तिनकूँ विषय करणैंवाली दोय स्मृति होणीं चाहिये सो होवैं नहीं यातैं न्यायवालौंका मान्यां हुवा ज्यो अज्ञान तातैं ये अज्ञानवादियौं का मान्यां हुवा अज्ञान विलक्षण नहीं है ।।

वादी ही कहेंगे काहेतें कि वे ही इस सच्चिदानन्दरूप आत्माके अविद्या
कलङ्क लगाय करिकैं ज्ञान कराय करिकैं अविद्याकूं निवृत्त करैं हैं और
कहाय रकरिकैं नाना प्रकार के व्यञ्जन भोजन करैं हैं ॥ और ज्यो
ये कही कि श्रुतियाँ भी अविद्याकूं प्रतिपादन करैं हैं तो इसका उत्त
होगया है यातैं यहाँ उत्तर देवैं में पुनरुक्ति होय है यातैं इसका
देवाँ उचित नहीं ॥

अब कहो अविद्याका मानवाँ तो श्रुति युक्ति और अनुभवतैं
हुया नहीं अब कहा पूछो हो सो कहो ॥ ज्यो कहो कि ज्ञानरूप व्यो
त्ति ताके पूर्व कालमें अज्ञान रहै है तहाँ अज्ञानवादी तो अज्ञान दो प्र
के मानैं हैं तिनमें एक अज्ञान तो भावरूप मानैं हैं उसकूं सांत मानैं
और उसकूं सदसद्विलक्षण मानैं हैं और तमकी तरैं उसका आवरण
का स्वभाव मानैं हैं और उसकूं सारे जगत्का परिणामी उपादान का
मानैं हैं और दूसरा अज्ञान ज्ञानरूप वृत्तिका प्रागभावरूप मानैं हैं
अनादिसान्त दोनूंकूं ही मानैं हैं और ज्ञानरूप वृत्तिके उदय भयें दो
का ही नाश मानैं हैं और न्यायवाले ज्ञानके अभावकूं ही अज्ञान मानैं
और ज्ञानतैं उसका नाश मानैं हैं और ज्ञानतैं ज्यो अज्ञानका ध्वंस होय
तहाँ अज्ञानवादी जैसें अज्ञान दो प्रकार के मानैं हैं तैसें अज्ञान के
भी दो प्रकारके मानैं हैं तिनमें भावरूप ज्यो अज्ञान ताके ध्वंसकूं तो
भावरूप मानैं हैं और ज्ञानप्रागभावरूप ज्यो अज्ञान ताके ध्वंसकूं
रूप मानैं हैं काहेतें कि द्वितीयाभाव ज्यो है सो प्रथमाभावप्रतियोगि

.पदार्थ ही लिखे हैं तो न्यायवाले छै पदार्थ ही मानैं हैं अब ज्यो न्याय
ालौं नैं अभाव की कल्पना किई है तो ये अभाव पदार्थ सदसद्विलक्षण
ीं कल्पित किया है काहेतैं कि देखो इस अभावपदार्थका अन्तर्भाव छै
ादार्थों मैं नहीं है तो अज्ञान कूँ न्यायवालौंनैं अभाव मान्याँ है तो अ-
ान सदसद्विलक्षण हीं हुवा और अज्ञानवादी बी अज्ञानकूँ सदसद्विलक्षण
ीं कहैं हैं और न्यायवाले ज्ञान प्रागभावरूप ज्यो अज्ञान है ताकूँ अना-
देसान्त मानैं हैं और अज्ञानवादी बी अज्ञानकूँ अनादि सान्त ही मानैं हैं
ातैं अज्ञानवादियौंका मान्याँ हुवा अज्ञान ज्यो है सो न्यायवालौंका मा-
याँ हुवः ज्यो अज्ञान तातैं विलक्षण नहीं है ॥ ज्यो कहो कि न्यायवाले
ते हैं ते तो अज्ञानकूँ निरंश मानैं हैं और इसका आवरण करणैंका स्वभा-
ा नहीं मानैं हैं और अज्ञानवादी जे हैं ते अज्ञानकूँ सांश मानैं हैं और
इसका आवरण करणैंका स्वभाव मानैं हैं तो हम कहैं हैं कि अज्ञानवादि-
ौं के मत मैं भाव अथवा अभाव ये नियत पदार्थ हैं नहीं किन्तु इस वि-
षय मैं ये मीमांसकौंका मत मानैं हैं तो मीमांसक जे हैं ते अन्धकारकूँ
द्रव्य मानैं हैं और इसकूँ सांश मानैं हैं और इसका आवरण करणैंका स्व-
भाव मानैं हैं तो अज्ञानवादी अपणैं कल्पित अज्ञानका तमका जैसा स्वभा-
व मानैं हैं यातैं इसकूँ सांश मानैं हैं और इसका आवरण करणैंका स्वभाव
मानैं हैं परन्तु इतना विचार नहीं करैं हैं कि अज्ञान ज्यो है सो सच्चिदा-
नन्दरूप आत्माका आवरण करि लेवै तव तो आप ही कैसें प्रतीत होय यातैं
ये आवरक नहीं है किन्तु सुषुप्त्यादिक मैं वृत्तिरूप ज्ञान नहीं है यातैं
वृत्तिरूप ज्ञानका अभाव रहै है सो ही अज्ञान है तो ये अज्ञान विलक्षण
नहीं हुवा किन्तु न्यायवालौंका मान्याँ अभावरूप अज्ञान हीं हुवा अब ज्यो
ये अज्ञान न्यायवालौंका मान्याँ ज्यो अज्ञान तातैं विलक्षण होय तो भवि-
ष्यत् अहंवृत्तिका प्रागभाव तो सुषुप्ति मैं अवश्य मानणाँ पड़ैगा काहेतैं कि
सुषुप्ति के अव्यवहित उत्तर क्षण मैं होणैंवाली ज्यो अहंवृत्ति उसका
प्रागभाव ज्यो है सो उस वृत्तिका कारण है और ज्यो यहाँ इस अज्ञानतैं
विलक्षण तमःस्वभाव भावरूप अज्ञान और मानोंगे तो सुषुप्ति के उत्तरभाव
रूप और अभावरूप जे दोय अज्ञान तिनकूँ विषय करणैंवाली दोय स्मृति
होणीं चाहिये सो होवै नहीं यातैं न्यायवालौंका मान्याँ हुवा ज्यो
अज्ञान तातैं ये अज्ञानवादियों का मान्याँ हुवा अज्ञान विलक्षण नहीं है ॥

हीं आप कल्पित है ये अर्थ सिद्ध हुवा तो ऐसें मानणां अनुभव विरुद्ध
आपसें आप कल्पित होय तो जगत् का कल्पक ईश्वर अविद्यावादी मानें
सो बणसकै नहीं और ज्यो ये कहो कि जीवमैं ब्रह्म वृत्ति जरो अवि
ताकी कल्पक अविद्या जीवकी कल्पक अविद्यातैं भिन्न मानैं हैं तो हम
हैं कि रज्जुका जयो अज्ञान ताकरिकैं कल्पित जयो सर्प उस सर्पमैं जरो अ
ज्ञान उस अज्ञान करिकैं रज्जुमैं अज्ञान कल्पित है ऐसा अर्थ सिद्ध हुवा है
तुमहीं विचार दृष्टितैं देखो इस कल्पनातैं अविद्या ब्रह्म मैं सिद्ध होय है
अथवा असिद्ध होय है ओर जयो ये कहोकि ईश्वर के अज्ञानतैं कल्पि
तो हम कहैं हैं कि ये कथन तो सर्वथा असङ्गत है काहेतैं कि देखो
ही निश्चलदासजी नैं विचारसागर के चतुर्थ तरङ्ग मैं लिखा है कि
जीवन्मुक्त विद्वान् के आत्माकूं विषय करनेंवाली अन्तःकरण

अहंब्रह्मास्मि ॥

ऐसी वृत्ति होय है तैसें ईश्वरकूं भी माया की वृत्तिरूप

अहं ब्रह्मास्मि ॥

ऐसा ज्ञान होय है ओर ये कही है कि आवरण भङ्ग इसका प्रयोजन
नहीं है तो ये सिद्ध होय है कि ईश्वर मैं अज्ञानका आवरण नहीं है ज
ज्यो ईश्वर मैं अज्ञान है ही नहीं तो ब्रह्म मैं अविद्या ईश्वर के अज्ञान तैं
कल्पित है ये कैसैं हो सकै।

परन्तु हम यहां ये ओर पूछैं हैं कि विद्वान् कूं ज्यो

अहं ब्रह्मास्मि ॥

ये वृत्ति होय है तो ये वृत्ति अन्तःकरण का परिणा
होगी तो अन्तःकरण ज्यो है सो मायमय है तो ये वृत्ति भी
मय ही होगी ज्यो वृत्ति मायमय भई तो अवयविरूप वृत्ति मैं आ
भञ्जकता होवैं तो वृत्तिके अवयवों कूं भी आवरणभञ्जक मानणें हों
कि जैसे सूतमैं समवायिकता होवैं तो तन्तुःपिण्डरूप जो सूत ताके अ
वों मैं भी समवायिकता रही है अब ज्यो ऐसे वृत्तिके अवयवों मैं आ
वरणभञ्जकता सिद्ध हो गई तो ऐसे ही माया की वृत्तिके अवयव
कि ये ईश्वरकूं तुम यदि अज्ञान मानो हो उनकूं भी आवरण भञ्जक
दो तो ब्रह्ममैं आवरण कैसे सिद्ध होता इसका समाधान मधुसूदन ने
लिखा है सो कहो ॥ हम इसका तात्पर्य ये है कि ईश्वर मैं तो ...

अवश्य ही अविद्या नहीं मानौं हो काहेतें कि ईश्वर कूँ तुम सर्वज्ञ मानौं हो और उसमैं तुम अविद्या का किया आवरण नहीं मानौं हो तो उसमैं वो सर्वज्ञता माया की वृत्तिरूप मानौं हो तो उस माया कूँ शुद्धसत्वप्रधाना मानौं हो और उस मायाकूँ व्यष्टि अज्ञानकी समष्टिरूपा मानौं हो तो यो माया उपाधि जिसमैं रहैगी उस मैं स्वभाव सिद्ध ही आवरण का अभाव रहैगा जयो माया मैं स्वभाव सिद्ध आवरणका अभाव रहा तो उस माया की अंश रूप है जीवों की उपाधि तो इस मैं वी अवश्यही स्वभावसिद्धआवरण का अभाव मानणाँ पडैगा तो ब्रह्म मैं जीव अथवा ईश्वर तैं कल्पित अविद्या मानणाँ बणैं सकै नहीं तो सङ्कही नैं ब्रह्म मैं अविद्या का किया आवरण कैसें मान्याँ से कहो ॥

जयो कहो कि इसका विचार विचारसागर और वृत्तिप्रभाकर मैं लिखा नहीं और मेकूँ वी इसके उत्तर की स्फूर्त्ति होवै नहीं परन्तु निश्चलदास जी होते तो आपकूँ इसका उत्तर अवश्य देते तो हम कहैं हैं कि इस का उत्तर तो वे ये ही देते कि हमनैं तो पूर्व के ग्रन्थकारोके मतों का सङ्ग्रह किया है ॥ इतना विचार तो तुम वी करो जयो इसका उत्तर कुछ होता तो कोई ग्रन्थकार तो अवश्य लिखता परन्तु किसी नैं वी लिखा नहीं यातैं ये ही सिद्ध होय है कि पूर्व के ग्रन्थकार ये ही जाणते रहे कि ब्रह्म मैं आवरण असिद्ध है ॥

अब जयो कहो कि ब्रह्म मैं अविद्या ब्रह्मके अज्ञान तैं कल्पित है तो हम पूछैं हैं कि उस अविद्या का कल्पक अज्ञान उस अविद्या तैं भिन्न है अथवा उस अविद्या रूप है ॥ जयो कहो कि उस अविद्या तैं भिन्न है तो हम कहैं हैं कि उस अविद्या के कल्पक अज्ञान कूँ वी कल्पित ही मानौंगे तो अनवस्था होगी ॥ जयो कहो कि वो अज्ञान जयो है सो वो कल्पित जयो अविद्या तद्रूप ही है तो हम कहैं हैं कि यातैं तो ये सिद्ध होय है कि अविद्या स्वतःकल्पित है जयो अविद्या स्वतःकल्पित है तो इस मैं जयो स्वतःकल्पितपणाँ है सो स्वाभाविक है अथवा आगन्तुक है ॥

जयो कहो कि स्वाभाविक है तो हम पूछैं हैं कि स्वभाव सें जयो होय सो स्वाभाविक ये स्वाभाविक शब्दका अर्थ है और स्वभाव शब्दका अर्थ ये

हीं आप कल्पित है ये अर्थ सिद्ध हुवा तो ऐसें मानणाँ अनुभव वि
आपसें आप कल्पित होय तो जगत् का कल्पक ईश्वर अविद्यावादी म
सो बणसके नहीं और ज्यो ये कहो कि जीवमें ब्रह्म वृत्ति ज्यो अ
ताको कल्पक अविद्या जीवकी कल्पक अविद्यातें भिन्न मानें हैं तो हम
हैं कि रज्जुका ज्यो अज्ञान ताकरिकें कल्पित ज्यो सर्प उस सर्पमें ज्यो
ज्ञान उस अज्ञान करिकें रज्जुमें अज्ञान कल्पित है ऐसा अर्थ सिद्ध हुवा
तुमहीं विचार दृष्टितें देखो इस कल्पनातें अविद्या ब्रह्म में सिद्ध होय
अथवा असिद्ध होय है और ज्यो ये कहोकि ईश्वर के अज्ञानतें कल्पित
तो हम कहें हैं कि ये कथन तो सर्वथा असङ्गत है काहेतें कि देखो श्र
ही निश्चलदासजी नें विचारसागर के चतुर्थ तरङ्ग में लिखा है कि जै
जीवन्मुक्त विद्वान् कि आत्माकूं विषय करणेंवाली अन्तःकरण

अहंब्रह्मास्मि ॥

ऐसी वृत्ति होय है तैसें ईश्वरकूं भी माया की वृत्तिरूप

अहं ब्रह्मास्मि ॥

ऐसा ज्ञान होय है और ये कहो है कि आवरण भङ्ग इसका प्रयो
नहीं है तो ये सिद्ध होय है कि ईश्वर में अज्ञानका आवरण नहीं है
ज्यो ईश्वर में अज्ञान है ही नहीं तो ब्रह्म में अविद्या ईश्वर के अज्ञान
कल्पित है ये कैसें हो सके।

परन्तु हम यहां ये और पूछें हैं कि विद्वान् कूं ज्यो

अहं ब्रह्मास्मि ॥

ये वृत्ति होय है तो ये वृत्ति अन्तःकरण का परिणाम
होगी तो अन्तःकरण ज्यो है सो सावयव है तो ये वृत्ति भी स
यव ही होगी ज्यो वृत्ति सावयव भई तो अवयविरूप वृत्ति में आव
भञ्जकता होवें तें वृत्तिके अवयवों कूं भी आवरणभञ्जक मानणें हीं
होंय जैसें सूर्यमें तमोनाशकता होवें तें तेजःपिण्डरूप ज्यो सूर्य ताके अ
यवों में भी तमोनाशकता बणी है ज्यु अबो ऐसें वृत्तिके अवयवों में आ
भञ्जकता सिद्ध हो गई सो ऐसें ही माया की वृत्तिके अवयव
होंय हैं जिनकूं तुम यदि अज्ञान मानों तो उनकूं भी आवरण भञ्जक
होणें तो ब्रह्ममें आवरण कैसें सिद्ध होगा इसका समाधान पटुओं नें
हो लिखा है सो कहो ॥ हम इसका तात्पर्य ये है कि ईश्वर में ना

अवश्य ही अविद्या नहीँ मानौं हो काहेतें कि ईश्वर कूँ तुम सर्वज्ञ मानौं हो ओर उसमैं तुम अविद्या का किया आवरण नहीँ मानौं हो तो उसमैं वो सर्वज्ञता माया की वृत्तिरूप मानौं हो तो उस माया कूँ शुद्धसत्वप्रधाना मानौं हो ओर उस मायाकूँ व्यष्टि अज्ञानकी समष्टिरूपा मानौं हो तो वो माया उपाधि जिसमैं रहैगी उस मैं स्वभाव सिद्ध ही आवरण का अभाव रहैगा जयो माया मैं स्वभाव सिद्ध आवरणका अभाव रहा तो उस माया की अंश रूप है जीवौं की उपाधि तो इस मैं वी अवश्यही स्वभावसिद्धआवरण का अभाव मानणाँ पड़ैगा तो ब्रह्म मैं जीव अथवा ईश्वर तैं कल्पित अविद्या मानणाँ वणैं सकै नहीँ तो सङ्कही नैं ब्रह्म मैं अविद्या का किया आवरण कैसैं मान्याँ सो कहो ॥

जयो कहो कि इसका विचार विचारसागर ओर वृत्तिप्रभाकर मैं लिखा नहीँ ओर मोकूँ वी इसके उत्तर की स्फूर्त्ति होवै नहीँ परन्तु निश्चलदास जी होते तो आपकूँ इसका उत्तर अवश्य देते तो हम कहैं हैं कि इस का उत्तर तो वे ये ही देते कि हमनैं तो पूर्व के ग्रन्थकारोके मतौं का सङ्ग्रह किया है ॥ इतना विचार तो तुम वी करो जयो इसका उत्तर कुछ होता तो कोई ग्रन्थकार तो अवश्य लिखता परन्तु किसी नैं वी लिखा नहीँ यातैं ये ही सिद्ध होय है कि पूर्व के ग्रन्थकार ये ही जाणते रहे कि ब्रह्म मैं आवरण असिद्ध है ॥

अब जयो कहो कि ब्रह्म मैं अविद्या ब्रह्मके अज्ञान तैं कल्पित है तो हम पूछैं हैं कि उस अविद्या का कल्पक अज्ञान उस अविद्या तैं भिन्न है अथवा उस अविद्या रूप है ॥ जयो कहो कि उस अविद्या तैं भिन्न है तो हम कहैं हैं कि उस अविद्या के कल्पक अज्ञान कूँ वी कल्पित ही मानौं गे तो अनवस्था होगी ॥ जयो कहो कि वो अज्ञान जयो है सो वो कल्पित जयो अविद्या तद्रूप ही है तो हम कहैं हैं कि यातैं तो ये सिद्ध होय है कि अविद्या स्वतःकल्पित है जयो अविद्या स्वतःकल्पित है तो इस मैं जयो स्वतःकल्पितपणाँ है सो स्वाभाविक है अथवा आगन्तुक है ॥

जयो कहो कि स्वाभाविक है तो हम पूछैं हैं कि स्वभाव सें जयो होय सो स्वाभाविक ये स्वाभाविक शब्दका अर्थ है ओर स्वभाव शब्दका अर्थ ये

है कि स्व कहिये अपणाँ जयो भाव कहिये होणाँ तो इसका फलित
हुवा कि स्वसत्ता तो स्वाभाविक शब्द का अर्थ ये होगया कि स्वसत्ता सैं
तो इस का निष्कृष्ट अर्थ ये होगया कि स्वसत्ता सैं जन्य होय सो स्वाभा
तो स्वसत्ता शब्द करिकैं अविद्या सत्ता लिई जायगी तो ये कहो कि
द्या कूँ ब्रह्मकी सत्ता करिकैं सत्तावाली मानों हो अथवा इसमैं जो सत्ता
सो ब्रह्म सत्ता तैं भिन्न है ॥ जयो कहो कि अविद्या जयो है सो ब्रह्म
तैं सत्तावाली है तो हम कहैं हैं कि ये तुमारी मानी अविद्या ब्रह्मरूप
भई ब्रह्म तैं विलक्षण नहीँ भई जैसैं घट जयो है सो पृथ्वी
सत्ता तैं सत्तावाला है तो घट पृथ्वी है ज्यो कहो कि घट जयो है
पृथ्वी है तो भी पृथ्वी तैं जलानयनादिक कार्य होयैं नहीँ और घट तैं
लानयनादिक कार्य्य होय हैं तैसैं हीं अविद्या जयो है सो ब्रह्म हीं है
यो ब्रह्म तैं जगत् होवै नहीं और अविद्या तैं जगत् होय है ऐसैं मानैं
तो हम कहैं हैं कि इतनाँ और मानौं कि जैसैं घट जयो है सो कुलाल
ज्ञान तैं रचित है और रज्जु सर्प की तरैंहँ कल्पित नहीँ है तैसैं हीं अवि
द्या जयो है सो सच्चिदानन्द रूप ब्रह्म के स्वरूपभूत अलौकिक ज्ञान मैं
रचित है और रज्जुसर्प की तरैंहँ कल्पित नहीँ है तो सारे विवाद ही
मिट जावैं काहेतैं कि अविद्या कूँ ब्रह्म रचित मानणे तैं ये ब्रह्म रूप ही
सिद्ध होजावै परन्तु अविद्यावादी अविद्या कूँ ब्रह्म के स्वरूप भूत अ
लौकिक ज्ञान तैं रचित मानैं नहीँ ॥

जयो कहो कि अविद्याकूँ ब्रह्म रचित मानैं तो कार्यकी उत्पत्ति उपा
दान कारण विना हीं माननी पड़ैगी सो यह बनै नहीँ काहेतैं कि घटादि
कार्य जे हैं ते मृत्तिका रूप उपादान कारण विना होवैं नहीँ और मृत्तिका
भी आप ही घट कूँ पैदा कर सकै नहीँ किन्तु कुलाल की सहायता सैं ही
घट कूँ पैदा करै है यातैं निर्निमित्त भी कार्य होवै नहीँ अब जयो अविद्या
कूँ ब्रह्म रचित मानोंगे तो ये ब्रह्म अविद्या का उपादान कारण मानों तब
तो कार्य की निर्निमित्त उत्पत्ति माननीं पड़ैगी और जयो ब्रह्म अविद्या
का निमित्त कारण मानों तो निरुपादान कार्य की उत्पत्ति माननीं पड़ैगी
और उपादान कारण तथा निमित्त कारण इन दोनूँ कारणों विना कार्य
होवै नहीँ ये अनुभव सिद्ध है यातैं ब्रह्म सैं अविद्या की उत्पत्ति मानणीं
अनुचित है ॥

तो हम पूछें हैं कि अविद्यावादी जगत्कूं ईश्वर करिकैं रचित मानैं हैं तहाँ दोय कारण कैसें बणावैं हैं सो कहो जयो कहो कि अविद्यावादी मायाविशिष्टचेतन कूं ईश्वर मानैं हैं और ईश्वर तैं जगत् रूप कार्यकी उत्पत्ति मानैं हैं तहाँ ऐसें कहैं हैं कि ईश्वर जगत् का अभिन्ननितोपादान कारण है इसका तात्पर्य ये है कि ईश्वर कूं जगत् का कारण मानैं तहाँ जैसें घटादिक कार्य के कारण कुलाल और मृत्तिका ये भिन्न २ निमित्त उपादान बणैं हैं तैसें तो बणैं सकै नहीं किन्तु उपाधिप्रधानता करिकैं तो उस ही ईश्वरकूं जगत् का उपादान कारण मानैं हैं और वस ही ईश्वर कूं चैतन्यप्रधानता करिकैं निमित्त कारण मानैं हैं और ये दृष्टान्त देवैं हैं कि जैसें ऊर्णनाभि अर्थात् मकड़ी अपणैं रचित तन्तुकी कारण होय है तो शरीर रूप उपाधि की प्रधानता करिकैं तो रचित तन्तुकी उपादान कारण [illegible]य है और चैतन्य प्रधानता करिकैं वो ही मकडी रचित तन्तुकी निमि[illegible] कारण है तो ये मकडी रचित तन्तुकी अभिन्ननिमित्तोपादान कारण [illegible] भई तैसें ही ईश्वर जयो है सो जगत का अभिन्ननिमित्तोपादन कारण [illegible] ॥ तो ये और कहो कि तुम जीव और ईश्वर इनकूं अविद्या के कार्य [illegible]नैं हो तहाँ निमित्तकारण तो किसकूं मानौं हो और उपादान कारण [illegible]सकूं मानौं हो देखो जीव और ईश्वर इनकूं अविद्या के कार्य मानवें मैं अविद्यावादी ये श्रुति प्रमाण देवैं हैं कि

जीवेशावाभासेन करोति ॥

इस का अर्थ ये है कि जीव और ईश्वर इनकूं आभास करिकैं अविद्या करै है जयो कहो कि इस प्रकरण मैं किसी ग्रन्थकारनैं तो कुछ लिखा नहीं परन्तु जीव और ईश्वर ये अविद्या रचित हैं ये अर्थ श्रुति सिद्ध होगया यातैं अङ्गीकार करणाँ हीं पड़ैगा तो इसके कारणों का विचार करते हैं तो जीव और ईश्वर इनके कारण दोय होंगे एक तो ब्रह्म और दूसरी अविद्या सो इनकूं अविद्यावादी उपादान कारण हीं मानैं हैं तहाँ ब्रह्मकूं तो विवर्त्त उपादान मानैं हैं और अविद्याकूं परिणामी उपादान मानैं हैं हैं और निमित्तकारण यहाँ कोई बण सकै नहीं यातैं यहाँ निर्निमित्त ही जीव ईश्वर की उत्पत्तिमानवीं पडैगी तो हम कहैं हैं कि ये नियम

तो रहा नहीं कि निर्निमित्त कार्य होवे नहीं यातें अविद्याकी ब
वी निर्निमित्त मानौं ब्रह्मकूं अविद्या का उपादान मानौं ॥

जैसा कहो कि उपादान दो प्रकार के होय हैं तहाँ एक
विवर्त्ति और दूसरा परिणामी तो यहाँ ब्रह्म कूं वि
उपादान मानैं अथवा परिणामी उपादान मानैं सो कहो ॥ तो हम पू
कि तुम विवर्त्ति उपादान किसकूं कहो हो और परिणामी उपादान कि
कहो हो ज्यो कहो कि जयो कार्य भयें तैं अपणें स्वरूप का त्याग
करै यो तो उस कार्य का विवर्त्ति उपादान होय है जैसें सुवर्ण जयो
कटक कुण्डल का विवर्त्ति उपादान होय है और जयो कार्य भयें
स्वरूप तैं रहै नहीं यो उस कार्य का परिणामी उपादान होय है जैसें
जयो है सो दधि का उपादान होय है तो हम कहैं हैं कि ब्रह्मकूं अ
का विवर्त्ति उपादान मानों देखो अविद्यारूप कार्य भयें भी ब्रह्म जो
तिस के सच्चिदानन्द रूप का त्याग नहीं हुवा है ॥ जयो कहो कि
अविद्याका विवर्त्ति उपादान है ऐसें अङ्गीकार करैंगे तो हम कहैं हैं
अविद्या जयो है सो ब्रह्म रूपा सिद्धप होगई काहेतैं कि तुमहीं वि
उपादानतैं विलक्षण कार्य मानों नहीं किन्तु उपादानरूप ही मानों हो
कटक कुण्डलकूं सुवर्ण ही मानों हो ॥

जयो कहो कि अविद्याकूं जन्य मानवे में किसी आचार्यकी स
ति नहीं यातें हम इसकूं अनादि मानैंगे तो हम कहैं हैं कि इस अ
द्याकूं भाष्यकार जन्य मानैं हैं देखो ब्रह्मसूत्रके तृतीय अध्यायके द्वि
पादका ये सूत्र है कि

सामान्यात् ॥

इसके व्याख्यान में शङ्कर स्वामी लिखैं हैं कि

नहि ब्रह्मातिरिक्तं किञ्चिदजं सम्भवति ॥

इसका अर्थ ये है कि ब्रह्मतैं भिन्न कोई भी अज अर्थात् अन
कै नहीं यातैं अविद्या जयो है सो अनादि नहीं है ॥ जो कहो
हम अविद्याकूं ब्रह्म रूप मानवे में आचार्यों की सम्मति कहो तो
कहैं हैं कि

प्रकाशादिवन्नैवं परः ॥

ये ब्रह्म सूत्र है इसके भाष्यमें भाष्यकार लिखैं हैं कि

या मूलप्रकृतिरभ्युपगम्यते तदेव नो ब्रह्म ॥

इसका अर्थ ये है कि साङ्ख्य शास्त्र वाले जिसकूं मूल प्रकृति मानैं हैं सो हमारा ब्रह्म है ॥

ओर देखो कि अविद्याकूं अनादि मानों तो ऐतरेयोपनिषद् की ये श्रुति है कि

आत्मा वा इदमेक एवाग्र आसीन्नान्यत्कि-ञ्चन मिषत् ॥

इसका अर्थ ये है कि ये जगत् सृष्टिके पूर्व कालमैं एक आत्मा हीं हुया इस आत्मासैं भिन्न निर्व्यापार अथवा सव्यापार कुछ बी रहा नहीं तो इस श्रुति मैं एक ये शब्द आत्माका विशेषण है अब ज्यो अविद्याकूं अनादि मानौं तो आत्माका एक ये विशेषण व्यर्थ हो जाय यातें अविद्या ज्यो है सो जन्य है अनादि नहीं है ॥

ओर देखो कि

यत्र नान्यत् पश्यति नान्यच्छृणोति नान्यद्विजा-नाति स भूमा ॥

ये छान्दोग्य उपनिषद् की श्रुति है इसका अर्थ ये है कि जहां नहीं आपतैं भिन्न देखता है नहीं आपतैं भिन्न सुणता है नहीं आपतैं भिन्न जाणता है वो भूमा है तो इस परमात्मा तैं कुछ भिन्न होय तो उसका देखणाँ सुणणाँ जाणणाँ बणैं ज्यो कहो कि ये श्रुति ज्ञानके उत्तर काल की है तो हम कहैं हैं कि पूर्व कहे अनुभवतैं ज्ञान ज्यो है सो सर्वकूं है यातैं सर्व ही अपणें तैं भिन्नकूं देखैं नहीं सुणैं नहीं ओर जाणैं नहीं तो यातैं बी ये ही सिद्ध होय है कि अविद्या नहीं है ज्यो कहो कि सब प्रलय समय मैं द्रष्टा मैं दर्शन नहीं रहे है तो हम कहैं हैं कि

नहि द्रष्टुर्दृष्टेर्विपरिलोपो विद्यतेऽविनाशित्वात्॥

ये श्रुति है इसका अर्थ ये है कि अविनाशी है यातैं द्रष्टाकी दृष्टिका लोप नहीं है ॥ ओर देखो कि छान्दोग्य उपनिषद्की ये श्रुति है कि

यथासौम्यैकेन मृत्पिण्डेन सर्वं मृन्मयं विज्ञातं स्याद्वाचारम्भणं विकारो नामधेयं मृत्तिकेत्येव सत्यम्॥

इसका अर्थ ये है कि हे सौम्य जैसें एक मृत्तिका के पिण्ड के ज्ञान सर्व घटादिक कार्य मृत्तिका रूप जाणें जाय हैं उसमें वाणीं करिकें आर कियो ज्यो नाम सो केवल विकार है सत्य तो मृत्तिका ही है ये उप उद्दालक ऋषिनें श्वेतकेतुकूं कियो है पीछें सुवर्ण और लोह ये दोय दृष्टा कहि करिकें पीछें

सदेव सौम्येदमग्र आसीदेकमेवाद्वितीयम् ॥

ये श्रुति कही है इसका अर्थ ये है कि हे सौम्य ये पूर्व काल में स ही हुया एक ही हुया अद्वितीय हुया पीछें असत् सें सत् होवे नहीं ये अविद्याको निषेध करिकें पीछें

तदैक्षत वहु स्यां प्रजायेय ॥

ये श्रुति कही यातें शुद्ध ब्रह्म तें सृष्टि कही पीछें

यदग्ने रोहितं रूपं तेजसस्तद्रूपं यच्छुक्लं तदपां यत्कृष्णं तदन्नस्याऽपागादग्नेरग्नित्वं वाचारम्भणं विकारो नामधेयं त्रीणि रूपाण्येव सत्यम् ॥

ये श्रुति कही इसका अर्थ ये है कि ज्यो लोकप्रसिद्ध अग्नि का रक्त रूप है सो अपञ्चीकृत तेजका रूप है और ज्यो शुक्ल रूप है सो अप ञ्चीकृत जलका रूप है और ज्यो कृष्ण रूप है सो पृथ्वीका रूप है यातें अग्नि में अग्निपणां गये वाचारम्भण विकार नाम मात्र है तीन ही रूप सत्य हैं पीछें ये श्रुति है कि

तस्य क मूलं स्यादन्यत्रान्नादेवमेव खलु सोम्या न्नेन शुङ्गेनापो मूलमन्विच्छाद्भिःसोम्य शुङ्गेन तेजो मूलमन्विच्छ तेजसा सोम्य शुङ्गेन सन्मूलमन्विच्छ सन्मूलाः सोम्येमाः सर्वाः प्रजाः सदायतनाः सत्प्र-तिष्ठाः ॥

इसका अर्थ ये है कि शरीर का मूल अन्न तैं भिन्न कहाँ होय अर्थात् शरीर का मूल अन्न है और अन्नरूप कार्य करिकैं जलकूं मूल जाणौं और जलरूप कार्य करिकैं तेजकूं मूल जाणौं और तेज रूप कार्य करिकैं ब्रह्मकूं मूल जाणौं हे सोम्य ये सर्व प्रजा जेहैं ते सत् है मूल उपादान जिनको ऐसी हैं और सत् है आश्रय जिनको ऐसी हैं और सत् है लयस्थान जिनको ऐसीहैं इस श्रुतिमें शुङ्ग नाम कार्यको है अब तुम हीं विचार करो ज्यो परमात्मा में अविद्या होती तो ये श्रुति सर्वकी उत्पत्ति स्थिति लय ब्रह्मसें कैसें कहती यातैं परमात्मामैं अनादि अविद्या मानणाँ असङ्गत ही है पीछैं उद्दालक ऋषि नैं श्वेतकेतुकूं ये श्रुति कही कि

स य एषोऽणिमैतदात्म्यमिदं सर्वं तत्सत्यं स आत्मा तत्वमसि ॥

इसका अर्थ ये है कि यो ब्रह्म सूक्ष्मतम है ये जगत् ब्रह्म रूप है ब्रह्म सत्य है यो साक्षी आत्मा है हे श्वेतकेतो सो ब्रह्म तू है ऐसें छान्दोग्य उपनिषद् मैं कही यातैं अनादि अविद्या मानणाँ श्रुतिवि-रुद्ध है ॥

और देखो अविद्या ज्यो है सो सावयव है यातैं वी जन्य है ज्यो हो कि अविद्यावादी इसकूं सांश मानैं हैं यातैं अनादि मानैं हैं सांश और सावयव मैं ये ही भेद मानैं हैं कि सांश होय सो अनादि और साव-यव होय सो सादि तो हम कहैं हैं कि सावयव मानणें में तो ये श्रुति बाध है कि

मायां तु प्रकृतिं विद्यान्मायिनं तु महेश्वरम्
तस्यावयवभूतैस्तु व्याप्तं सर्वचराचरम् ॥

इसका अर्थ ये है कि प्रकृति नाम तो मायाको है और माया जिस रहै सो ईश्वर है उसके अवयवाँ करिकैं चराचर सर्व व्याप्त है तो इस श्रुतिसें माया विशिष्ट चेतन ईश्वर सिद्ध होय है तो चेतनकूं तो अविद्या वादी भी सावयव मानैं नहीं और इस श्रुतिमें ईश्वर के अवयवाँ करिकैं चराचरकूं व्याप्त कह्या है तो माया सावयव है ये सिद्ध होय है और मायाकूं सावयव तैं विलक्षण सांश मानवे में कोई भी श्रुति प्रमाण नहीं यातैं अविद्या सावयव होवे तैं सादि है सो शुद्ध ब्रह्म ही माया अ-विद्यारूप होय है इसमैं ये श्रुति प्रमाण है कि

मायाचाविद्या च स्वयमेव भवति ॥

इसका अर्थ ये है कि स्वयं शब्दका अर्थ ज्यो शुद्ध ब्रह्म सो माया अविद्यारूप होय है जो कहोकि स्वयं शब्द का अर्थ शुद्ध कहां है तो हम कहैं हैं देखो विद्यारण्य स्वामी नैं स्वयं शब्द का शुद्धही कहा है ॥

और देखो कि श्रीकृष्ण नैं गीताके सप्तम अध्याय मैं अपरा व परा ये दोय प्रकृति कही पीछैं ये कही कि

अहं कृत्स्नस्य जगतः प्रभवः प्रलयस्तथा ॥

इसका व्याख्यान भाष्यकार ये करैं हैं कि

यस्मान्मम प्रकृतियोंनिः कारणं सर्वभूताना·

मतोऽहं कृत्स्नस्य समस्तस्य जगतः प्र

तुम ये तो कहो सङ्क्षेपहीनैं अविद्याकूँ अनादि मानी है अथवा सादि मानी है ज्यो कहो कि विचार सागर के द्वितीय तरङ्गमैं नियलदासजी ऐसैं लिखैं हैं कि एक ब्रह्म १ और ईश्वर २ और जीव ३ और अविद्या ४ और अविद्या का चेतन सें सम्बन्ध ५ और अनादि वस्तु का भेद ६ ये षट् वस्तु स्वरूपतैं अनादि हैं जा वस्तु की उत्पत्ति होवै नहीँ सो वस्तु स्वरूपतैं अनादि कहिये है तो हम पूछैं हैं इसमैं अर्थात् अविद्याकूँ आदि लेकैं जे पाँच इनकूँ अनादि मानणें मैं श्रुति प्रमाण दिई है अथवा स्मृति प्रमाण दिई है अथवा कोई युक्ति कही है अथवा अनुभव बताया है सो कहो जयो कहो कि श्रुति स्मृति युक्ति अनुभव तो कुछ वी लिखा नहीँ परन्तु ऐसैं लिखा है कि ये षट् वस्तु अनादि हैं ये वेदान्त का सिद्धान्त है तो हम कहैं हैं कि ये वेदान्त का सिद्धांत है तो वेदान्त नाम तो उपनिषदों का है उनमैं सिद्धांत श्रुति तो ये है कि

न निरोधो नचोत्पत्तिर्न वद्धो न च साधकः
न मुमुक्षुर्न वै मुक्त इत्येषा परमार्थता ॥

इसका अर्थ ये है कि न तो निरोध कहिये प्रलय है और नैं उत्पत्ति है और नैं तो बन्धनकूँ प्राप्त भयो है और नैं कोई साधक है नैं कोई मोक्ष की इच्छा करै ऐसो है और नैं कोई मुक्त है ये परमार्थता है अर्थात् वेदान्त को सिद्धांत है अब तुम ही विचार करो श्रुति स्मृति युक्ति अनुभव इन बिना पाँचकूँ अनादि कहणाँ और इस कथनकूँ वेदांत का सिद्धांत कहणाँ ये प्रामाणिक है अथवा अप्रामाणिक है ॥

अब विचार करिकैं देखो अविद्याकूँ सदसद्विलक्षण और अनादि मानी तो न्यायवालोँ का मान्याँ ज्यो प्रागभाव तद्रूप भई तो अलीक सिद्ध भई काहेसैं कि भेद खण्डन के विषय मैं पूर्व अभाव की अलीकता सिद्ध हो गई है और ज्यो जगत्कूँ अज्ञान कल्पित सिद्ध करणें के अर्थ अविद्या मानी तो जगत् अज्ञान कल्पित सिद्ध हुवा नहीँ और ज्यो अविद्याकूँ ब्रह्ममैं आवरण सिद्ध करणें के अर्थ मानी तो ब्रह्ममैं आवरण सिद्ध हुवा नहीँ और ज्यो स्वभाव सिद्ध मानी तो ज्ञान की व्यर्थता भई और ज्यो ज्ञान की निवर्त्य किवो तो ज्ञान स्वतः सिद्ध होवैं तैं इसकी निवृत्ति स्वतःसिद्ध भई और ज्यो कल्पित मानी तो इसका कल्पक सिद्ध हुया नहीँ और ज्यौं

स्वतः कल्पित मानी ते ब्रह्म रूपा सिद्ध भई और ज्यो ब्रह्म रचित
ते ब्रह्म इसका उपादान हुवा यातैं ये ब्रह्मरूपा सिद्ध भई और
जन्य मानर्वें मैं ते श्रुति स्मृति और भाष्यकार इनकी सम्मति रही
सङ्कहीनैं ज्यो अनादि कही उसमैं कोई प्रमाण सिद्ध हुवा नहीं यातैं
तैं भिन्न अनादि सदसद्विलक्षण अविद्या अलीक है ॥

देखो ये अविद्यावादी कैसे हैं ज्यो पुरुषकूं अप्रामाणिक अर्थकूं प्र
णिक कहिकैं ठगैं हैं जैसें सङ्कहीनैं अविद्यादिक पाँचकूं अनादि बता
ये वेदान्त का सिद्धान्त है ऐसें कही और ये यी नहीं कही कि ये पूर्व
है अथवा अर्थवाद है किन्तु ये ही कही कि ये वेदान्त का सिद्धान्त
विचार ते करो अविद्या मानर्वें मैंवेदान्त का अभिप्राय है अथवा स
दानन्दरूप परमात्मा के मानर्वें मैं और इससें भिन्न वस्तु नहीं
इसमें वेदान्त का अभिप्राय है ॥ देखो ब्रह्म की सत्ता करिकै
वान् ब्रह्मव्यतिरिक्त पदार्थ हैं ये यी वेदाँत का अभिप्राय नहीं है देखो

सामान्यात्तु ॥

इस सूत्र के भाष्य में शङ्कर स्वामी लिखैं हैं कि

न च ब्रह्मव्यतिरिक्तं वस्त्वस्तित्वमवकल्पते

इसका अर्थ ये है कि ब्रह्म तें व्यतिरिक्त कहिये भिन्न ऐसा ज्यो व
सो अस्तित्व की कल्पना नहीं करै है तात्पर्य ये है कि ब्रह्म तें भिन्न व
नहीं है और ज्यो अस्तित्व धर्म करिकैं प्रतीत होय है अर्थात् है इस

ातत्व धर्मका आवरण करि लेये है यातैं कल्पित सर्प मैं तत्क्षणजातत्व प्र
ीत होवे नहीं ऐसें अविद्यावादी मानैं हैं ऐसें हीं ब्रह्म मैं अविद्यावादियोँ
ां अविद्या कल्पित किई है यातैं ब्रह्म का अनादित्व धर्म अविद्यावादियोँ
ूं अविद्या मैं प्रतीत होय है इस कारणतैं इनकी कल्पित अविद्या इनकूँ
ानादि प्रतीत होय है ऐसें मानौं ॥ परन्तु आश्चर्य तो ये है कि इनकूँ
अविद्या मैं ब्रह्मकी सत्ता प्रतीत होय है तो थी ये अपणीं कल्पित अवि-
ा कूँ सद्रूप नहीं मानैं हैं ॥

ज्यो कहो कि प्रतीति काल मैं इसकूँ सत् ही मानैं हैं तो हम कहैंहैं
के इननैं ज्यो अविद्याकूँ सदसद्विलक्षण कही है सो कथन असङ्गत हुवा
यो कहो कि इसकूँ सदसद्विलक्षण सत् मानैं हैं तो हम पूछैं हैं कि सद-
द्विलक्षण सत् इस का अर्थ कहो ज्यो कहो कि तीन काल मैं अबाध्य हो-
य सो तो सत् और ज्यो इससें विपरीत होय सो असत और ज्यो इन दोनूँ
तैं विलक्षण होय सो सदसद्विलक्षण तो अविद्या ज्यो है सो ज्ञान तैं नष्ट हो
य है यातैं तो सद्विलक्षण है और सत् तैं विपरीत हैं अलीक तो ये अवि-
द्या अलीकविलक्षण है यातैं असद्विलक्षण है तो अविद्या जो है सो सद्
सद्विलक्षण सिद्ध होगई और अविद्या जो है सो है इस प्रतीतकी विषय है
यातैं सदसद्विलक्षण सत् भई तो हम पूछैं हैं कि अविद्या जो है सो सद-
सद्विलक्षण सत् है तो इस मैं ज्यो सत्ता है तिस कूँ ब्रह्मसत्तातैं भिन्न मा-
नणीं पड़ैगी तो भाष्यकारनैं ज्यो ब्रह्मसत्तातैं भिन्न सत्ता नहीं है ये कथन
किया सो असङ्गत हुवा इस की सङ्गति कहा है सो कहो ।

ज्यो कहो कि अविद्यावादी सत्ता तीन मानैं हैं तो हम कहैं हैं कि
हमनैं सत्ता च्यार कही है देखो न्याय के मतके विवेचन मैं जहां भेद खण्ड
न है तहां हम पारमार्थिकीसत्ता व्यवहारिकीसत्ता प्रतिभासिकीसत्ता
और चतुर्थसत्ता ऐसें कहि आये हैं तहां चतुर्थसत्ता भेद की तथा हाय
की कही है तो ये तो कल्पना मात्र है वस्तु गत्या तो एक ब्रह्मसत्ता ज्यो
है सो ही मुख्यसत्ता है इस ही सत्ता तैं सर्व सत्तावान् है यातैं सर्व ब्रह्म हीं
है ज्यो सर्व ब्रह्म न होय तो किसी वी पदार्थ मैं सत्ता की प्रतीति होवै
नहीं काहे तैं कि भाष्यकार जे हैं तिनकै ब्रह्म तैं व्यतिरिक्त पदार्थ मैं सत्ता
मानणीं अभिमत नहीं है इसी सत्ता के तीन नाम अविद्यावादियों नैं क-
ल्पित किये हैं और हमनैं च्यार नाम कल्पित किये हैं और कोई सिद्धान्त

आवश्यकता तैं विशेष नाम वी कल्पित करैं तो इसमैं हमारा कुछ वो
वाद नहीं है और तुम कूँ वी इस विषय मैं विवाद करणाँ उचित नहं
तो श्रुति नैं ज्यो एक मृत्पिण्ड के विज्ञान तैं सर्व मृन्मय जाणे जाय हैं
दृष्टान्त तैं एक मृत्पिण्डस्थानीय ज्यो वस्तु कहा है तिस कूँ जाणवेको
करो ॥

ज्यो कहो कि अविद्या अलीक है तो इस की प्रतीति कैसें होय
तो हम कहैं हैं कि जैसें अलीक हाऊ बालकों कूँ दीसै है तैसें अविद्या
विद्यावादियों कूँ दीसै है ज्यो कहो कि बालकोंकूँ हाऊ दीसै नहीं कि
बालक तो विचार शून्य हैं उनकूँ वृद्ध पुरुष कुपथ तैं हटायवेके अर्थ अ
क हाऊकी वृक्षादिक मैं कल्पना करिकैं भय कराय देवैं हैं यातैं उन ब
की कुपथ तैं निवृत्ति होजाय है तो हम कहैं हैं कि ऐसैं ही विचार शू
पुरुषों कूँ जीवन्मुक्ति का आनन्द करायवे के अर्थ वेद ग्रन्थ मैं अली
अविद्या की कल्पना करिकैं डरावै है पीछैं आप ही विवेक कराय का
जीवन्मुक्ति का आनन्द करावै है ॥ ज्यो कहो कि वेदनैं अविद्याका कल्पक
इस मैं अनुभव कहा है सो कहो तो हम कहैं हैं कि जब पर्यन्त वेद अवा
न्तर वाक्यों करिकैं उपदेश करै नहीं तब पर्य्यन्त अविद्या का अनुभव हो
वै नहीं और जब वेद अवान्तर वाक्यों करिकैं उपदेश करै है तब अविद्याक
अनुभव होवै है जैसें कल्पना करो कि कोई पुरुष ऐसा है जिसनैं आज ता
ईं पट ऐसा नाम वी श्रवण किया नहीं उस पुरुष कूँ मैं पटकूँ नहीं जा
नूँ ये बुद्धि होवै नहीं और जब उस पुरुष कूँ वह पुरुष जो
आप्त मान्यां हुया कोई पुरुष ऐसें कहै कि पट है तब उस पुरुषकूँ प
का ज्यो आवरण उस का अनुभव होवै है और जब वो ही पुरुष ऐसें कहै
कि ये है पट तब उस पुरुष कूँ पटका साक्षात्कार होय है तैसें अवान्तर
वाक्यों करिकैं आत्मा मैं आवरण रूप अज्ञान प्रतीत होय है और म
वाक्यों करिकैं आत्मा का साक्षात्कार होय है ऐसें अविद्यावादी
मानैं हैं ॥

अब तुम विचारो कि पट अज्ञान करिकैं आवृत रहा सो
जैसा आवरण जिसका अनुभव असत्त्वापादक अज्ञान की निवृत्ति तैं पूर्व
सा नहीं इस मैं कारण कहा है ॥ ज्यो कहो कि असत्त्वापादक अ
अभानापादक अज्ञान की प्रतीति का प्रतिबन्धक है सो हम पूछैं हैं

असत्यापादक अज्ञान की प्रतीति अभानापादक अज्ञान के रहतैं होय है अथवा नहीं जो कहो कि अभानापादक अज्ञान के रहतैं असत्वापादक अज्ञान की प्रतीति होय है तो हम पूछैं हैं कि उस प्रतीति का आकार कहा है सो कहो ज्यो कहो कि घट नहीं है ये असत्यापादक अज्ञान की प्रतीति का आकार है तो हम कहैं हैं कि विषयि व्यवहार में विषयज्ञान कारण है ज्यो विषय कूँ नहीं जाणै वो उस के विषयि कूँ नहीं जाणें सकै है जैसें न्याय के मत में अनुव्यवसाय तो विषयिरूपज्ञान है और व्यवसायज्ञान विषय है तो वो व्यवसायज्ञान ज्यो है सो यत्किञ्चित् घटादि विषयक है तो व्यवसायज्ञान जो है सो विषयि हुवा तो उसके विषय होंगे घटादि पदार्थ अब तुम ही देखो ज्यो पुरुष घट कूँ नहीं जाणैगा वो पुरुष व्यवसायज्ञान कूँ घटका विषयि कैसें कहैगा ऐसें ही तुम घट नहीं है इस प्रतीति कूँ असत्यापादक अज्ञानकी प्रतीति कहोहो तो इस प्रतीति का विषय होगा घटविषयक अज्ञान तो ये अज्ञान घटका विषयि होगा और घट इस अज्ञान का विषय होगा अब ज्यो घट का ज्ञान असत्यापादक अज्ञान की प्रतीतिके पूर्व नहीं मानैंगे तो घट नहीं है इस प्रतीतिका विषय जो घटविषयक अज्ञान उसकूँ घटका विषयि अज्ञान कैसें कहोगे यातैं अभानापादक अज्ञान के रहतैं असत्यापादक अज्ञानकी प्रतीति मानों तो असत्वापादक अज्ञानका ज्यो विषय ताका ज्ञान पूर्व मानों अब ज्यो असत्वापादक अज्ञान की प्रतीति के पूर्व अज्ञान के विषय का ज्ञान मान्यां तो घट है ऐसा ज्ञान मानोंगे ज्यो ऐसा ज्ञान मान्यां तो ये ज्ञान ज्यो है सो घट नहीं है इस ज्ञान का प्रतिबन्धक है यातैं असत्यापादक अज्ञान की सिद्धि होवै ही नहीं ॥ अब जो असत्यापादक अज्ञान सिद्ध नहीं हुवा तो इस असत्यापादक अज्ञान कूँ अभानापादक अज्ञान की प्रतीति का प्रतिबन्धक तुम नें मान्यां है तो इस असत्यापादक अज्ञान के नहीं होवें तैं अभानापादक अज्ञान की प्रतीति मानों ज्यो अभानापादक अज्ञान की प्रतीति मानी तो अभानापादक अज्ञान की प्रतीति भयें असत्वापादक अज्ञान रहै नहीं ये अनुभव सिद्ध है ज्यो असत्वापादक अज्ञान नहीं रहा तो इसकी जो निवृत्ति सो ही अज्ञानवादियों कैं अवान्तर वाक्यों करिकैं उत्पन्न भया जो परोक्षज्ञान ताका फल है यातैं अर्थात् असत्यापादक अज्ञान के नहीं रहवे तैं इस अज्ञान की निवृत्ति के अर्थज-

यान्तरवाक्योपदेश व्यर्थ होगा इस कारण तैं अभानापादक अज्ञान
असत्वापादक अज्ञान की प्रतीति होय है ऐसे मानणाँ असङ्गत है
जयो कहो कि अभानापादक अज्ञान के रहतैं असत्वापादक अज्ञा
प्रतीति नहीं मानैंगे तो हम पूछैं हैं असत्वापादक अज्ञान की प्रती
प्रतिबन्धक किसकूं मनैंगे सो कहो जयो कहो कि असत्वापादक अज्ञा
प्रतीति का प्रतिबन्धक अभानापादक अज्ञान कूं मानैंगे तो हम पू
असत्वापादक अज्ञान के रहतैं अभानापादक अज्ञान की प्रतीति है
अथवा नहीं जयो कहो कि होय है तो हम कहैं हैं कि अभानापादक
ज्ञान की प्रतीति का आकार ये है कि घट नहीं दीखै है तो ये अ
अज्ञानवादियों कूं तय होय है कि जब असत्वापादक अज्ञान निवृत्त
जाय है अब जयो असत्वापादक अज्ञान रहा ही नहीं तो अभानाप
अज्ञानकूं असत्वापादक अज्ञान की प्रतीति का प्रतिबन्धक मानणाँ अ
युक्त ॥

जयो कहो कि असत्वापादक अज्ञान के रहतैं अभानापादक अ
की प्रतीति होवै नहीं ऐसैं मानैंगे तो हम कहैं हैं कि तुमारे कथन
भिप्राय ये सिद्ध हुवा कि अप्रतीत जे असत्वापादक और अभानापा
अज्ञान ते परस्पर परस्पर की प्रतीति के प्रतिबन्धक हैं तो तुम येही
कि हमारा ये ही अभिप्राय है तो हम पूछैं हैं जयो पदार्थ है और प्र
नहीं होवै तहाँ तुम पदार्थ की अप्रतीति का कारण किसकूं मानों हो
कहो ॥ जयो कहो कि अन्यदेशस्थित पदार्थकी जयो अप्रतीति होय है तहाँ
भित्यादिक आवरक होय हैं और जहाँ पुरोवर्त्ति पदार्थकी अप्रतीति होय
तहाँ अज्ञान आवरक होय है तो हम कहैं हैं कि अन्य देशस्थित पदार्थ
अप्रतीति का कारण भित्यादिक होय तिसकूं मानों इसमें तो हमारा वि
द नहीं परन्तु जहाँ पुरोवर्त्ति पदार्थ अप्रतीत होय तहाँ तुम अज्ञान
आवरक मानों हो और जहाँ अज्ञान दो प्रकार के मानों हो और उनकूं परस
परस्पर की प्रतीति के प्रतिबन्धक मानों हो तो वे दोनूं अप्रतीत भये
... वे दोनूं अज्ञान निरावरण अप्रतीत हैं अथवा ... अप्रती
त है ॥ जयो कहो कि निरावरण अप्रतीत हैं तो हम कहैं हैं कि पद
को निरावरण हीं अप्रतीत मानों ... मानोंगे तो प्रतिबन्धक अ
... और ... दोनूं अज्ञान नहीं मानोंगे तो

लाघव होगा लाघव कूँ गुण और गौरव कूँ दोष सकल शास्त्रों में मानैं हैं ॥

जो कहो कि सावरण अप्रतीत मानैं गे तो हम पूछैं हैं उन दोनूँ अज्ञानौं के और तो आवरण बणै सकै नहीं यातैं उन दोनूँ अज्ञानौं के आवरक च्यार अज्ञान और मानणैं पडैं गे काहेतैं कि प्रत्येक अज्ञान के आवरण के अर्थ असत्वापादक और अभानापादक अज्ञान आवश्यक होंगे तो अनवस्था होगी इस दोषकी निवृत्ति होणीं कठिनहै ॥

ज्यो कहो कि प्रतिबन्धक के होतैं कार्य होवै नहीं ये सर्वसम्मत है तो असत्वापादक अज्ञान की प्रतीति का प्रतिबन्धक तो है अभानापादक अज्ञान यातैं तो असत्वापादक अज्ञान की प्रतीति होवै नहीं और अभानापादक अज्ञानकी प्रतीतिका प्रतिबन्धक है असत्वापादक अज्ञान यातैं अभानापादक अज्ञानकी प्रतीति होवै नहीं इस कल्पनातैं कोई आपत्ति बी नहीं रही और दोनूँ अज्ञानौंकी अप्रतीति बी बणँ जायगी तो हम कहैं हैं कि ऐसैं इन दोनूँ अज्ञानौंकूँ परस्परकी प्रतीतिके प्रतिबन्धक मानौंगे तो अवान्तर वाक्यौं करिकैं ज्यो परोक्षज्ञान मानौं हो और उससैं तुम असत्वापादक अज्ञानका नाश मानौं हो ये कथन कैसैं समीचीन होगा काहेतैं कि जिज्ञासु पुरुषकूँ ज्यो दोनूँ अज्ञानौं की प्रतीति ही नहीं तो वो पुरुष दोनूँ अज्ञानौं की निवृत्तिके अर्थ यत्न कैसें करैगा देखो सारे पुरुष लोकमैं प्रतीतिविषय जे सर्पादिक तिनकी ही निवृत्ति को यत्न करैं हैं और अप्रतीत जे सर्पादिक तिनकी निवृत्ति को यत्न कोई बी करै नहीं यातैं असत्वापादक और अभानापादक अज्ञान दोनूँहीं मानणां असङ्गत हुवा ॥

ज्यो कहो कि अवान्तरवाक्यश्रवणके अनन्तर ज्यो परोक्षज्ञान होय है उसका आकार ये है कि आत्मा है तो ये ज्ञान ज्यो है सो आत्मा नहीं है इस ज्ञानका विरोधी है ये अनुभव सिद्ध है यातैं हम ऐसैं मानैंगे कि परोक्षज्ञानतैं पूर्व हमकूँ असत्वापादक अज्ञान की प्रतीति रही ऐसैं ज्यो असत्वापादक अज्ञानकी प्रतीति मानौंतो इसका विषयअसत्वापादक अज्ञान सिद्ध होगया तो हम कहैं हैं कि ये तो अत्यन्तही आश्चर्य हुवा कि अविद्यावादी मानतैं अज्ञानकूँ निरस्त करते रहे तिनके ज्ञानतैं अज्ञान सिद्ध हुवा है परन्तु हमारे कथन में तो अनुगुण हुवा है काहेतैं कि हम पूर्व ऐसैं कहि आये हैं

कि येद ब्रह्म मैं अविद्याकी कल्पना करिकैं डरावै है सो ही अर्थ सि
होगया काहेतैं कि अवान्तर वाक्यौं करिकैं तुमनैं जयो ज्ञान मान्यौं उ
हीं तुमनैं अज्ञान की सिद्धि किई है और हमनैं भी वेदकूं हीं अज्ञान
कल्पक कहा है परन्तु परोक्षज्ञानकी उत्पत्तिके पूर्व असत्वापादक अज्ञान
प्रतीति मानौं सो किसी कै भी अनुभव सिद्ध नहीं यातैं उस प्रतीति
प्रतिबन्धक अवश्य कोई कल्पित करणाँ चाहिये और उस प्रतिबन्धक
स्वरूप अभानापादक अज्ञानतैं विलक्षण बतावौं चाहिये काहेतैं
अभानापादक अज्ञान सैं पूर्व असत्वापादक अज्ञानकी जयो प्रतीति ता
प्रतिबन्धकता असिद्ध भई है और उन असत्वापादक अज्ञान का है
आवरक भी पूर्व सिद्ध नहीं हुया है ॥

जयो कहो कि असत्वापादक अज्ञानकूं आवृतस्वभाव मानैंगे ।
र्यात् असत्वापादक अज्ञानका ये स्वभाव ही है कि ये आवृत ही रहै
तो हम कहैं हैं कि इसका आवृत स्वभाव है तो ये अपणें विषय का आ
वरण कैसें करैगा देखो अज्ञानवादी अज्ञानकूं तमःस्वभाव मानैं हैं ।
तम जयो है तिसका आवृत स्वभाव नहीं है किन्तु आवरण स्वभाव है स
आप अनावृत होता हुया अन्य पदार्थोंका आवरण करै है यातैं असत्वा
पादक अज्ञानकूं आवृतस्वभाव मानणाँ असङ्गत ही है ॥ अथवा असत्वा
पादक अज्ञानकूं आवृतस्वभाव ही मानौं ये हमारे भी अभिमत है काहे
कि भेद हातू ये आवृतस्वभाव हैं तो ये अलीक सिद्ध भये हैं तैसें हीं आ
वृत स्वभाव होवैं सें असत्वापादक अज्ञान भी अलीक ही है ऐसैं मानौं
जयो कहो कि ये अज्ञान अलीक होय तो आवरण कैसें करैगा तो हम क
हैं कि जैसें अलीक जयो भेद सो भिन्न ऐसा जयो व्यवहार ताकूं सिद्ध करै
और जैसें अलीक हातू भय सिद्ध करै है तैसैंही अलीक जयो असत्वापादक
अज्ञान सो आवरण सिद्ध करैगा ॥

जयो कहोकि असत्वापादक अज्ञानकी निवृत्ति जयो है सो अवान्तर
वाक्योपदेशका फल है अर्थात् अवान्तर वाक्योपदेश करिकैं असत्वापादक
अज्ञानकी निवृत्ति होय है अब जयो असत्वापादक अज्ञान अलीक है
तो इसकी निवृत्ति भी अलीक ही होगी जयो ये निवृत्ति अलीक भई
इस निवृत्तिकूं सिद्ध करवैं के अर्थ अवान्तर वाक्योपदेश व्यर्थ होगा काहे
कि विद्यमानवस्तु जयो है सो अलीक होय है तो ये असत्वापादक अज्

की निवृत्ति ज्यो है सो अलीक होणे तें ये वी त्रिकालासत् भई तो इसकी सिद्धिके अर्थ अवान्तर वाक्योपदेश ज्यो है सो व्यर्थ ही है॥तोहम कहैं हैं कि असत्वापादक अज्ञान अलीक होणे तें इसकी निवृत्ति ज्यो है ताकूँ अलीक मानणाँ असङ्गत है काहेतें कि ज्यो अलीक की निवृत्ति वी अलीक होय तो अविद्यावादी रज्जुमें सर्पकूँ प्रातिभासिक मानें हैं और रज्जुसर्प की निवृत्तिकूँ प्रातिभासिक नहीं मानें हैं सो इनकूँ वी ये रज्जु सर्प की निवृत्ति प्रातिभासिक ही मानणी पड़ैगी सो अनुभव विरुद्ध है यातें अलीक ज्यो असत्वापादक अज्ञान ताकी निवृत्ति के अर्थ ज्यो वेद अवान्तर वाक्योपदेश करै है सो व्यर्थ नहीं है अथवा असत्वापादक अज्ञान की निवृत्तिकूँ अलीक ही मानौं तो वी कुछ हानि नहीं है ज्यो कहो कि अवान्तरवाक्योपदेशमें ज्यो व्यर्थताकी आपत्ति भई तसकी निवृत्तिका उपाय कहा तो हम कहैं हैं कि अवान्तरवाक्योपदेश का फल परोक्षज्ञानकूँ हीं मानौं असत्वापादक अज्ञान तो ज्यो होता तो प्रतीत होता परन्तु ये तो प्रतीत होवे नहीं यातें त्रिकालासत् ही है ज्यो ये अज्ञान त्रिकालासत् हुवा तो इसकी निवृत्ति का यत्न वी व्यर्थ ही है यातें परोक्षज्ञान हीं अवान्तरवाक्योपदेश का फल है ये ही जाणों ॥

जयो कहो कि असत्वापादक अज्ञान अलीक हुवा तो वेदकूँ अज्ञान का कल्पक कहा सो असङ्गत हुवा काहेतें कि ज्यो असत्वापादक अज्ञान हीं नहीं तो वेदनें किस अज्ञान की कल्पना किई तो हम कहैं हैं वेदकूँ अभानापादक अज्ञान का कल्पक मानौं काहेतें कि अवान्तरवाक्योपदेश के अनन्तर अभानापादक अज्ञान प्रतीत होय है ज्यो कहो कि अभानापादक अज्ञान की प्रतीति मात्रतें वेदकूँ अविद्या का कल्पक कैसें मानें अभानापादक अज्ञान तो अवान्तरवाक्योपदेशतें पूर्व ही रहा सो ही अवान्तरवाक्योपदेश के अनन्तर प्रतीत हुवा है तो हम कहैं हैं कि अभानापादक अज्ञान अवान्तरवाक्योपदेशतें पूर्व होता तो प्रतीत होता परन्तु कोई इस अज्ञान की प्रतीति का प्रतिबन्धक रहा नहीं तो वी ये प्रतीत हुवा नहीं तो ये ही जाणों कि ये अज्ञान अवान्तरवाक्योपदेशतें पूर्व रहा ही नहीं अवान्तरवाक्योपदेशतें पीछें हीं कल्पित हुवा है ॥

ज्यो कहो कि साक्षात् आत्मतत्व का प्रतिपादक ज्यो वेद ताकूँ अज्ञान का कल्पक कहणें तें वेदकी न्यूनता होय है यातें वेदकूँ अज्ञानका

कल्पक कहना असङ्गत है तो हम कहैं हैं कि अवान्तरवाक्यपद के
न्तर विचार शून्य अविद्यावादी अभानापादक अज्ञान की कल्पना करैं
यातैं अज्ञानवादियोंकूं ऐसैं कही है कि तुम वेदकूं अज्ञान का क
मानौं ॥ और हम तो अबही पूर्व कहि आये हैं कि अवान्तरवाक्यों
का फल परोक्षज्ञानकूं हीं मानौं यातैं वेदकूं अज्ञान का कल्पक मानवे
हमारा अभिप्राय नहीं है हम तो वेदकूं साक्षात् परमात्मा हीं मानैं हैं
वेद साक्षात् सच्चिदानन्दरूप परमात्मा का स्वरूपभूत अलौकिक अनुभ
ऐसैं मानैं है देखो श्रीकृष्ण महाराज गीता के तृतीय अध्याय में आ
करैं हैं कि

अन्नाद्भवन्ति भूतानि पर्जन्यादन्नसम्भवः
यज्ञाद्भवति पर्ज्जन्यो यज्ञऽकर्मसमुद्भवः
कर्म ब्रह्मोद्भवं विद्धि ब्रह्माक्षरसमुद्भवम् ॥

सूक्ष्मत्वात्तदविज्ञेयम् ॥

इसका अर्थ ये है कि ब्रह्म ज्यो है सो सूक्ष्म है यातैं अज्ञात है तो इस कथनतैं ये अर्थ सिद्ध होगया कि परमात्मामैं अज्ञात ऐसा व्यवहार अज्ञान के होणें तैं नहीं है ॥

ज्यो कहो कि जिन विद्यारण्य स्वामीनैं गायत्री के प्रसादतैं वेदार्थ प्रकाशका वरदान पाया वे वृत्तिव्याप्ति का फल ब्रह्ममैं आवरणभङ्गकूँ कहैं हैं देखो उनका कथन पञ्चदशी मैं ये है कि

ब्रह्मण्यज्ञाननाशाय वृत्तिव्याप्तिरपेक्षिता
फलव्याप्यत्वमेवास्य शास्त्रकृद्भिर्निवारितम् १ ॥

इसका अर्थ ये हैं कि ब्रह्म मैं अज्ञान के नाशके अर्थ वृत्ति व्याप्तिकी अपेक्षा किई है और शास्त्रकारों नैं फलव्याप्यता या ही निराकरण किया है १ तो ये सिद्ध होगया कि ब्रह्ममैं अज्ञानका किया आवरण है तो हम कहैं हैं कि आचार्यों के हृदयका समुझणाँ कठिन है देखो तुम तो ये कहो हो कि इस कथनतैं विद्यारण्य स्वामीके ब्रह्ममैं आवरण अभिमत है और हम कहैं हैं कि इस कथन तैं विद्यारण्य स्वामीके ब्रह्ममैं अज्ञानका किया आवरण अभिमत नहीं है ज्यो ब्रह्म मैं आवरण इनके अभिमत होता तो शास्त्रकारोंकी अभिमति नहीं कहते किन्तु ब्रह्ममैं अज्ञानका मानणाँ अपणे अभिमत कहते ॥ विचार तो करो ज्यो आवरण औरुन्यके अभिमत नहीं है उसकूँ ऐसे उत्तम पुरुष कैसें सम्मत करैंगे यातैं अर्थात् आवरणकूँ शास्त्रकारोंके अभिमत बताणें तैं इस कथनका अभिप्राय ये ही सिद्ध होय है कि ब्रह्ममैं आवरण मानणाँ विद्यारण्य स्वामीके अभिमत नहीं है देखो विद्यारण्य स्वामी नैं तो वृत्तियोंकूँ भी कूटस्थ दीपमैं निरावरण मानी है तहाँ का ये श्लोक है कि

ज्ञातताज्ञातते न स्तो घटवद्वृत्तिषु क्वचित्
स्वस्य स्वेनाऽगृहीतत्वात्ताभिश्चाऽज्ञाननाशनात् १ ॥

इसका अर्थ ये है कि जैसें घट मैं ज्ञातता और अज्ञातता है तैसें वृत्ति जेहैं तिनके विषैं ज्ञातता और अज्ञातता ये नहीं होय हैं काहेतैं कि आपसें आपका ग्रहण नहीं और उन करिकैं अज्ञानका अदर्शन होय है तो

ये सिद्ध हुवा कि वृत्ति जिस पदार्थके पास चली जाय तहाँ ही प्र
दीखे नहीं तो वृत्तिके आवरण होणाँ इसका तो सम्भव ही कहाँ ॥

अब नैं तो विद्यारण्य स्वामीके घटादिक मैं आवरण अभिमत
ओर नैं वृत्तियों मैं आवरण सिद्ध हुवा ओर नैं आत्मामैं आवरण सि
हुवा यातैं आवरण वी अलीक ही है ऐसैं मूलाज्ञान ओर असत्त्वापा
ओर अभानापादक आवरण इनका मानणाँ असङ्गत है ऐसैं अज्ञान अ
हुवा तो जगत् अज्ञान कल्पित सिद्ध नहीं हुया जयो जगत् अज्ञान कल्
सिद्ध नहीं हुवा तो परमात्माके स्वरूप भूत अलौकिक ज्ञानतैं रचित सि
हुवा जयो अलौलिक ज्ञानतैं रचित सिद्ध हुवा तो सच्चिदानन्द रूप परमा
त्मा इस जगत् का विवर्त्ति उपादान पूर्व सिद्ध हुवा है तो उपादानतैं वि
लक्षण कार्य होवे नहीं यातैं जगत् परमात्मरूप ही है ॥

जयो कहो कि चिद्रूप परमात्मा जगत् का उपादान है तो जग
जड कैसे प्रतीत होय है तो हम पूछैं हैं कि अज्ञानवादियोंकी अविद्या
उपादान है तो इसके कार्य जीव ईश्वर चेतन कैसे भये सो कहो जयो
कि अविद्या जयो है सो अघटित घटना घटीयसी है तो हम कहैं हैं

ओर नाश कूँ प्राप्त होय है ये वुद्धि ही सर्प रूप करिकैं प्रतीत होय है २॥ ओर न्याय वैशेषिक मत के माननेवाले ऐसें कहैं हैं कि वल्मीकादिस्थान में सर्प सत्य है उसकूँ पुरुष नेत्रों सें देखे है यो सर्प नेत्रों के दोषतैं सम्मुख प्रतीत होय है जैसें पित्तदोष तैं भस्मक रोगवाला पुरुषकी भोजनसामर्थ्य वधै है तैसें दोषवलतैं नेत्रों में दर्शनसामर्थ्य वधै है यातैं दूर देशस्थित सर्प दीखै है उसका रज्जुदेश में भान होय है ॥ ओर चिन्तामणि का रका ये मत है कि दूरदेशस्थित सर्प का भान होय तो मध्य के अन्य पदार्थोंका वी भान होणाँ चाहिये सो होवै नहीं यातैं दोष सहित नेत्र तैं रज्जुका ही सर्परूप करिकैं भान होय है ३ ॥

ओर साङ्ख्य तथा प्राभाकर इनके मत के मानवे वाले ऐसें कहैं हैं कि असत् की प्रतीति होय तो वन्ध्यापुत्र की भी प्रतीति होणीं चाहिये सो होवै नहीं यातैं तो असत्ख्याति मानणाँ असङ्गत है ॥ ओर क्षणिक विज्ञान का ही आकार सर्प होय तो क्षणतैं अधिक काल इस सर्प की प्रतीति नहीं होणीं चाहिये यातैं आत्मख्याति का मानणाँ असङ्गत है ॥ ओर अन्यथाख्याति की प्रथम रीति तो चिन्तामणिकार के मत तैं खण्डित है ओर चिन्तामणिकारका भी मत असङ्गत है काहे तैं कि ज्ञेयके अनुसार ज्ञान होय है ज्ञेय रज्जु ओर ज्ञान सर्प का ये कथन अत्यन्त विरुद्ध है ॥ यातैं जहाँ रज्जु में सर्प भ्रम होय है तहाँ ये रीति मानवे योग्य है कि प्रथम नेत्रका वृत्तिद्वारा रज्जुसें सम्बन्ध होय है पीछैं रज्जुका तो इदंरूप करिकैं ज्ञान होय है ओर सर्पकी स्मृति होय है तो ये सर्प है यहाँ ज्ञान दोय हैं रज्जु के इदं अंशका ज्ञान तो प्रत्यक्ष है ओर सर्प ज्ञान स्मृतिरूप है परन्तु भय दोष तो प्रमाता में ओर तिमर दोष प्रमाण में यातैं ऐसा विवेक होवै नहीं कि मेरेकूँ दो ज्ञान भये हैं किन्तु एकही ज्ञान का विवेक होय है ऐसें दो ज्ञानों का अविवेक ही भ्रम है ४ ॥

ओर अविद्यावादी ऐसें कहैं हैं कि इदं अंशका तो प्रत्यक्ष ज्ञान ओर सर्प की स्मृति ऐसें दो ज्ञान होवैं तो रज्जु कूँ देखि करिकैं पुरुष भागे है सो भागणाँ नहीं चाहिये काहेतैं कि सर्पके स्मरण तैं कोई वी भागे नहीं ये अनुभवसिद्ध है यासैं ॥ ओर रज्जु का विशेष रूप करिकैं ज्ञान भयाँ पीछैं ऐसा बाध होय है कि मेरेकूँ रज्जु में सर्पप्रतीति मिथ्या भई यातैं ॥ ओर ये सर्प है यहाँ ज्ञान एक ही प्रतीत होय है यातैं । ओर एक काल में

अन्तःकरण तैं स्मृतिरूप ओर प्रत्यक्षरूप दो ज्ञान होवैं नहीं यातैं ॥ इ
ति मतका मानणां बी असङ्गतही है ॥ या कारण तैं अनिर्वचनीयख
मानणों चाहिये ताकी ये व्यवस्था है कि अन्तःकरण की वृत्तिनेत्र
निकसिकैं विषयाकार होय है तातैं आवरण भङ्ग होय जैं
का प्रत्यक्ष ज्ञान होय है और जहाँ सर्प भ्रम होय है तहाँ अन्त:करण
वृत्ति निकसिकैं विषयसम्बद्ध होय है परन्तु तिमिरादि दोष प्रतिबन्ध
यातैं वृत्ति जैसा है सो रज्जुसमानाकार होवै नहीं यातैं रज्जुचेतना
अविद्या मैं क्षोभ हो करिकैं यो अविद्या ही सर्पाकार हो जाय है यो
सत् होय तो रज्जु के ज्ञानतैं याकी निवृत्ति होवै नहीं और ज्यो यो
असत् होय तो वन्ध्यापुत्र की तरैंहैं प्रतीत होवै नहीं यातैं यो सर्प
सद्विलक्षण अनिर्वचनीय है उसकी ज्यो ख्याति कहिये प्रतीति अथवा
मन सो अनिर्वचनीयख्याति कहिये है ॥ और जैसैं सर्प अविद्या का प
णाम है तैसैं उसका ज्ञान बी अविद्याका ही परिणाम है अन्तःकरण
परिणाम नहीं काहेतैं कि जैसैं रज्जुज्ञान तैं सर्पकी निवृत्ति होय है तै
सके ज्ञानकी बी निवृत्ति होय है यो ज्ञान अन्तःकरण का परिणाम हो
तो उसका बाध होवै नहीं यातैं यो ज्ञान बी अनिर्वचनीय है परन्तु ॥

अधिष्ठान मानैं तो भी चेतन हीं अधिष्ठान है काहेतैं कि रज्जु आप ही कल्पित है यातैं रज्जु मैं सर्पाधिष्ठानता बाधित है और तैसैं हीं सर्पज्ञान का अधिष्ठान साक्षी है ऐसैं भ्रमद्वयमैं विषयका और उसके ज्ञानका अधिष्ठान उपाधि भेद तैं भिन्न है और विशेषरूप करिकैं रज्जुकी अप्रतीति अविद्या मैं क्षोभ द्वारा दोनूंकी उत्पत्तिमैं कारण है और रज्जु का विशेषरूप करिकैं ज्ञान दोनूंकी निवृत्ति मैं कारण है ॥ ज्यो कहो कि अधिष्ठान के ज्ञान बिना मिथ्या पदार्थकी निवृत्ति होवै नहीं ये अविद्यावादियोंका सिद्धान्त है तो सर्पका अधिष्ठान रज्जूपहित चेतन है रज्जु नहीं यातैं रज्जु ज्ञान तैं सर्पकी निवृत्ति सम्भवै नहीं तो इस का समाधान ये है कि रज्जु इन के मतमैं अज्ञानका कार्य है यातैं रज्जुमैं तो आवरण रहै नहीं काहेतैं कि आवरण ज्यो है सो अज्ञानकी शक्ति है और अज्ञान जडाश्रित रहै नहीं इन का मत है किन्तु जब साभास अन्तःकरण की वृत्ति विषयाकार होय है तब वृत्ति तैं रज्जूपहित चेतनाश्रित ज्यो आवरण सो नष्ट हो करि अधिष्ठान चेतन तो स्वप्रकाशता करिकैं प्रकाशै है और आभास करिकैं विषयका प्रकाश होयहै तो रज्जूपहित चेतन हीं सर्पका अधिष्ठान है उस का ज्ञान हुवा ऐसैं मानैं हैं यातैं रज्जुके ज्ञानसैं सर्पकी निवृत्ति सम्भवै है जो कहो कि सर्प ज्ञानका अधिष्ठान तो साक्षीचेतन है उसका ज्ञान हुवा नहीं यातैं सर्प ज्ञान की निवृत्ति कैसैं होगी तो हम कहैं हैं कि चेतन मैं स्वरूप तैं तो भेद है नहीं किन्तु उपाधि के भेद तैं भेद है सो जो उपाधि भिन्न देश मैं स्थित होय तब तो उपहित मैं भेद होय है और उपाधि एक देश मैं स्थित होय तब उपहित मैं भेद होवै नहीं यातैं वृत्ति जब विषयाकार भई तब विषय और वृत्ति एक देशस्थित होयैं तैं विषयोपहित चेतन और वृत्त्युपहित चेतन इन का भेद नहीं या कारण तैं विषयाधिष्ठान चेतन का ज्ञान हीं वृत्त्युपहित चेतनका ज्ञान है ऐसैं सर्पज्ञानाधिष्ठान का ज्ञान होयैं तैं सर्पज्ञानकी निवृत्ति सम्भवै है ॥ अथवा जब अन्तःकरण की वृत्ति नेत्रद्वारा रज्जु तैं सम्बन्ध हो करिकैं रज्जु के विशेषाकार कूं प्राप्त होवै नहीं तब इदमाकार वृत्ति मैं स्थित ज्यो अविद्या सो हीं सर्पाकार और ज्ञानाकार होय है उस अविद्याका तमोअंश सर्पाकार होय है और उसका हीं सत्त्वांश ज्ञानाकार होय है और वृत्त्युपहित चेतन दोनूं का अधिष्ठान है और वृत्ति विषय देश मैं गई यातैं विषयोपहित चेतन और

वृत्त्युपहितचेतन ये दोनूं उपाधि एक देशस्थित होनेतैं एक है
वृत्ति जब विषय के विशेषाकारकूँ प्राप्त भई और उससैं विषयका अधि
ष्ठान जो चेतन उसका आवरण दूर हुवा और विषयका विशेषरूप क
ज्ञान हुवा तो साक्षि चेतन का ही आवरण दूर हुवा यातैं सर्प और उस
ज्ञानकी निवृत्ति अधिष्ठान ज्ञान तैं सम्भवै है ॥ ज्यो कहो कि प्र
पक्षका त्याग करिकैं ये द्वितीय पक्ष कहणेमैं तुमारा तात्पर्य क्या
तो हम कहैं हैं कि प्रथम पक्षमैं विषयोपहित चेतनाश्रित अज्ञान
परिणाम सर्प है ऐसैं माननेमैं ये दोष है कि जहाँ बहुत पुरुषों कूं
भ्रम होय तहाँ एक पुरुषकूँ रज्जु के यथार्थ ज्ञान भयें सर्व पुरुषों का
निवृत्त होणाँ चाहिये काहेतैं कि विषयाधिष्ठान चेतनाश्रित अविद्या
परिणाम ज्यो सर्प उसकी निवृत्ति एक पुरुषकूँ रज्जु का यथार्थ ज्ञान
भया तातैं होगी ॥ और द्वितीय पक्ष मैं ये दोष नहीं है काहे तैं कि जिस
वृत्तिमैं स्थित अविद्या का परिणाम सर्प और ज्ञान निवृत्त हुवा उस
भ्रम निवृत्त हुवा और जिसकी वृत्ति मैं स्थित अविद्या का परिणाम
और ज्ञान निवृत्त होवै नहीं उसका भ्रम निवृत्त होवै नहीं ऐसे
भ्रमस्थल मैं विषय और ताके ज्ञान का अधिष्ठान वृत्त्युपहित साक्षी है
और आन्तर भ्रमस्थल मैं स्वप्न पदार्थ और उनके ज्ञान का अधिष्ठान अ
न्तःकरणोपहित साक्षी ही है या प्रकार करिकैं सत् और असत् सैं विलक्षण
अनिर्वचनीय सर्पादिक तिनकी जो ख्याति कहिये प्रतीति अथवा कथन
अनिर्वचनीयख्याति कहिये है ५॥ ऐसे रज्जुसर्प कूं यथार्थ
... मानै हैं ये प्रक्रिया गद्दही मैं विचार सागर के चतुर्थ त

नैं हीं औषध देकरिकैं राजा की पीड़ा निवृत्त किई तो सिद्ध हुवा कि सम सत्ताक ही साधक बाधक होय है काहे तैं कि स्वप्नका प्रातिभासिक जीव ही तो राजा के पीड़ाका साधक हुवा और प्रातिभासिक औषध ही राजाकी पीड़ा का बाधक हुवा ऐसैं हीं मिथ्या गुरु वेद मिथ्या भव दुःख कूं निवृत्त करैहै ऐसैं सङ्का ही नैं विचारसागर के पञ्चम तरङ्ग में लिखा है ॥
अब तुमहीं विचार करो ज्यो अविद्यावादी रज्जु सर्प की प्रातिभासिकीसत्ता मानैं हैं तो रज्जु सर्प प्रातिभासिक हुवा और उसका साधक रज्जु का विशेष रूप करिकैं ज्यौं अज्ञान ताकूं मान्यौं है तो इस अज्ञान की व्यावहारिकी सत्ता है यातैं ये अज्ञान व्यावहारिक है और रज्जु के ज्ञानतैं प्रातिभासिक सर्प की निवृत्ति मानी है तो ये रज्जु का ज्ञान वी व्यावहारिक है तो सर्प प्रातिभासिक कैसैं हो सकै ज्यो सर्प प्रातिभासिक होय तो रज्जु का व्यावहारिक अज्ञान तो इस सर्प का साधक हो सकै नहीं और रज्जु का व्यावहारिक ज्ञान इस सर्प का बाधक हो सकै नहीं ॥ ऐसैं ही स्वप्न मैं समुझो कि व्यावहारिकी ज्यो निद्रा सो तो स्वप्न की साधक है और व्यावहारिक ज्यो जाग्रत् अथवा सुषुप्ति ये स्वप्न के बाधक हैं तो स्वप्न प्रातिभासिक कैसैं होसकै ॥ और देखो कि ब्रह्मकूं अविद्यावादी सर्वका साधक मानैं हैं तो ब्रह्म की परमार्थ सत्ता है और सर्व जगत् की व्यावहारसत्ता है अब ज्यो समान सत्ताक ही साधक होय तो ब्रह्म किसी का वी साधक नहीं होणां चाहिये यातैं सर्व की साधकता बाधकता का निर्वाह के अर्थ सर्व की एक ही सत्ता मानौं अब ज्यो सर्व की प्रतिभाससत्ता मानोंगे तब तो ब्रह्मकूं वी मिथ्या मानणां पड़ैगा सो तो अविद्यावादियों के वी अभिमत नहीं है और ज्यो सर्व की व्यावहार सत्ता मानों तो ब्रह्म व्यावहारिक पदार्थ सिद्ध होगा तो अविद्यावादी व्यावहारिक पदार्थोंकूं जन्य मानैं हैं तो ब्रह्मकूं भी जन्य मानणां पड़ैगा तो ये वी अविद्यावादियों के अभिमत नहीं है यातैं सर्व की परमार्थसत्ता मानों इस सत्ता के मानणें मैं ब्रह्म मैं मिथ्यात्व की वी आपत्ति नहीं है और तैसैं ही ब्रह्ममैं जन्यता की आपत्ति वी नहीं है और ऐसैं मानणां

सर्वं खल्विदं ब्रह्म ॥

इस श्रुति के अनुकूल है यातैं श्रुतिसम्मत वी है ।

ज्यों कहो कि ऐसैं माननैं मैं जगत् मैं नित्यता की आपत्ति है काहेतैं कि ब्रह्म की परमार्थ सत्ता है तो ब्रह्म नित्य है तैसैं ही जगत् की परमार्थ सत्ता है तो जगत् भी नित्य होगा सो अनुभव विरुद्ध है काहेतैं कि जगत् के उत्पत्ति नाश तो प्रत्यक्ष सिद्ध हैं ।। तो हम कहैं हैं उत्पत्ति और नाश तो माननों असङ्गत है काहेतैं कि न्यायमतविवेचन जहाँ अनुव्यवसाय का विचार है तहाँ परिशेष मैं उत्पत्ति और नाश का खण्डन होगया है उसकूँ स्मरण करिकैं सन्तोष करो ।

ज्यों कहो कि जगत् की नित्यता मैं आचार्यों की सम्मति कहो तो हम कहैं हैं कि श्रीकृष्ण पञ्चदशाध्याय मैं आज्ञा करैं हैं कि

ऊर्ध्वमूलमधश्शाखमश्वत्थं प्राहुरव्ययम् ॥

तो यहाँ जगत् कूँ अव्यय कहा है तो अव्यय नाम नित्य का है और

ऊर्ध्वमूलोऽर्वाक्शाख एषोऽश्वत्थस्सनातनः ॥

मार्य सत्य हैं ज्यो कहो कि ये परमार्थ सत्य हैं तो इनकी निवृत्ति कैसें हो जाय है तो हम पूछैं हैं कि अविद्यावादी सारे जगत् कूँ अज्ञानकल्पित मानैं हैं तो आकाशादिक तो निरवयव अोर अविनाशी कैसें प्रतीत होयहैं अोर घटादि पदार्थ चिरस्थायी कैसें प्रतीत हाेयहैं अोर चातुर्मास्य मैं अनन्त जीव क्षण विनाशी कैसें प्रतीत होय हैं ॥ ज्यो कहो कि ये अविद्या का महिमा है तो हम कहैं हैं कि ये परमात्मा के स्वरूपभूत अलौकिक ज्ञान का महिमा है कि जिसतैं जिनकूँ तुम रज्जु सर्पादिक कहो हो अोर प्रातिभासिक मानौं हो ये शीघ्र ही निवृत्त होजाय हैं ओर तुमारे मानैं व्यावहारिक सर्पका जैसें मरण के अनन्तर शरीर प्रतीत होय है तैसें रज्जु सर्पका शरीर प्रतीत होवै नहीं अोर स्वाप्नपदार्थों कूँ भी तुम प्रातिभासिक मानौं हो ओर स्वप्न के पुरुषौं का मरण के अनन्तर शरीर प्रतीत होय है अोर मरुभूमिजल कूँ तुम प्रातिभासिक मानों हो अोर भ्रम निवृत्त हो जाय है तो भी तुमकूँ उसकी प्रतीति होती रहैहै ॥

देखो इस विचित्रता कूँ ये तुमारे निज स्वरूप भूत सच्चिदानन्द रूप रमात्मा के ही अलौकिक ज्ञान का महिमा है यातैं ये तुमारा ही महि- । है तुम हीं सच्चिदानन्दरूप परमात्मा हो तुमही तुमारी रचना कूँ देखो ो तुमारा आवरण कोई नहीं कर सकै है तुम हीं सुषुप्ति मैं सर्व पदार्थों के भावौं कूँ देखो हो अोर तुम हीं स्वप्न कूँ देखो हो अोर तुम हीं जाग्रत् [illegible] देखो हो यातैं तुम तुरीय हो तुम हो जैसे के जैसे हो तुमारे सर्व पदार्थौं के प्रकाश करनैं मैं वृत्तिकी सहायता की अपेक्षा नहीं है तुम तो [illegible]ति अोर वृत्ति जिनकूँ विषय करै है तिनकूँ समरस प्रकाशित करो हो [illegible]सैं सूर्यके प्रकाश मैं सर्व चेष्टा करैं हैं तैसें तुमारे प्रकाश मैं अनन्त वृत्तियां [illegible]ा नृत्य होय है ज्यो तुमतैं उत्पन्न भई वृत्तियौं के तथा वृत्तियौं के अभा- [illegible]ौं के ही आवरण नहीं तो तुमारे आवरण कैसें होसकै तुम तो अपनें तैं [illegible]ापका प्रकाश करते भये वृत्तियोंकूँ अोर वृत्तियौं के अभावौं कूँ अोर वृ- [illegible]त्तियोंके विषयौं कूँ प्रकाश देयो हो यातैं तुमारे मैं आवरण का संभव त्रि- [illegible]ाल मैं नहीं है ॥

ज्यो कहो कि श्रीकृष्ण सप्तम अध्याय मैं आज्ञा करैं हैं कि

नाहं प्रकाशस्सर्वस्य योगमायासमावृतः ॥

इसका अर्थ ये है कि मैं योगमाया करिकैं आवृत्त हूँ यातैं मेरो प्रकाश सर्व कूँ नहीं होवै है तो इस श्रीकृष्ण के कथन तैं सच्चिदानन्दरूप परमात्मा मैं माया कृत आवरण सिद्ध होय है और माया अविद्या ये एक हैं यातैं परमात्मा मैं अविद्या कृत आवरण सिद्ध होगया तो हम कहैं हैं कि योगमाया शब्द परमात्मा के स्वरूप भूत ज्ञानका वाचक है देखो श्रीधर स्वामी योगमाया शब्दका ये व्याख्यान करैं हैं कि

योगो युक्तिर्मदीयः कोप्यचिन्त्यः प्रज्ञाविला

वहूनां जन्मनामन्ते ज्ञानवान्मां प्रपद्यते
वासुदेवः सर्वमिति स महात्मा सुदुर्लभः ॥

इसका अर्थ ये है कि बहुत जन्मों के अन्त में ज्ञानवान् हो करिकें मोकूँ प्राप्त होय है सर्व वासुदेव है ऐसें जाणवे वालो पुरुष दुर्लभ है यातें सर्व जगत की एक परमार्थ सत्ता ही मानणीं ये ही उत्तम सिद्धान्त है ऐसे निश्चय में ये अनुगुण वी है कि कदाचित्

वासुदेवः सर्वम् ॥

ये अपरोक्ष दृढ न होय तो वी मुक्ति में सन्देह नहीं है काहेतें कि अष्टमाध्याय में श्री कृष्ण ऐसें आज्ञा करैं हैं कि

यं यं वापिस्मरन् भावं त्यजत्यन्ते कलेवरम्
तंतमेवैति कौन्तेय सदा तद्भावभावितः ॥

इस का अर्थ ये है कि अन्त काल में जिसका स्मरण करता हुया शरीर कूँ छोड़ै है उसकी भावना करिकें उस कूँ हीं प्राप्त होय है और द्वादशाध्याय में भगवान् आज्ञा करैं हैं कि

ये तु सर्वाणि कर्माणि मयि सन्यस्य मत्पराः
अनन्येनैव योगेन मां ध्यायन्त उपासते ॥ १ ॥
तेषामहं समुद्धर्त्ता मृत्युसंसारसागरात्
भवामि न चिरात्पार्थ मय्यावेशितचेतसाम् ॥२॥

इन श्लोकोंका अर्थ ये है कि जे पुरुष सर्व कर्मोंका मेरे में सन्यास करिकें अर्थात् मेरे में अर्पण करिकें और मेरे में तत्पर हो करिकें अनन्य योग करिकें मेरी ध्यान करते हुये मेरी उपासना करैं हैं १ तिनकूँ मृत्यु संसार सागर तें मैं उद्धार करूँ हूँ थोड़े ही काल में काहेतें कि उन नें मेरे में चित्त लगाय राख्यो है २ यहाँ अनन्य योग शब्द को व्याख्यान शंकर स्वामी ये करैं हैं कि

अविद्यमानमन्यदालम्बनं विश्वरूपं देवमात्मानं

मुन्त्का यस्य सोऽनन्यस्तेनाऽनन्येन केवलेन योगे
समाधिना ॥

इस का अर्थ ये है कि नहीं विद्यमान है अन्य आलम्बन जि
देव आत्माकूं त्याग करिकैं जिसकै ऐसा ज्यो योग सो अनन्य योग है
नन्य योग केवल समाधि है अर्थात् परमात्मसमाधिहै ॥ अजी देखो
ये मिथ्या है ऐसी दृष्टि तैं मुक्ति प्राप्त होय है ये कहीं यी आचार्य
आज्ञा की नहीं तो यी जगत् कूं अविद्यामूलक यतावैं हैं इसमें
व्यासादिमोंका कहा तात्पर्य है ये तुम हीं विचार करिकैं कहो

ज्यो कहो कि ज्ञान के साधनों मैं वैराग्य यी गमाया है ओर वैरा
कारण है दोषदृष्टि सो जगत् मैं मिथ्यात्व के प्रतिपादनके विना
सकै नहीं यातैं शिष्यां के ऊपर अनुग्रह करणेंके अर्थ दयालु जे आ
तिन नैं जगत् परमात्मरूप है तो यी अविद्याकी कल्पना करिकैं
वस अलीक कल्पित अविद्या करिकैं रचित यताया है काहेतें कि पुरुष
स कूं मिथ्या कल्पित मानि लेवे है उसकी इच्छा करै नहीं जैसे मरुए
के जलकूं मिथ्या मानवें वालो पुरुष उस जलकी इच्छा करै नहीं यातैं शिष्
कूं ये लाभ होय है कि वैराग्य के यलतैं भोग्य दृष्टि निवृत्त हो करि
शिष्य की बुद्धि अन्तर्मुख हो जाय है या बुद्धि तैं ज्यो आपनैं पूर्व प्रति
पदवपानीय मूल उपादान शुद्ध चिद्रूप आत्माका वर्णन किया है उसका
साक्षात्कार करिकैं जीवन्मुक्ति का आनन्द प्राप्त होय है ॥ जो वर्णो

ज्यो कहो कि जिस समय में उन आचार्यों कूं अज्ञान रहा उस स-
य में वो अज्ञान अलीक कैसें होगा तो हम कहेंहैं कि उनके गुरून नैं
लीक अज्ञान कल्पित किया है ऐसें मानों ऐसें परम्परा गुरु जे हैं तिनमें
ल गुरु परमात्मा है और वेद उसका उपदेश है तो वेद में अविद्याका
र्णन है अब अविद्याकूं अलीक नहीं मानें तो वेद अज्ञानीका किया हुया
पदेश सिद्ध होगा ज्यो ये उपदेश अज्ञानीका किया सिद्ध हुआ तो प्रलाप
ाक्य होगा ज्यो प्रलाप वाक्य होगा तो इससें आत्मविद्याके लाभका
ासम्भव होवे तें ब्रह्मविद्याकी सम्प्रदायका उच्छेद होगा यातें अविद्या
ालीक ही कल्पित है ॥

ज्यो कहो कि अलीक अविद्या प्रथम तो कल्पित करणा और पीछें
सकूं निवृत्तकरणा इस में आचार्योंका अभिप्राय कहा है देखो ये शि-
पुरुषों का वाक्य है कि

प्रक्षालनाद्धि पङ्कस्य दूरादस्पर्शनं वरम् ॥

इस का अर्थ ये है कि कर्दमकूं स्पर्श करिकें प्रक्षालन करे इसकी
ा कर्दमका स्पर्श ही नहीं करै ये उत्तम है तो हम कहें हैं कि जैसें भार
धारण करकें निवृत्त करणे तें पुरुषके अपर्णा आनन्द अभिव्यक्त होय है
ें सदा भार रहित पुरुष के आनन्द अभिव्यक्त होवै नहीं ये सर्व के अ-
ाय सिद्ध है यातें दयालु आचार्यों नें जगत् कूं अज्ञानकल्पित बता करि-
मिथ्या कहा है ॥ और उनकी दृष्टि तो ब्रह्ममय ही है देखो आप उन
ये वाक्य है कि

देहाभिमाने गलिते विज्ञाते परमात्मनि यत्र
यत्र मनो याति तत्र तत्र समाधयः ॥ १ ॥

इसका अर्थ ये है कि देहाभिमान निवृत्त हो करिकें जब परमात्मज्ञान
ावै तब जहां जहां मन जाय है तहां तहां समाधि होय है अर्थात्
ात्मभिन्न दृष्टि उनकी नहीं होयहै।

तो हम कहेंहैं कि जगत् में मिथ्यात्व की भावना करायें तें जैसें
ाग्य होय है तैसें परमात्म दृष्टि करायें तें भी वैराग्य होय है यातें हरि
न उपासकों की सर्वमें परमात्मदृष्टि है वे अत्यन्त विरक्त होय हैं क है-

तैं कि विरक्ति मैं भोग्याभाव बुद्धि कारण है सो जैसैं मिथ्यात्व बुद्धि तैं होय है तैसैं सर्वात्मभाव तैं वी होय है देखो ऐसे उपासकों के अर्थ भगवानैं नवम अध्याय मैं प्रतिज्ञा किई है कि

अनन्याश्चिन्तयन्तो मां ये जनाः पर्युपासते
तेषां नित्याभियुक्तानां योगक्षेमं वहाम्यहम् ॥१॥

इसका अर्थ ये है कि सर्व मैं मेरे भाव करिकै उपासना करै उनका योग क्षेम मैं करूँ हूँ १ अलब्धका लाभ योग है और लब्धका रक्षण है सो क्षेम है और ये भगवान्नैं कहीं आज्ञा नहीं किई है सर्व मैं मिथ्यात्व दृष्टि करवेवालेको मैं योगक्षेम करूँ हूँ यातैं वैराग्य अर्थ वी सर्वात्मदृष्टि ही कर्त्तव्य है ।

अब हम ये पूछैं हैं कि तुमनें ज्यो रज्जुसर्पकूँ भ्रमकल्पित और उसके दृष्टान्ततैं जगत् कूँ आत्मा मैं कल्पित बताया तहां दृष्टान्त दार्ष्टान्तिका साम्य कहा नहीं सो कहो परन्तु प्रथम ये कहो कि जब दृष्टि विषय देश मैं गई और तिमिरादिदोषतैं रज्जुसमानाकार भई नहीं अर्थात् रज्जुके सामान्य अंशके आकार कूँ तो प्राप्त भई और रज्जुके विशेष अंश के समानाकार भई नहीं तब रज्जु चेतनाश्रित अविद्यामैं तथा साक्षी चेतनाश्रित अविद्या मैं क्षोभ होकरिकै अथवा इदमाकार वृत्ति मैं स्थित अविद्या मैं क्षोभ हो करिकै उस उस अविद्याका सर्पाकार तथा ज्ञानाकार परिणामकूँ एककाल मैं प्राप्त होय है और रज्जुका सामान्यरूप करिकै अज्ञान अविद्या मैं क्षोभ द्वारा दोनूँकी उत्पत्ति मैं निमित्त और रज्जुका विशेषरूप करिकै ज्ञान दोनूँकी निवृत्ति मैं निमित्त है ये

तहाँ भ्रमस्थल मैं अन्यथाख्याति माननीं और तहाँ अनिर्वचनीयख्याति नहीं माननीं चाहिये ॥ जो कहो कि अनिर्वचनीयख्याति नहीं मानोंगे और इस स्थल मैं अन्यथाख्याति मानोंगे तो तुमारे सिद्धान्त मैं हानि होगी काहेतें कि तुमारे मत मैं अन्यथाख्याति नहीं मानी है इसकूं तो न्यायके मत वाले मानैं हैं तो हम कहैं हैं कि ऐसे स्थल मैं हमारे मतमैं अन्यथाख्यातिका ही अङ्गीकार है परन्तु पूर्व जे दो प्रकारकी अन्यथाख्याति कही हैं एक तो अन्यदेशस्थित पदार्थकी अन्य देश मैं प्रतीति ये अन्यथाख्याति है और दूसरी अन्यथाख्याति ये है कि अन्यकी अन्यरूपतें प्रतीति इनमैं प्रथम अन्यथाख्यातिकूं तो हम नहीं मानैं हैं और दूसरी अन्यथाख्यातिकूं हम मानैं हैं काहेतें कि सन्मुखमैं पदार्थ तो शुक्ति है और रजतका ज्ञान होय है तहाँ तो हम दोनूंहीं अन्यथाख्याति मानैं नहीं किन्तु अनिर्वचनीयख्याति ही मानैं है इसमैं कारण ये है कि नहीं होय उसकी भी प्रतीति होय तो वन्ध्यापुत्रकी बी प्रतीति होणीं चाहियेपरन्तु जहाँ सन्मुख देश मैं दोय पदार्थ होवैं तिनमैं एक पदार्थ मैं अन्यपदार्थका धर्म प्रतीत होय तहाँ अन्यथाख्यातिका अङ्गीकार है जैसे स्फटि मैं जपापुष्पके सन्निधान सें रक्तताकी प्रतीति होय है तहाँ स्फटिक मैं अनिर्वचनीय रक्तता उत्पन्न होवै नहीं किन्तु जपापुष्पकी ही रक्तता स्फटिक मैं प्रतीत होय है तो अन्यका अन्यरूप करिकैं भान है यातैं अन्यथाख्याति है परन्तु स्फटिक मैं जहाँ जपापुष्पका सम्बन्ध होय तहाँ पुष्पकी रक्तताका भान स्फटिक मैं होय है इसमैं कारण ये है कि जहाँ अन्तःकरणकी वृत्ति रक्तपुष्पाकार होय है तहाँ हीं वृत्तिका विषय रक्तपुष्पसम्बन्धी स्फटिक है यातैं पुष्पकी रक्तताकी स्फटिक मैं प्रतीति होय है ॥ ऐसैं ही जहाँ रज्जुमैं सर्प भ्रम होय है तहाँ तो अन्यथाख्याति सम्भवै नहीं काहेतें कि भिन्न देशस्थित होयें तैं रज्जुका सर्प सें सम्बन्ध नहीं है और ज्ञेयके अनुसार ही ज्ञान होय है ये नियम है तो ज्ञेय तो रज्जु और ज्ञान सर्पका ये कथन विरुद्ध है यातैं रज्जु देश मैं अनिर्वचनीय सर्प उत्पन्न होय है ऐसें मानणां उचित है ॥ और रज्जु सर्प मैं इदन्ता प्रतीत होय है सो अनिर्वचनीय नहीं है काहेतें कि रज्जु और अनिर्वचनीय सर्प ये दोनूं एक देश मैं स्थितहैं यातैं रज्जुकी ही इदन्ता सर्प मैं प्रतीत होय है ऐसें मानणें मैं कारण ये है कि परमात्मसत्ता सर्व पदार्थों मैं प्रतीत होय है तो स्वप्नपदार्थों मैं बी प्रतीत होय है

अथ उस सत्ताकूँ स्वप्नके पदार्थोंकी तरेँहँ अनिर्वचनीय तो मानतेंहैं न काहेतैं कि सत्ता परमात्मरूपा है इसकूँ स्वप्नपदार्थोंकी तरेँहँ अनिर्वचनीय मानरोँ मैं सत्य ज्यो है सो मिथ्या है ऐसैं मानणाँ होगा सो विरुद्ध है ऐसैं मानैं हैं कि परमात्मरूप ज्यो स्वप्नाधिष्ठान ताकी सत्ता ही स्वप्न पदार्थोंमैं प्रतीत होय है ऐसैं विचारसागर के षष्ट तरङ्ग मैं लेख है रज्जु की इदन्ता ही अनिर्वचनीय सर्प मैं प्रतीत होय है ये अविद्यावादियोंका मत है ॥

ता हम पूछैं हैं कि रज्जुकी ज्यो इदन्ता सो अन्तःकरण की ज्यो वृत्ति ताकी विषय है अथवा सर्पविषयक ज्यो अविद्यावृत्ति ताकी विषय है तो तुम ये ही कहोगे कि अन्तःकरण की ज्यो वृत्ति ताकी विषय है काहेतैं कि रज्जुकी इदन्ता व्यावहारिक है व्यावहारिक ओर प्रातिभासिक जे पदार्थ तिनका येही भेद है कि व्यावहारिक पदार्थ ता अन्तःकरणकी वृत्तिके विषय होय हैं ओर प्रातिभासिक पदार्थ अविद्याकी वृत्तिके विषय होयहैं ओर व्यावहारिक पदार्थ ता प्रमातृवेद्य हैं अर्थात् इनका ज्ञाता ता चिदाभास है ओर प्रातिभासिक पदार्थ साक्षिभास्य हैं अर्थात् इनका ज्ञाता साक्षी है तो हम पूछैं हैं कि रज्जुकूँ देखि करि अर्थात् अल्पान्धकारावृत्त रज्जुदेश मैं अन्तःकरणकी वृत्ति गई ओर रज्जु के सामान्यांशाकार ता भई ओर रज्जुके विशेषाकारकूँ प्राप्त भई तब ज्यो

अयंसर्पः ॥

अर्थात् ये सर्प है ऐसा भ्रमात्मक ज्ञान होय है ऐसैं तुम मानो तहाँ ज्ञान दोय मानों हो अथवा एक ज्ञान मानों हो ज्यो कहो कि दो ज्ञान मानैं हैं तिनमैं रज्जुके सामान्य अंशकूँ विषय करनेवाला ता अन्तःकरणकी वृत्तिरूप ज्ञान है ओर सर्पकूँ विषय करनेवाला अविद्याकी वृत्तिरूप ज्ञान है ता हम कहैंहैं कि ऐसैं मानणाँ ता असङ्गत है काहेतैं तुम हीं पूर्व ऐसैं कहि आये हो कि ये सर्प है यहाँ ज्ञान एक ही होय है यातैं अख्यातिमतका मानणाँ ही असङ्गत हो है ज्यो कहो इदमाकार ओर सर्पाकारक ये दोय ज्ञान

अयंसर्पः ॥

यहाँ नहीं होय हैं ऐसें हमारे दोय ज्ञानोंका निषेध अभिमत है और प्रत्यक्षात्मक जे दोय ज्ञान ते तो हमारे अभिमत हैं तो हम पूछें हैं कि अन्तःकरणकी ज्यो वृत्तिसो इदन्ताकूं विषय करेगी तो रज्जु में विषय करेगी सर्प में विषय नहीं करसकैगी काहेतें कि अनिर्वचनीय सर्प अन्तःकरण की ज्यो वृत्ति ताका विषय नहीं है किन्तु अविद्याकी ज्यो वृत्ति ताका विषय है ऐसें तुम मानों हौ अब धर्मीजो प्रातिभासिक सर्प सो अन्तःकरणकी वृत्तिका विषय ही नहीं तो रज्जुकी इदन्ता सर्प में कैसें प्रतीत होय देखो तुमारे दृष्टान्तकूं स्मरण करो पुष्पकी ज्यो रक्तता तदाकार वृत्तिनें हीं पुष्पसम्बन्धी स्फटिक कूं विषय कियाहै यातें पुष्पकी रक्तता स्फटिक में प्रतीत होय है और यहाँ तो इदमाकार वृत्ति नें इदंशब्दका अर्थ ज्यो रज्जु उसके सम्बन्धी सर्पकूं विषय किया नहीं यातें रज्जुकी इदन्ता सर्प में कैसें प्रतीत होवै सो कहो १ और

अयंसर्पः ॥

यहाँ ज्ञान एक ही प्रतीत होय है दोय ज्ञान प्रतीत होयैं नहीं और तुम यहाँ दोय ज्ञान मानों हो तो अनुभव विरोध होय है इस विरोध का परिहार कहा है सो कहो २ और जब रज्जुज्ञान तें सर्पकी निवृत्ति होय है तहाँ रज्जुका ज्ञाता तुम प्रमाताकूं मानों हो तो प्रमाताकूं ज्ञान भयें साक्षीके ज्ञात भयो सर्प ताकी निवृत्ति कैसें होय सो कहो ज्यो अन्यकूं रज्जुका ज्ञान भयें अन्यके भ्रमकी निवृत्ति होय तो हमारेकूं ज्ञान भयें तुमारेकूं बी भ्रमकी निवृत्ति होणीं चाहिये ३ और ज्यो सर्प प्रमाताके ज्ञानका विषय नहीं है और साक्षीका विषय है तो प्रमाताकूं भय नहीं होणां चाहिये किन्तु साक्षीकूं भय होणां चाहिये सो साक्षी कूं भय होवै नहीं ये तुम बी मानों हो ४ और जैसें व्यावहारिक सर्पका ज्ञान प्रमाताकूं होवै है उस समय में ज्ञाता ज्ञान ज्ञेय रूपा ज्यो त्रिपुटी ताकूं साक्षी प्रकाश करता हुया स्वप्रकाशता करिकें प्रकाश करे है ऐसें हीं प्रातिभासिक सर्पका जब ज्ञान होवै है तब बी साक्षी त्रिपुटीका ही प्रकाशक प्रतीत होय है ये तुमहीं रज्जुसर्प भ्रम होय तब अनुभव करें देखिलेयो अब ज्यो यहाँ दोय ज्ञान मानोंगे और उनके विषय दोय मानों गे तो च्यार तो ये भये और एक प्रमाता है ऐसें पांचकूं साक्षी प्रकाश करै है ऐसें अवश्य मानणां पडैगा तो साक्षी पञ्चपुटी का प्रकाशक मानणां पडैगा सो हमनें तो आज पर्यन्त ऐसा लेख कोई ग्रन्थ में देखा नहीं ज्यो

सद्गुरु नें कोई ग्रन्थ में देखा होय ग्रोर लिखा होय तो तु
ही कहो ५

जयो कहो कि प्रमाताकूं जब अन्धकारावृत रज्जु में
इदन्ताका ज्ञान हुवा उस समय में इदनाकार वृत्युपहित साक्षी की
विषयता इदन्ता में है तो जैसें रज्जुकी इदन्ता प्रमाताकी विष
भई तैसें साक्षीकी वी विषय भई ग्रब जब ग्रनिर्वचनीय सर्प ग्रोर
कूं विषय करणे वाला ज्ञान ये समकाल में उत्पन्न भये उसकाल में
साक्षी सर्प ग्रोर ज्ञान दोनोंका प्रकाश करै है यातें रज्जुकी इ
सर्प में प्रतीत होय है जैसें प्रमाताकी विषय पुष्पकी रक्तता स्फ
में प्रतीत होय है ऐसें इदन्ता ग्रोर सर्प एकचिद्विषय होणे तें अन्यथा
ति है इस प्रकार तें अन्यथाख्याति मानणे में स्फटिक में वी रक्तताकी
न्यथाख्याति बणे जायगी काहेतें कि एक प्रमावृत्प जयो चित् तिस
विषयता रक्तता ग्रोर स्फटिक दोनूं में है ऐसें तो प्रथम प्रश्नका समाध
हुवा १ ग्रोर द्वितीय प्रश्नका समाधान ये है कि ज्ञान में स्वरूपतें तो
है नहीं किन्तु विषय भेदतें भेद है तो यहां विषय हैं दोय एक तो

हैं तो अविद्या इनकी उपादान भई जयो अविद्या इनकी उपादान भई तो ये अविद्यारूप भये जयो ये अविद्यारूप भये तो अन्तःकरणकी वृत्ति ज्यो है तिसका उपादान अन्तःकरण है तो अविद्या ही वृत्तिकी उपादान भई तो अविद्याकी वृत्तिका विषय सर्प है तो अन्तःकरणकी वृत्तिका ही विषय सर्प हुवा यातैं प्रमाताकूं भय होय है ४ ओर पञ्चम प्रश्नका उत्तर ये है कि अविद्याकी सर्पकूं विषय करणे वाली ज्यो वृत्ति सो तो सूक्ष्म है यातैं प्रतीत होवै नहीं ओर रज्जुकी इदन्ता पूर्वोक्त प्रकार करिकैं सर्पका धर्म प्रतीत होय है यातैं इस स्थलमैं साक्षी पञ्चपुटीप्रकाशक है तोबी त्रिपुटीप्रकाशकतातैं हीं प्रकाशै है ५

ये उत्तर मैनैं मेरे अनुभवतैं किये हैं इस विषयमैं मैंनैं विचारसागर मैं तथा वृत्तिप्रभाकरमैं कुछ बी लेख देखा नहीं है ॥ तो हम कहैं हैं कि तुमारे सर्व उत्तर अशुद्ध हैं देखो तुमनैं इदन्ता ओर अनिर्वचनीय सर्प इनकूं एकचिद्विषय मानि करिकैं प्रथम प्रश्नका उत्तर कहा है तहाँ तो हम ये पूछैं हैं कि एक चिद्रूप ज्यो साक्षी सो ज्यो विषयका प्रकाश करै है सो वृत्तिकी सहायतासैं प्रकाश करै है अथवा वृत्तिकी सहायता विना प्रकाश करै है ज्यो कहो कि वृत्तिकी सहायतासैं प्रकाश करै है तो हम पूछैं हैं कि साक्षी जिस वृत्ति की सहायतासैं जिस विषयका प्रकाशक होय है उस ही वृत्तिकी सहायतासैं उस विषयतैं अन्य विषयका बी प्रकाशक होय है अथवा नहीं ज्यो कहो कि अन्य विषयका बी प्रकाशक होय है तो हम कहैं हैं कि जैसें साक्षी अविद्याकी वृत्तितैं सर्पका प्रकाश करता हुवा इदन्ताका प्रकाशक है ऐसें मानि करिकैं तुम अन्यथाख्याति बतावोगे तैसें जीव साक्षी मैं सर्वज्ञताकी आपत्ति बी मानणीं पडैगी काहेतैं कि जैसैं सर्पतैं भिन्न इदन्ता है तैसें अन्य सारे पदार्थ सर्पतैं भिन्न हैं तो उनका प्रकाशक बी जीव साक्षीकूं मानणां हीं पडेगा ऐसें जीव साक्षी मैं सर्वज्ञताकी आपत्ति होगी ॥ जयो कहो कि ऐसें मानणें मैं आपत्ति है तो ऐसैं मानैंगे कि साक्षी जिस वृत्ति सैं जिस विषयका प्रकाशक होय है उस वृत्तिसैं अन्य विषयका प्रकाशक होवै नहीं यातैं जीव साक्षी मैं सर्वज्ञताकी आपत्ति नहीं है तो हम कहैं हैं कि इदन्ता ज्यो है सो अविद्याकी वृत्ति करिकैं सर्पका प्रकाशक ज्यो साक्षी ताकी विषय नहीं होगी तो सर्पमैं इदन्ताकी प्रतीति असिद्ध होगी तो अन्यथाख्यातिका मानणां अयुक्त

सैं रज्जुमैं सर्पका सादृश्य है यातैं अन्यथाख्याति ही मानों अनिर्वच-
नीय सर्पकी उत्पत्ति माननों मैं गौरव दोष है इस कारणतैं अनिर्वचनीय-
ख्यातिका उच्छेद ही होगा सो तुमारै अभिमत नहीं है ऐसैं तो प्रथम प्रश्न-
का समाधान असङ्गत है १ ओर द्वितीय प्रश्नका उत्तर तुमनैं ये कहा है
के आरोपवृत्तितैं दोय ज्ञान कहे हैं ओर वस्तुगत्या साक्षिरूप ज्ञान एक
है यातैं ज्ञान एक ही प्रतीत होय है तो हम कहैं हैं कि जैसें ये रज्जु है
इस ज्ञानकूं तुम अन्तःकरण की ज्यो वृत्ति तद्रूप ज्ञान मानों हो ओर
इसकूं साक्षिभास्य मानों हो काहेतैं कि ये वृत्तिरूप ज्ञान घटकी तरैंह स्पष्ट
प्रतीत है तैसें ही ये सर्प है ये ज्ञान वी अन्तःकरण की ज्यो वृत्ति ताकी
तरैंह साक्षीका विषय हो करिकैं प्रतीत होय है यातैं इसकूं साक्षिरूप
माननों अनुभव विरुद्ध ही है ॥ ओर ज्यो प्रौढिवादतैं इसकूं हीं साक्षि
रूप ज्ञान मानोंगे तो वृत्तिरूप ज्यो ज्ञान ताका उच्छेद ही होगा काहेतैं
के विषय भेदतैं हीं ज्ञानमैं भेद सिद्ध होजायगा तो वृत्तिज्ञान माननों
व्यर्थ ही है यातैं द्वितीय प्रश्नका समाधान यी असङ्गत ही है २ ओर तृ-
तीय प्रश्नका समाधान तुमनैं ये कहा है कि जैसें रज्जु जयो है सो विशेष
रूप करिकैं प्रमाताका विषय है तैसें साक्षीका यी विषय है. यातैं अन्य
के ज्ञानतैं अन्यके भ्रमकी निवृत्तिकी आपत्ति नहीं है तो हम पूछैं हैं
कि उपाधि भेदतैं तुम उपहितमैं भेद मानों हो अथवा नहीं जयो कहो
कि उपाधिभेदतैं उपहित मैं भेद मानैं हैं काहेतैं कि विचारसागर के द्वि-
तीय तरङ्ग मैं लिखा है कि अन्तःकरणरूप उपाधियोंके भेदसें जीय
साक्षी नाना हैं यातैं अन्य के सुखदुःखोंका अन्यकूं भान होवै नहीं ओर
साक्षी ज्यो सुखदुःखोंकूं प्रकाशै है सो यी वृत्तिकी सहायतासें हीं
प्रकाशै है यातैं जब अन्तःकरण मैं सुख दुःख पैदा होय हैं उस काल मैं
अन्तःकरण की सुखाकार दुःखाकारवृत्ति होय हैं उन वृत्तियोंसें साक्षी सुख
दुःखोंका प्रकाश करै है ॥ तो हम कहैंहैं कि उपाधिभेदतैं उपहितमैं भेद है
तो अन्यके ज्ञानतैं अन्यके भ्रमकी निवृत्तिकी आपत्ति दूर होवै ही नहीं
काहेतैंकि अन्तःकरण वृत्युपहित साक्षीकूं तो विशेषरूप करिकैं रज्जुका ज्ञान
होगा ओर अविद्यावृत्युपहित साक्षीका भ्रम निवृत्त होगा उपाधि भेद तैं
साक्षी मैं भेद है ये तुमारे कथन तैं सिद्ध है यातैं तृतीय प्रश्नका उत्तर भी
असङ्गत ही है ३ ओर चतुर्थ प्रश्न के समाधान मैं तुमनैं ऐसें कहा है कि

उपादान कारण एक अविद्या है यातैं अन्तःकरणकी वृत्ति और अविद्या वृत्ति एक ही है तो सर्प अविद्याकी वृत्तिका विषय है तो अन्तःकरण वृत्तिका ही विषय है यातैं प्रमाताकूं भय होय है तो हम कहैं हैं कि मारे कहे प्रकार करिकैं तो सर्व जीवोंके अन्तःकरणोंकी वृत्ति सर्पविषयका सैं अभिन्न हैं यातैं सर्व जीवों कूं भय होणां चाहिये सो होवै नहीं यत तु तैं चतुर्थ प्रश्नका उत्तर भी असङ्गत ही है ४ और पञ्चम प्रश्नका उ तुमनैं ये कहा है कि सर्पकूं विषय करवैं वाली अविद्याकी वृत्ति सो सूक्ष्म है यातैं प्रतीत होवै नहीं और पूर्वोक्त प्रकार करिकैं रज्जुकी उपयो है सो सर्पका धर्म प्रतीति होय है यातैं साक्षी पञ्चपुटीका प्रका है तो भी त्रिपुटी प्रकाशक ही प्रतीत होय है तो हम पूछैं हैं अविद्या वृत्ति मैंजरो सूक्ष्मता है सो किंमयुक्त है ज्यो कहो कि अविद्या अति सूक्ष्म है सो इस वृत्तिकी उपादान कारण है यातैं ये वृत्ति अतिसूक्ष्म है तो कहैंहैं कि ये कथन तो तुमारा तुमारे मत तैं ही असङ्गत है काहे तैं कि मारे मत मैं सर्व जगत् अज्ञान कल्पित है तो सर्व जगत्की प्रतीति न होणीं चाहिये ॥ ज्यो कहो कि साक्षात् अविद्याका कार्य अतिसूक्ष्म होय जैसैं साक्षात् अविद्याका कार्य है यातैं आकाश ज्यो है सो अति सूक्ष्म तैसैं ही सर्पविषयक वृत्ति भी साक्षात् अविद्याकी कार्य है यातैं अति सूक्ष्म है तो हम कहैं हैं कि रज्जु सर्प भी साक्षात् है सो भी तुमारे मत मैं साक्षात् अविद्याका कार्य है यातैं इसका भी प्रत्यक्ष नहीं होणां चाहिये ॥ ज्यो कि कहो कि तमोगुणका कार्य रज्जु सर्पही प्रतीत होय है तो वृत्ति ज्यो सो तो सत्व गुणकी कार्य है इसकी अप्रतीति तो ठीक ही है और रज्जुकी ज्यो वक्रता है उसकी सर्प मैं प्रतीति पूर्वोक्त दोष करिकैं दुः यातैं पञ्चम प्रश्नका समाधान भी असङ्गत ही है ५

ज्यो कहो कि दोष ज्ञान मानवैं मैं पूर्वोक्त दोष होय हैं तो

दन्ता भिन्न भिन्न हैं अब जयो दोनूँ इदन्ता भिन्न भई तो इदन्ताविशिष्ट सर्पकूँ विषय करणें वाली जयो वृत्तिसो अविद्याकी वृत्ति नहीं होसकै किन्तु अन्तःकरणकी ही वृत्ति होगी काहेतें किसर्पदर्शन तें प्रमाताकूँ हीं भय होय है ये अनुभव सिद्ध है अब जबो सर्प विषयक वृत्ति अन्तःकरण की वृत्तिरूप भई तो रज्जु जैसें प्रातिभासिक नहीं है तैसें सर्पवी प्रातिभासिक नहीं होगा। जयो सर्प प्रातिभासिक नहीं होगा तो ये अज्ञान कल्पित नहीं होगा तो प्रमाता के दुःखभोग के प्रारब्ध तें उत्पन्न हुवा मानों जयो ये प्रारब्धतैं बन्य सिद्ध हुवा तो जैसें सर्व जगत् परमात्मरचित है तैसें ये सर्प वी परमात्मरचित ही है जयो ये परमात्मरचित हुवा तो इसकूँ अज्ञान कल्पित मानणों असङ्गत ही है काहे तें कि शुद्ध सच्चिदानन्दरूप परमात्मा में अज्ञानका सम्भव ही नहीं है ये अर्थ पूर्व सिद्ध होगया है ॥ जयो कहो कि ऐसें रज्जुकी इदन्ताका भान सर्प में नहीं मानोंगे ओर सर्प में इदन्ता भिन्न ही मानोगे तो वस सर्प में तथा स्थाप्रपदार्थों में जयो सत्ता प्रतीत होय है उसकूँ वी भिन्न ही मानेों सो आपके अभिमत नहीं है ओर हमारे वी अभिमत नहीं है काहेतें कि सत्ता ब्रह्मरूपा है सो हम कहेंहैं कि सर्प जयोहै सो तो रज्जु रूप नहीं या तें सर्प में जयो इदन्ता है सो रज्जुकी इदन्ता सें भिन्न है ओर सर्व जगत् जयो है सो तो ब्रह्मस्वरूप श्रुति सिद्ध है यातें सत्तामें भेद नहीं है जैसें घट में पृथिवीत्वकी प्रतीति होयहै तो यहां अन्यथाख्याति नहीं है तैसें जहां सत्ता प्रतीत होय है तहां अन्यथाख्याति नहीं है विचार तो करो घट में पृथिवीत्व प्रतीत होय है तो घट पृथ्वी ही है तैसें सर्व जगत् में सत्ता प्रतीत होय है तो सर्व जगत् सद्रूप ही है।

ज्यो कहो कि जैसें घट पृथ्वीही है यातें पृथ्वीका धर्म पृथ्वीत्व घट में प्रतीत होय है तैसें सर्प ज्यो है सो वस्तुगत्या रज्जु ही है यातें रज्जुका इदन्ता धर्म सर्प में प्रतीत होय है ऐसें मानणें में यद्यपि हमारी मानी अन्यथाख्यातिका उच्छेद होयहै तथापि आपनें ज्यो सर्प में रज्जुकी इदन्ता तें भिन्न इदन्ता मानी है उसका वी उच्छेद ही होगा ॥ ज्यो कहो कि सर्प ज्यो है सो वस्तुगत्या रज्जुरूप है तो रज्जु तें तो भय होवै नहीं ओर इस सर्पतें भय कैसें होय है तो हम पूछे हैं कि रज्जु ज्यो है सो वस्तुगत्या तृणोंतें भिन्न नहीं है तो वी तृणोंतें गजका बन्धन होवै नहीं ओर रज्जु तें

गजका बन्धन कैसें होयहै सो कहो ज्यो कहो कि तृणोंका विलक्षण संयोग
ज्यो है सो तृणोंकी रज्जु अवस्था और रज्जु में गज बन्धन योग्यताका
कारण है तो हम कहें हैं कि रज्जुका विशेषरूप करिकें अज्ञान अथवा सा-
मान्यरूप करिकें ज्ञानहीं रज्जुकी सर्प रूप करिके प्रतीति और सर्प में भय
जनकताका कारण है यहाँ आपही विचार करिकें देखो रज्जु सर्प तें भय तो
होय है और दंशन होय करिके विषकी प्रवृत्ति नहीं होय है ॥ अब जो
यहाँ व्यावहारिक सर्प की तरेंहूँ परमात्मरचित सर्प मानोंगे तो जैसें व्याव-
हारिक परमात्मरचित सर्प दंशन करिके पुरुषके शरीर में विषकी प्रवृत्ति
करे है तैसें इस सर्प सें भी विषकी प्रवृत्ति माननीं पड़ैगी सो अनुभव वि-
रुद्ध है॥ और हम तो इस सर्पकूँ रज्जुका ही अवस्थाविशेष मानेंगे यातें
रज्जु में जैसें दंशन करिकें विष प्रवृत्तिकी योग्यता नहीं है तैसें इस सर्प में
भी विष प्रवृत्तिकी योग्यता नहीं है और तृणोंके विलक्षण संयोग के नाश
तें जैसें तृणोंकी जो रज्जु अवस्था ताकी निवृत्ति होय है तैसें रज्जु का
विशेषरूप करिकें जयो ज्ञान ताकरिकें रज्जुकी जयो सर्पावस्था ताकी
निवृत्ति होय है ऐसें मानेंगे ॥ और आपकूँ भी ये व्यवस्था माननीं ही
पड़ैगी काहेतें कि ये व्यवस्था अनुभव विरुद्ध नहीं है सो आपका रज्जु
में परमात्मरचित सर्प मानना असङ्गत हुवा ॥

ज्यो कहो कि ऐसें मानने में तुमारी अनिर्वचनीयख्यातिका उच्छेद
होगा काहेतें कि यहाँ अनिर्वचनीय सर्प उत्पन्न नहीं हुवा किन्तु व्याव-
हारिक रज्जुका ही अवस्था विशेष सर्प सिद्ध हुवा सो हम कहें हैं कि
हमारी अनिर्वचनीयख्यातिका उच्छेद हुवा तैसें आपका परमात्मरचित सर्प
माननो भी तो असङ्गतही हुवा काहेतें कि ये सर्प तो रज्जुका ही अवस्था

क पूर्व सर्व की एक परमार्थ सत्ता सिद्ध भई है यातैं परमात्मख्याति मानौं ही उत्तम सिद्धान्त है ॥ ओर उत्पत्ति तथा नाश ये सिद्ध भये नहीं यातैं परमात्माका ही आविर्भाव ओर तिरोभाव मानौं जब परमात्मा कोई पदार्थरूप करिकैं आविर्भूत होय तब तो उस पदार्थ मैं उत्पन्न व्यवहार करो ओर जब उस पदार्थका तिरोभाव होय तब उस पदार्थ मैं नाश व्यवहार करो ॥

अब रज्जु सर्प रूप जयो दृष्टान्त सो तो अज्ञान कल्पित सिद्ध हुवा नहीं तो इसके दृष्टान्त तैं आत्मामैं जगत् अज्ञान कल्पित कैसें सिद्ध होगा परन्तु तथापि अविद्यावादी दृष्टान्त दार्ष्टान्तका साम्य कैसें बतावैं हैं सो कहो ॥ जयो कहो कि दार्ष्टान्त मैं अविद्यावादी ऐसें कहैं हैं कि आत्मा जयो है सो सत् चित् आनन्द असङ्ग कूटस्थ नित्यमुक्त है तो जैसें रज्जुके दोय अंश हैं इदंरूप तो रज्जुका सामान्य अंश है ओर रज्जु जयो है सो विशेष अंश है जयो भ्रान्तिकाल मैं मिथ्या कल्पित पदार्थ से अभिन्न हो करिकैं प्रतीत होवै सो तो सामान्य अंश कहिये है ओर जिस अंशकी भ्रान्ति काल मैं प्रतीति होवै नहीं सो विशेष अंश कहिये है जैसें जहाँ रज्जु मैं सर्प भ्रम होय है तो उस भ्रमका आकार यह सर्प है ऐसा है सो यह शब्दका अर्थ इदम्पदार्थ सर्प सैं अभिन्न हो करिकैं भ्रान्तिकाल मैं प्रतीत होय है यातैं ये रज्जुका सामान्य अंश है तैसे हीं स्थूल सूक्ष्म सङ्घात है ऐसें स्थूल सूक्ष्मकी भ्रान्ति समय मैं मिथ्या सङ्घात सैं अभिन्न हो करिकैं सत् प्रतीत होय है यातैं आत्माका सत्रूप सामान्य अंश है ओर जैसें सर्पकी भ्रान्ति समय मैं रज्जु के विशेष अंशका प्रत्यक्ष होवै नहीं किन्तु रज्जुकी विशेष रूपतैं प्रतीति भयैं सर्प भ्रम दूर होवै है यातैं रज्जु विशेष अंश है तैसें स्थूल सूक्ष्म सङ्घात की भ्रान्ति समय मैं आत्माका असङ्ग कूटस्थ नित्यमुक्त स्वरूप प्रतीत होवै नहीं किन्तु असङ्गादिरूप आत्माकी प्रतीति भयैं सङ्घातकी भ्रान्ति दूर होवै है यातैं असङ्गता कूटस्थता नित्यमुक्तता इत्यादिक जे हैं ते आत्मा के विशेषरूप हैं जैसें भ्रान्ति समय मैं सर्पका आश्रय ज्यो रज्जु ताका सामान्य अंश इदंरूप सर्पका आधार है ओर विशेषरूप अधिष्ठान है तैसें मिथ्याप्रपञ्चका आश्रय जयो आत्मा ताका सामान्य सत् रूप स्थूल सूक्ष्मका आधार है ओर असङ्गतादिक विशेषरूप अधिष्ठान है ॥ जयो कहो कि सर्पका आधार ओर अधिष्ठान तो रज्जु है

ओर रज्जु तैं भिन्न जयो पुरुष सो सर्पका द्रष्टा है तैसें आत्मा जग
आधार ओर अधिष्ठान है तो इससैं भिन्न जगत् का द्रष्टा कोन होगा
सर्पका आधार ओर अधिष्ठान जयो रज्जु सो सर्पका द्रष्टा नहीं है कि
रज्जु तैं भिन्न जयो पुरुष सो सर्पका द्रष्टा है तैसें आत्मा तैं भिन्न जगत्
द्रष्टा कोन होगा सो कहो ।। तो हम कहैं हैं कि मिथ्या वस्तु अधिष्ठा
कल्पित होय है सो अधिष्ठान दो प्रकारका होय है एक तो जड़ अधिष्ठ
होय है ओर दूसरा अधिष्ठान चेतन होय है सो जहाँ अधिष्ठान जड़
है तहाँ तो द्रष्टा अधिष्ठानतैं भिन्न होय है जैसें सर्पका अधिष्ठान रज्जु
सो जड है तो या रज्जु तैं भिन्न जयो पुरुष सो सर्पका द्रष्टा है ओर ज
चेतन अधिष्ठान होय है तहाँ अधिष्ठान तैं भिन्न द्रष्टा होवै नहीं जैसें स्व
का अधिष्ठान साक्षि चेतन है सो ही स्वप्नका द्रष्टा है तैसें जगत् का अ
धिष्ठान आत्मा है सो ही जगत्का द्रष्टा है ये व्यवस्था स्थूल दृष्टि तैं क
है काहेतैं कि सिद्धान्त में तो सर्पका अधिष्ठान साक्षी ही है सो ही द्र
यातैं पूर्वोक्त शङ्का समाधान है ही नहीं ऐसें आत्माके अज्ञानतैं ज
प्रतीत होय है ।। जयो जाके अज्ञानतैं प्रतीत होय है सो ताके ज्ञान
निवृत्त होय है जैसें रज्जुके अज्ञानतैं सर्प प्रतीत होय है सो रज्जु
ज्ञानतैं निवृत्त होय है तैसें आत्माके अज्ञान तैं जगत् प्रतीत होय है
आत्माके ज्ञानतैं निवृत्त होय है यातैं आत्म ज्ञान सिद्ध करवे योग्य
ऐसें विचारसागरके चतुर्थ तरङ्ग में दृष्टान्त दार्ष्टान्तका यथार्थ

सामान्यरूप करिकैं ज्ञान भ्रमका कारण मानणाँ असङ्गत है ॥ ज्यो कहो कि अधिष्ठानका विशेष रूप करिकैं अज्ञान भ्रमका कारण है ते। हम कहैं हैं कि जिस समय मैं रज्जु सर्वथा अज्ञात है उस समय मैं बी तुमकूँ सर्प भ्रम होणाँ चाहिये काहेतैं कि उस समय मैं तुमारा मान्याँ हुवा भ्रमका कारण जयो अधिष्ठानका विशेषरूप करिकैं अज्ञान सो मोजूद है यातैं अधिष्ठानका विशेषरूप करिकैं जयो अज्ञान ताकूँ भ्रमका कारण मानणाँ बी असङ्गतहै॥ जयो कहो कि अधिष्ठानका सामान्यरूप करिकैं ज्ञान ओर विशेषरूप करिकैं अज्ञान ये दोनूँ कारण हैं तो हम पूछैं हैं कि दोनूँ ज्ञात भये कारण हैं अथवा ये दोनूँ अज्ञात ही कारण हैं अथवा दोनूँ मैं एक तो ज्ञात हुआ ओर द्वितीय अज्ञात हुवा कारण है ॥ जयो कहो कि ये दोनूँ ज्ञात भये कारण हैं तो हम कहैं हैं कि तुमकूँ सर्प भ्रम होणाँ हीं नहीं चाहिये काहेतैं कि तुमहीं अनुभवतैं देखो जहाँ तुमकूँ सर्प भ्रम होय है तहाँ रज्जुका सामान्यरूप करिकैं ज्ञान तो प्रतीत होय है ओर विशेषरूप करिकैं अज्ञान प्रतीत होवै नहीं यातैं दोनूँ ज्ञात हुये कारण हैं ऐसें मानणाँ असङ्गत है ॥ ज्यो कहो कि दोनूँ अज्ञात ही कारण हैं तो हम कहैं हैं कि जिस समय मैं तुमकूँ रज्जुका सामान्यरूप करिकैं बी ज्ञान नहीं है ओर विशेषरूप करिकैं बी ज्ञान नहीं है उस समय मैं बी तुमकूँ भ्रम होणाँ चाहिये काहेतैं कि उस समय मैं रज्जुका सामान्यरूप करिकैं ज्ञान ओर विशेषरूप करिकैं अज्ञान ये दोनूँ हीं अज्ञात हैं ॥ जयो कहो कि दोनूँ मैं एक तो ज्ञात ओर द्वितीय अज्ञात हुवा भ्रमके कारण हैं तो हम पूछैं हैं कि सामान्यरूप करिकैं जयो ज्ञान सो ते। ज्ञात ओर विशेषरूप करिकैं जयो अज्ञान सो अज्ञात ऐसें भ्रमका कारण कहो हो अथवा विशेषरूप करिकैं जयो अज्ञान सो ते। ज्ञात ओर सामान्यरूप करिकैं जयो ज्ञान सो अज्ञात ऐसें भ्रमका कारण कहो हो ॥ जयो कहो कि प्रथम पक्ष कहैं हैं तो हम कहैं हैं कि प्रथम पक्ष मानोंगे तो जहाँ रज्जु मैं सर्प भ्रम होय है तहाँ ते। भ्रम बर्ण जायगा काहेतैं कि यहाँ सामान्यज्ञान तो ज्ञात है ओर विशेषरूप करिकैं जयो अज्ञान सो अज्ञात है परन्तु इसके दृष्टान्त तैं जयो तुम आत्मा मैं जगत्कूँ अज्ञान कल्पित बताओ हो सो कैसें होगा काहेतैं कि आत्माका विशेषरूप करिकैं जयो अज्ञान सो अज्ञात नहीं है काहेतैं कि मैं मोकूँ नित्यमुक्त असङ्ग कूटस्थ नहीं जानूँ हूँ ऐसी प्रतीति होय है यातैं दृष्टान्तदार्ष्टान्तका साम्य

नहीं होय है यातें सोपाधिक भूमकूं दृष्टान्त कहें कुछ भी हानि नहीं तो हम कहें हैं कि जहाँ तीरस्थ पुरुषकूं जलमें अपने शरीरका भूम होय है तहाँ भूमाधिष्ठान जल है उसका ज्ञान पुरुषकूं सामान्यरूप करिकैं भी है और विशेषरूप करिकैं भी है आत्माका तो तुम सामान्यरूप करिकैं ज्ञान और विशेषरूप करिकैं अज्ञान मानों हो यातें दृष्टान्त दार्ष्टान्त विषम हैं॥ जो कहो कि मरु भूमिका जो जल ताकूं दृष्टान्त करेंगे काहेतें कि मरु भूमिका सामान्यरूप करिकैं तो ज्ञान और विशेषरूप करिकैं अज्ञान इनके होणेतें हीं तो जलभूम होय है और मरु भूमिका विशेषरूप करिकैं ज्ञान भयें जल भ्रम रहै नहीं परन्तु जलकी प्रतीतिहोती रहै है तैसें हीं आत्माका सामान्यरूप करिकैं ज्ञान और विशेषरूप करिकैं अज्ञान इनके होणेंतें तो आत्मा में जगद्भूम हुया है और आत्माका विशेषरूप करिकैं ज्ञान भयें जगद्भूम निवृत्त होजाय है परन्तु जगत्की प्रतीति होती रहै है ऐसें आत्मा में जगत्का सोपाधिक अध्यास सिद्ध होगा।

तो हम पूछें हैं कि आत्मा में जगत् अज्ञान कल्पित है यातें तुम दृष्टान्तों करिकैं आत्मा में जगत्कूं अज्ञान कल्पित सिद्ध करो हो अथवा तुम अपणां मत अन्य शास्त्रों से विलक्षण दिखावें के अर्थ आत्मा में जगत्कूं अज्ञान कल्पित बतावो हो सो तो कहो॥ ज्यो कहो कि आत्मा में जगत् अज्ञान कल्पित है यातें हम दृष्टान्तों करिकैं जगत्कूं अज्ञान कल्पित बतावें हैं तो हम पूछें हैं आत्मा में अज्ञान ज्यो है सो कल्पित है अथवा नहीं तो तुम ये ही कहोगे कि कल्पित ही है तो हम पूछें हैं कि किस समय में कल्पित हुया है तो तुम ये कहोगे कि अनादि कल्पित है परन्तु इतना तो विचार करो अनादि होय सो कल्पित कैसें हो सके॥ ज्यो कहो कि जैसें न्याय में प्रागभावकूं अनादि कल्पित मानें हैं तैसें हम अज्ञानकूं अनादि कल्पित मानें हैं तो हम कहें हैं कि व्यवहार सिद्ध करणें के अर्थ न्यायवाले असत् पदार्थोंकी कल्पना करें हैं तैसें तुम नें भी असत् अज्ञानकी कल्पना किई है तो इसमें तो हमारा विवाद भी नहीं परन्तु जगत् अज्ञान कल्पित नहीं है काहेतें कि अज्ञानकूं तुम जगत्का उपादान कारण मानों हो परन्तु ये ज्यो जगत्का उपादान होय तो आत्मज्ञान भयें तुमकूं जगत्की प्रतीति नहीं होणीं चाहिये काहेतें कि उपादान कारणका नाश भयें कार्य रहै नहीं ये सर्व के अनुभव सिद्ध है॥ और ज्यो कहो कि मोचा

धिक अभ्यास होय तहाँ उपादानका नाश भयें भी जब पर्यन्त उसा
की स्थिति होवै तब पर्यन्त कार्यकी प्रतीति रहै है तहाँ मरु जलका दृ
कहा है तो हम पूछैं हैं यहाँ उपाधि कहा है सो कहो। ज्यो कहो कि
अन्तःकरण ज्यो है सो उपाधि है तो हम कहैं हैं कि अन्तःकरण तो
सो तो जगत्के अन्तर्गत है यातैं ये तो उपाधि हो सकै नहीं यातैं अन्त
भिन्न कोई उपाधि कहो ॥ ज्यो कहो कि हम ज्ञानके उत्तर काल मैंअ
द्या लेश मानैं हैं जैसें लशुन भाण्ड मैं तैं लशुन निवृत्त किये भी लशुन
भाण्ड में लशुनका गन्ध रहै है तैसें ज्ञानके भयें भी अविद्या लेश रहै है
तो हम कहैं हैं कि अविद्यायादियोंकी कल्पना तो देखो ज्यो जीवन्
विद्वानोंके अविद्याका कलङ्क कहैं हैं ये तो जब पर्यन्त जीवते रहोगे
पर्यन्त तुमकूँ अविद्याके कलङ्क तैं रहित होवे देवैं नहीं। इनके तो ऐसे
वादियोंके भेदमैं आग्रह है तैसें अविद्या मानवें मैं आग्रह है ये इन
कल्पना फिर्ई ज्यो अविद्या सो भेदकी माता है काहेतैं कि न्यायमत वि
चन मैं पूर्व भेद ज्यो है सो अलीक सिद्ध हुवा है और ये भी इस भा
अलीक ही सिद्ध भई है तो जैसैं मनुष्यादिकों मैं सजातीय सन्तान हो
हैं तैसें अलीक अविद्याका सजातीय सन्तान भेद है माताके उपासक
विद्यावादी हैं और पुत्रके उपासक अन्यशास्त्रोंके अभिमानी पुरुष हैं
जीवन्मुक्तिके आनन्दकी इच्छा होय तो केवल श्रुतिका आश्रय करे औ
केवल अद्वैत दृष्टि आचार्य तें उपदेश ग्रहण करे।

देखो श्रुति ऐसें कहै है कि

यदा ह्येवैष एतस्मिन्नदृश्येऽनात्म्येऽनिरुक्तेऽनि-
लयनेऽभयं प्रतिष्ठां विन्दतेऽथ सोऽभयं गतो भवति।
यदा ह्येवैष उदरमन्तरं कुरुतेऽथ तस्य भयं भवति॥३॥

भय प्राप्त होय है-२ तो इन श्रुतियोंका तात्पर्य ये हुआ कि किंचित् बी भेद दर्शन ज्यो है सो भय हेतु है यातैं सच्चिदानन्द रूप आत्मातैं भिन्न अविद्या मानणाँ असङ्गत ही है ।

ज्यो कहो कि श्रुति मैं तो भेद दर्शन ज्यो है सो भयहेतु कहा है तो हम कहैं हैं कि भेद और अविद्या ये तो एक ही हैं देखो आत्मा मैं अविद्याकी कल्पना कियेंहीं भेद सिद्ध होयहै ।

अब हम ये कहैं हैं कि ज्यो तुमारै व्यवहार सिद्ध करणैं के अर्थ अज्ञान मानणैं मैं आग्रह है तो ऐसें मानों कि जैसें परमात्मानैं जगत्के अनन्त पदार्थ रचेहैं तैसें अज्ञानबी रचा है सो घटादिकमैं अज्ञात व्यवहार होणैं के अर्थ रचा है सो वृत्तिका विषय तैं सम्बन्ध होय तब तो इसका तिरोधान होजाय है और जब वृत्तिका विषय तैं सम्बन्ध निवृत्त होजाय है तब ये उद्भूत हो करिकैं विषयका आवरण करलेवै है ऐसैं मानों अथवा और कोई प्रकारकी कल्पना करिकैं तुम जगत् के व्यवहारकी व्यवस्था करो इसमैं हमारै खण्डन करणैंका आग्रह नहीं है काहेतैं कि इस जगत की रचना अलौकिक है इस की व्यवस्था भिन्न भिन्न शास्त्रों वाले पण्डितों नैं भिन्न भिन्न प्रकार करिकैं किई है ।। परन्तु यथार्थ निर्णय किसीकूँ बी इसका आज पर्यंत हुआ नहीं शपथ कराय करिकैं प्रश्न करोगे तो सर्व विद्वज्जन जगत्के निर्णय मैं सन्दिग्ध ही अपणैं कूँ कहैंगे यातैं व्यवहारकूँ कल्पित सिद्ध करो ।।

और हम तो येही कहैं हैं कि तुम अपणैं अनुभव तैं देखो नित्य ज्ञात निरावरण ज्यो स्वस्वरूप तिस के स्वरूप भूत अनुभव करिकैं स्वरूपकूँ प्रकाश करते भये तुम सर्वके प्रकाशक हो और तुम तो परमात्मा तैं भिन्न नहीं हो और परमात्मा तुमतैं भिन्न नहीं है ये ही वेदका सिद्धान्त अर्थ है । ये ही परम उपदेश है ।। तुम नित्य प्राप्त हो यातैं तुमारी प्राप्ति सम्भवै नहीं ।। और तुम नित्य मुक्त हो यातैं तुमारी मुक्ति सम्भवै नहीं ।। और तुम नित्य ज्ञात हो यातैं तुमारा ज्ञान सम्भवै नहीं ।। तुम अज्ञान के आवरण तैं अज्ञात नहीं हो किन्तु तुमतैं भिन्न तुमारा ज्ञाता और ज्ञान नहीं हैं यातैं अज्ञात हो ।। तुम वाणी और मन इनके विषय नहीं हो किन्तु वाणी मन तुमारे दृश्य हैं ।। तुमारे ही स्वरूप भूत सत्ता स्फुरणका विनाश सर्व

ज्ञान न ज्यो अज्ञान नसावै । कहिये ज्ञान काम को आवै॥
ज्ञान नहीँ ज्यो या विध कहिहो। कहा व्यवस्था श्रुतिकी लहिहो
ज्ञान भयेँ हीँ मुक्ति लहै है । श्रुति या विधतैं वचन कहै है॥
ज्ञान सिद्ध इमि सुनि मुसकाये। शिष्य बुद्धि शुचिलखि उमगाये
करन लगे जा विधि उपदेशा । कहूँ जाहि सुनि मिटै कलेशा।

अब तुमनैं ज्यो ये कही कि आपके कथन तैं अज्ञान ज्यो है अलीक सिद्ध हुया और मैनैं अनुभव तैं निर्णय किया तो ये अलीक ही है परन्तु

तमेव विदित्वातिमृत्युमेति ॥

ये श्रुति ज्यो है सो आत्माके ज्ञानतैं मुक्तिकूँ प्राप्त होय है यूं कहै है और आत्मा ज्यो है सो नित्य प्राप्त है नित्य मुक्त नित्यज्ञात है ऐसें आपनैं पूर्व वर्णन किया है और अनुभव तें आत्मा ऐसा ही प्रतीत होय है तो ज्ञानका फल तो अज्ञानकी निवृत्ति ही कहा जायगी सो अज्ञान अलीक है यातैं नित्य निवृत्त है तो इसकी निवृत्ति भी अलीक ही है तो ज्ञान निष्फल हुया और ज्यो आप ज्ञानकूँ भी अलीक ही कहो तो ज्ञानतैं मुक्तिकी प्रतिपादक ज्यो श्रुति ताकी व्यवस्था भी कैसी सो कहो ।

ान मानर्णेका तात्पर्य कहा है तो हम कहैं कि स्वप्नका ज्यो ज्ञान सो
वप्नके विषयोंका प्रकाशक ते। है परन्तु उसकूँ अन्तःकरणका परिणाम
हीं मानैं हैं किन्तु अविद्याका परिणाम मानैं हैं उसमैं ज्ञानका लक्षण
ाहीं रह सकैगा यातैं अविद्याका परिणाम ज्ञानका स्वरूप कहैं हैं ज्यो
हो कि विषयका प्रकाशक ज्यो अविद्याका परिणाम सो ज्ञान है ऐसें हीं
हो तो हम कहैं हैं कि जाग्रत्‌का ज्यो ज्ञान सो विषय का प्रकाशक तो
परन्तु अज्ञानका परिणाम नहीं है किन्तु अन्तःकरणका परिणाम
तो इसमैं ज्ञानका लक्षण नहीं रहसकैगा यातैं अन्तःकरणका परिणाम
ान कहैं हैं ।। ये ज्ञान दो प्रकारका है एक तो प्रमारूप है १ ओर दूसरा
अप्रमारूप है २ तिनमैं अप्रमा भी दे। प्रकारकी है एक तो यथार्थ अप्रमा
१ ओर दूसरी अयथार्थ अप्रमा है २ इसकूँहीं भ्रम कहैं हैं इन्द्रिय ओर
नुमानादिक करिकैं ज्यो ज्ञान होय है सो यथार्थ कहिये है ।। ओर दोष
न्य होय सो अयथार्थ कहिये है शुक्तिमैं रजतज्ञान सादृश्य दोष जन्य है
ओर मिसरी मैं कटुताज्ञान पित्त दोष जन्य है ओर चन्द्रमामैं लघुत्वज्ञान
रत्व दोष जन्यहै यातैं ये ज्ञान भ्रम हैं ओरस्मृतिज्ञान तथा सुखदुःखोंका
त्यक्ष ज्ञान तथा ईश्वरका वृत्तिज्ञान ये दोष जन्य नहीं यातैं ये भ्रम नहीं हैं
ओर प्रमाण जन्य नहीं यातैं प्रमा नहीं हैं किन्तु भ्रम ओर प्रमातैं विलक्ष-
यथार्थ ज्ञान हैं ।। स्मृतिज्ञान ज्यो है तिसका कारण अनुभव है सो अनु-
व यथार्थ होय तो उससैं उत्पन्न भई स्मृति ज्यो है सो यथार्थ होय है
ओर ज्यो स्मृतिका हेतु अनुभव ज्यो है सो भ्रम होय तो उससैं उत्पन्न ज्यो
मृति सो अयथार्थ होय है ।। ओर धर्म अधर्म रूप कारणों करिकैं अनु-
कूल प्रतिकूल पदार्थोंका सम्बन्ध हो करिकैं अन्तःकरणके सत्व
णके परिणाम सुखदुःख होय हैं ओर उन हीं धर्म अधर्म रूप कारणों
करिकैं सुख दुःखोंकूँ विषय करणेवाली वृत्तियाँ होयँ हैं उनमैं आरूढ
ाक्षी सुख दुःखोंका प्रकाश करैहै ।। ऐसैं स्मृतिज्ञान ओर सुखदुःखोंका
ान ये प्रमाण जन्य नहीं यातैं प्रमा नहीं हैं ।। ओर ऐसैं हीं ईश्वरका ज्ञान
यो है सो माया वृत्ति रूप है सो जीवोंके अदृष्टों करिकैं जन्यहै तो प्रमा-
जन्य नहीं हुवा यातैं प्रमा नहीं है ओर दोष जन्य नहीं यातैं भ्रमनहीं
किन्तु प्रमा ओर भ्रम इनतैं विलक्षण यथार्थज्ञान है ऐसैं हीं स्मृति ज्ञान
था सुखदुःखोंके ज्ञान भी प्रमा ओर भ्रमतैं विलक्षण यथार्थहैं ।। ये स्मृति

जगत् है ॥ तुम अचल हो अजर हो अमर हो अविकारी हो तुम ब्रह्म रूप हो ज्ञान रूप हो सत्य रूप हो नित्य हो शुद्ध हो बुद्ध हो मुक्त हो विद्याके कलङ्कतैं रहित हो अद्वितीय हो एक रस हो ॥ तुम स्थूल नं हो अणु नहीं हो ह्रस्व नहीं हो दीर्घ नहीं हो कोई इन्द्रिय के विषय नं हो च्यारौं वेद तुमकूं हीं ब्रह्म वर्णन करैं हैं तुम तैं भिन्न परमात्मा नं है ॥ ऋग्वेद तो तुम कूं

प्रज्ञानं ब्रह्म ॥

इस वाक्यतैं ब्रह्म वर्णन करै है और यजुर्वेद

अहं ब्रह्मास्मि ॥

इस वाक्यकरिकैं तुमकूं ब्रह्म वर्णन करै है और सामवेद

तत्त्वमसि ॥

इस वाक्य करिकैं तुमकूं ब्रह्म वर्णन करैहै और अथर्वण वेद

अयमात्मा ब्रह्म ॥

इस वाक्य करिकैं तुमकूं ब्रह्म वर्णन करै है यातैं तुम ही ब्रह्म हो और

सर्वं खल्विदं ब्रह्म ॥

॥ श्रुति सर्व जगत्कूं ब्रह्म वर्णन करै है ॥ यातैं ।

चौपाई ॥

[illegible] एक हरि जानों । भेद लेश तनक न मन [illegible]
[illegible] उर धारे । भय ताकूं श्रुतिवचन पुकारे
[illegible] । सो गुरु वेद ईश नहिं [illegible]
सकल जगत में निन्दा [illegible]

ौचा चार सकल ही त्यागे । पाप त्यागि सत् कर्म न लागे ॥
ोटे करम करत ही रहते । हम नहिँ करत वचन इमि कहते३
ुरि पोडश अध्याय सुनाई । सृष्टि आसुरी तहाँ बताई ॥
प्रतिष्ट जग असत हि जानें । सो कर्त्ता ईश्वर नहि मानें॥४॥
ाविधि दृष्टि पुरुप जचो राखे । नष्ट बुद्धि सो इमि हरि भाखे ॥
र्जुन उग्र कर्म वह करतो । काम दम्भ मद मान हि धरतो ॥५
तसंगिन की मति भरमावे । अपणी सेवा माहि लगावे ॥
ाम भोगही में मति धारे । आश पाशकूँ तनक न टारे ॥६॥
ारि अन्याय गहत है धनकूँ । नहि सँतोप देत है मन कूं ॥
ऐसो पुरुप नरककूं जावे । वह मोकूँ कबहूँ नहिँ पावे ॥७॥
ा विध हरि उपदेश सुनायो । अर्जुन को संदेह मिटायो ॥
ातें असत बुद्धि तुम टारो । ब्रह्म बुद्धि सब माँही धारो ॥८॥

सवैया ।

ीतपटा लपटाय लियें तन श्यामघटा घन अंग सुहावत ।
ोप चटान की लेइ छटा जमुना के तटापर धेनु चरावत ॥
ाके कटाछतें मुक्ति अटा मिलजात सटाक नहीं भरमावत ।
न्दवटातें लटापट जो नर कालभटा नहिँ ताहि लखावत॥९
ाको स्वरूप अलौकिकज्ञान भयोजगबाग तरू तन कीन्हो ।
जीव पतत्रिको रूपवनाय वसात तहाँ बहु आनँद लीन्हो ॥
आपहि देखि अलौकिक सृष्टि भयो वश मोह न आतम चीन्हो।
आपहि वेदको अर्थ विचारिलख्यो अरु आपहि दर्शन दीन्हो१०

ज्ञान न ज्यो अज्ञान नसावै । कहिये ज्ञान काम को आवै॥८॥
ज्ञान नहीँ ज्यो या विध कहिहो। कहा व्यवस्था श्रुतिकी लहिहो॥
ज्ञान भयेँ हीँ मुक्ति लहै है । श्रुति या विधतैं वचन कहे हैं॥९॥
ज्ञान सिद्ध इमि सुनि मुसकाये। शिष्य बुद्धि शुचि लखि उमगाये
करन लगे जा विधि उपदेशा । कहूँ जाहि सुनि मिटै कलेशा॥१०

अब तुमनैं ज्यो ये कही कि आपके कथन तैं अज्ञान जयो है सो अलीक सिद्ध हुवा और मैंनैं अनुभव तैं निर्णय किया तो ये अलीक ही है परन्तु

तमेव विदित्वातिमृत्युमेति ॥

ये श्रुति जयो है सो आत्माके ज्ञानतैं मुक्तिकूं प्राप्त होय है ऐं कहै है और आत्मा जयो है सो नित्य प्राप्त है नित्य मुक्त नित्यज्ञात है ऐसे आपनें पूर्व वर्णन किया है और अनुभव तैं आत्मा ऐसा ही प्रतीत होय है तो ज्ञानका फल तो अज्ञानकी निवृत्ति ही कही जायगी सो अज्ञान अलीक है यातैं नित्य निवृत्त है तो इसकी निवृत्ति भी अलीक ही है तो ज्ञान निष्फल हुवा और जयो आप ज्ञानकूं भी अलीक ही कहो तो ज्ञानतैं मुक्तिकी प्रतिपादक जयो श्रुति ताकी व्यवस्था का होगी सो कहो ।

ज्ञान मानणेंका तात्पर्य कहा है तो हम कहैं कि स्वप्नका ज्यो ज्ञान सो स्वप्नके विषयोंका प्रकाशक तो है परन्तु उसकूँ अन्तःकरणका परिणाम नहीं मानैं हैं किन्तु अविद्याका परिणाम मानैं हैं उसमैं ज्ञानका लक्षण नहीं रह सकैगा यातैं अविद्याका परिणाम ज्ञानका स्वरूप कहैं हैं ज्यो कहो कि विषयका प्रकाशक ज्यो अविद्याका परिणाम सो ज्ञान है ऐसें हीं कहो तो हम कहैं हैं कि जाग्रत्का ज्यो ज्ञान सो विषयका प्रकाशक तो है परन्तु अज्ञानका परिणाम नहीं है किन्तु अन्तःकरणका परिणाम है तो इसमैं ज्ञानका लक्षण नहीं रहसकैगा यातैं अन्तःकरणका परिणाम ज्ञान कहैं हैं ।। ये ज्ञान दो प्रकारका है एक तो प्रमारूप है १ ओर दूसरा अप्रमारूप है २ तिनमैं अप्रमा भी दो प्रकारकी है एक तो यथार्थ अप्रमा है १ ओर दूसरी अयथार्थ अप्रमा है २ इसकूँहीं भ्रम कहैं हैं इन्द्रिय ओर अनुमानादिक करिकैं ज्यो ज्ञान होय है सो यथार्थ कहिये है ।। ओर दोष जन्य होय सो अयथार्थ कहिये है शुक्तिमैं रजतज्ञान सादृश्य दोष जन्य है ओर मिसरी मैं कटुताज्ञान पित्त दोष जन्य है ओर चन्द्रमामैं लघुत्वज्ञान दूरत्व दोष जन्यहै यातैं ये ज्ञान भ्रम हैं ओरस्मृतिज्ञान तथा सुखदुःखोंका प्रत्यक्ष ज्ञान तथा ईश्वरका वृत्तिज्ञान ये दोष जन्य नहीं यातैं ये भ्रम नहीं हैं ओर प्रमाण जन्य नहीं यातैं प्रमा नहीं हैं किन्तु भ्रम ओर प्रमातैं विलक्षण यथार्थ ज्ञान हैं ।। स्मृतिज्ञान ज्यो है तिसका कारण अनुभव है सो अनुभव यथार्थ होय तो उससैं उत्पन्न भई स्मृति ज्यो है सो यथार्थ होय है ओर ज्यो स्मृतिका हेतु अनुभव ज्यो है सो भ्रम होय तो उससैं उत्पन्न ज्यो स्मृति सो अयथार्थ होय है ।। ओर धर्म अधर्म रूप कारणों करिकैं अनुकूल प्रतिकूल पदार्थोंका सम्बन्ध हो करिकैं अन्तःकरणके सत्व गुणके परिणाम सुखदुःख होय हैं ओर उन हीं धर्म अधर्म रूप कारणों करिकैं सुख दुःखोंकूँ विषय करणैवाली वृत्तियाँ होयैं हैं उनमैं आरूढ साक्षी सुख दुःखोंका प्रकाश करैहै ।। ऐसें स्मृतिज्ञान ओर सुखदुःखोंका ज्ञान ये प्रमाण जन्य नहीं यातैं प्रमा नहीं हैं ।। ओर ऐसें हीं ईश्वरका ज्ञान ज्यो है सो माया वृत्ति रूप है सो जीवोंके अदृष्टों करिकैं जन्यहै तो प्रमाण जन्य नहीं हुवा यातैं प्रमा नहीं है ओर दोष जन्य नहीं यातैं भ्रम नहीं हैं किन्तु प्रमा ओर भ्रम इनतैं विलक्षण यथार्थज्ञान है ऐसें हीं स्मृति ज्ञान तथा सुखदुःखोंके ज्ञान भी प्रमा ओर भ्रमतैं विलक्षण यथार्थहैं ।। ये स्मृति

ज्ञान और सुख दुःखोंके ज्ञान ये प्रमा नहीं इसमैं येही कारण है
है सो प्रमाताके आश्रित होवै है ये जे ज्ञान हैं ते अविद्याकी
यातैं प्रमा नहीं हैं ॥ जैसैं भ्रम और संशय जे हैं ते अविद्याकी
यातैं प्रमा नहीं हैं ॥ और संसार दशामैं इनका बाध नहीं य.
नहीं हैं ॥ येविचारवृत्ति प्रभाकरके प्रथम प्रकाशमैं और विचारच
तुर्थ तरङ्ग मैं लिखा है ॥ तो हम पूछैं हैं तुम प्रमा ज्ञान किसकूं
ज्यो कहो कि स्मृति तैं भिन्न और अबाधित अर्थकूं विषय करणैंवाल
ज्ञान सो प्रमा ज्ञान है अबाधित अर्थकूं तो यथार्थ स्मृति भी विषय
यातैं प्रमाके लक्षणमैं स्मृति भिन्न ये ज्ञानका विशेषण है और स्मृ
ज्ञान तो भ्रमज्ञानवी है यातैं अबाधित अर्थकूं विषय करणैंवाला ये प्र
लक्षण मैं ज्ञानका विशेषण है भ्रमज्ञान यद्यपि स्मृति भिन्न है तथापि अ
धित अर्थकूं विषय करणैंवाला नहीं है और अन्तःकरणकी वृत्तिरूप ज
ज्ञान सो प्रमा है काहेतैं कि ये ज्ञान प्रमाताके आश्रित होवै है और
संशय भ्रम इत्यादिक जे ज्ञान ते अविद्याकी वृत्तिरूप हैं यातैं प्रमा
आश्रित नहीं किन्तु साक्षी के आश्रित हैं इस हेतुतैं ये प्रमा नहीं हैं
कोई स्मृति ज्ञानकूं भी प्रमा मानैं हैं उनके मतमैं अबाधित अर्थकूं वि
करणैं वाला ज्यो ज्ञान सो ही प्रमा है स्मृति ज्ञानकूं जे प्रमा मानैं हैं उन
मतमैं स्मृति ज्ञान अविद्याकी वृत्तिरूप नहीं है किन्तु अन्तःकरणकी वृ
त्तिरूप है यातैं प्रमाताके आश्रित है ऐसे स्मृतिज्ञान जिनके मतमैं अवि
की वृत्तिरूप है तिनके मतमैं तो ये साक्षी के आश्रित है और ये प्रमा
है और जिनके मतमैं ये अन्तःकरणकी वृत्तिरूप है तिन के मतमैं ये प्र
के आश्रित है और ये प्रमा है और संशय तथा भ्रान्ति ज्ञान ये तो
मतमैं अविद्याकी वृत्तिरूप हैं और साक्षीके आश्रित हैं इसमैं किसी
की विवाद नहीं है और सिद्धान्त ये है कि स्मृति ज्ञान भी अविद्या
वृत्तिरूप ही है और साक्षी के आश्रित है यातैं प्रमा नहीं है ॥

ऐसें भाष्यमैं कारण ये है कि इनके मतमैं प्रमा छै प्रकारकी है १
प्रत्यक्ष प्रमा १ अनुमिति प्रमा २ शाब्दी प्रमा ३ उपमिति प्रमा ४ अर्था
प्रमा ५ अभाव प्रमा ६ और इनके करण क्रमसैं प्रत्यक्ष १ अनुमान २ [illegible]
[illegible] ५ अनुपलब्धि ६ ये हैं ॥ तो हम ये और पूछैं हैं
तुम प्रमाका लिङ्ग कहो हो जो कहो कि प्रमाताके [illegible]

मत भेद हैं तहाँ कोईका मत तो अवच्छेदक वाद है और कोईका मत प्रतिबिम्ब वाद है और कोईका मत आभासवाद है ॥

व्यवहार में चेतनके च्यार भेद हैं एक तो प्रमातृचेतन है १ और दूसरा प्रमाण चेतन है २ और तीसरा प्रमितिचेतन है ३ इसकूं हीं प्रमाचेतन कहैं हैं और चौथा विषय चेतन है ४ इसकूं हीं प्रमेयचेतन कहैं हैं सत्व रज तम ये तीन प्रकृतिके गुणहैं उनमें सत्वके कार्य तो ज्ञानेन्द्रिय ५ और एक अन्तःकरण ये छै हैं और रजोगुणके कार्य कर्मेन्द्रिय ५ प्राण ५ ये दश हैं और तमोगुणके कार्य सर्व जड विषय हैं देहके भीतर ज्यो अन्तःकरण ता करिकैं अवच्छिन्न जयो चेतन सो तो प्रमातृ चेतन है और नेत्रादिक इन्द्रियों तैं लेकरि कैं घटादि विषय पर्यन्त जयो अन्तःकरणकी दण्डाकार वृत्ति ताकरिकैं अवछिन्न ज्यो चेतन सो प्रमाण चेतन है और विषय सैं सम्बद्ध हो करिकैं ज्यो अन्तःकरण की विषयाकारवृत्ति ताकरिकैं अवछिन्न ज्यो चेतन सो प्रमा चेतन अथवा प्रमितिचेतन है और प्रमा के विषय जे घटादि पदार्थ तिन करिकैं अवछिन्न ज्यो चेतन सो विषयचेतन अथवा प्रमेय चेतन है ।

अवच्छेदकवादमें अन्तःकरणविशिष्ट चेतन ज्यो है सो प्रमाता है सो ही कर्त्ता भोक्ता है और अन्तःकरण उपहितचेतन ज्यो है सो साक्षी है एक ही अन्तःकरण ज्यो है सो प्रमाताका तो विशेषण है और साक्षीका उपाधि है स्वरूप कै विषैं जिसका प्रवेश होवै ऐसा ज्यो व्यावर्त्तक वस्तु सो विशेषण कहिये है ज्यो भिन्नता करिकैं वस्तुके स्वरूपकूं जणावै उसकूं व्यावर्त्तक कहैं हैं और जिसकूं भिन्नता करिकैं जणावै उसकूं व्यावर्त्य कहैं हैं और व्यावर्त्तक व्यावर्त्य जे हैं तिनकूं परिच्छेदक परिच्छेद्य भी कहैं हैं जैसें नील घट है यहाँ नीलरूप ज्यो है सो घटका विशेषण है काहेतैं कि नीलरूपका घटके स्वरूप विषैं प्रवेश है और पीतादिक तैं घटकूं भिन्न जणावै है और आयस्तुका स्वरूपके विषैं प्रवेश नहीं और व्यावर्त्तक होवै सो उपाधि कहिये है जैसें न्यायके मतमें कर्णशष्कुलीसें अवच्छिन्न ज्यो आकाश सो श्रोत्रहै यहाँ कर्णशष्कुली ज्यो है सो श्रोत्रका उपाधिहै काहेतैं कि श्रोत्रके स्वरूप में कर्ण शष्कुलीका प्रवेश नहीं है और बाहिरके आकाश सें भिन्नता करिकैं श्रोत्रकूं जणावै है तैंसेंहीं अन्तःकरणका प्रमाताके स्वरूपमें प्रवेश है और प्रमाताकूं प्रमेय चेतनसें भिन्नता करिकैं जणावै है

यातैं अन्तःकरण ज्यो है सो प्रमाताका विशेषण है और अन्तःकर साक्षीके स्वरूप विषैं प्रवेश नहीं है और साक्षीकूं प्रमेय चेतनतें भि करिकैं बनावै है यातैं अन्तःकरण ज्यो है सो साक्षीका उपाधि है।

और प्रतिबिम्बवाद मैं अन्तःकरण मैं ज्यो प्रतिबिम्ब सो प्रमाता और बिम्ब ज्यो शुद्ध चेतन सो परमात्मा है सोही साक्षी है इस मत मैं ही अन्तःकरणरूप उपाधिके सम्बन्धसें एकही चेतन बिम्बरूप करिकैं प्रतिबिम्बरूप करिकैं प्रतीत होय है ॥

और आभासवाद मैं आभाससहित अन्तःकरण जीवका विशेष और आभास सहित अन्तःकरण साक्षीका उपाधि है यातैं साभा अन्तःकरण विशिष्ट चेतन जीव है और साभास अन्तःकरण उपहि चेतन साक्षी है।

ऐसें अवच्छेदकवाद मैं अन्तःकरण विशिष्ट चेतन प्रमाता है और प्र तिबिम्बवाद मैं अन्तःकरण उपहित प्रतिबिम्बरूप ज्यो जीव सो प्रमाता है और आभासवाद मैं आभाससहित अन्तःकरण विशिष्ट चेतन प्रमाता है

तो हम पूछैं हैं कि तुम संसार किसमैं मानों हो सो कहो ज्यो कहो कि अवच्छेदकवाद और आभासवाद इनमैं तो यद्यपि विशेषण सहित चेत न प्रमाता है सो ही संसारी है तथापि विशेष्य ज्यो चेतन तामैं तो संसा का सम्भव है नहीं केवल विशेषण मैं संसारहै सो विशिष्ट ज्यो चेतन तामैं प्रतीत होवै है ॥ कहीं तो विशेषणका धर्म विशिष्ट मैं प्रतीत होयहै और कहीं विशेष्यका धर्म विशिष्ट मैं प्रतीत होय है और कहीं विशेषण और विशेष्य इन दोनूंके धर्म विशिष्ट मैं प्रतीत होय हैं ऐसें दण्ड करिकैं घट काशका नाश होय है तहां दण्ड करिकैं घटका नाश होय है और घटा विशेष्य ज्यो आकाश ताका नाश सम्भवै नहीं तो भी विशिष्ट ज्यो घटाका श ताके नाशका व्यवहार होय है और कुण्डली पुरुष सोवै है यहां कुण्ड

और प्रतिबिम्बवाद मत मैं अन्तःकरणरूप जयो उपाधि ताका धर्म जयो संसार सो उपहित जयो प्रतिबिम्ब तामैं प्रतीत होय है जैसैं दर्पण के धर्म जे मालिन्यादिक ते दर्पण मैं प्रतिबिम्ब जयो मुख तामैं प्रतीत होय हैं।

तो हम पूछैं हैं इन तीनौं मतौं मैं तुम किस मतका अङ्गीकार करो हो सो कहो जयो कहो कि हम आभासवाद मानैं हैं काहेतैं कि भाष्यकार इसही मतकूं मानैं हैं और विद्यारण्य स्वामीनैं अवच्छेदकवाद मैं दोष यो कहा है जयो कहो कि अवच्छेदकवाद मैं दोष है तो प्रतिबिम्बवादका अङ्गीकार करो तो हम कहैंहैं कि आभासमैं और प्रतिबिम्ब मैं ये भेद है कि बिम्ब जैसा होय सो तो प्रतिबिम्ब और बिम्बकी अपेक्षा ईषत् प्रकाशित होय सो आभास तो बिम्ब जयो शुद्धात्मा सो तो असङ्ग है और निर्विकार है और स्फूर्तिरूप है और चिदाभास जयो है सो स्फूर्तिरूप तो है परन्तु असङ्ग और अविकारी प्रतीत होवै नहीं किन्तु ससङ्ग और विकारी प्रतीत होय है यातैं ये आभास है और प्रतिबिम्ब नहीं है इस हेतु तैं हम प्रतिबिम्बवाद नहीं मानैं हैं किन्तु आभास वाद मानैं हैं॥ विद्यारण्य स्वामी नैं कूटस्थदीप मैं ऐसैं हीं कही है कि

ईषद्भासनमाभासः प्रतिविम्वस्तथाविधः
विम्वलक्षणहीनस्सन् विम्ववद्भासते स हि॥

इसका अर्थ ये है कि ईषत् प्रकाश ज्यो है सो तो आभास होय है और बिम्ब जैसा होय उसकूं प्रतिबिम्ब कहैं हैं सो ये चिदाभास बिम्बलक्षण करिकैं हीन हुवा बिम्ब की तरैंह मालुम होय है यातैं ये आभास ही है।

१ तो हम पूछैं हैं आत्मज्ञान करिकैं ज्यो अज्ञानकी निवृत्ति मानौं हो तहाँ तुम कौन से ज्ञानकूं आवरण भञ्जक मानौं हो सो कहो॥ ज्यो कहो कि प्रत्यक्ष ज्ञानकूं आवरणभञ्जक मानैं हैं तो हम पूछैं हैं कि प्रत्यक्ष ज्ञानका कारण तुमनैं पूर्व प्रत्यक्ष कहा है तहाँ करणवाचक ज्यो प्रत्यक्ष शब्द तिसका अर्थ तुम किसकूं मानौं हो सो कहो॥ ज्यो कहो कि करणवाचक ज्यो प्रत्यक्ष शब्द ताका अर्थ इन्द्रिय है सो इन्द्रिय पांच प्रकारके हैं श्रोत्र १ त्वक् २ चक्षु ३ रसन ४ घ्राण ५ इन इन्द्रियौं करिकैं पांच प्रकार की प्रमा

होय है श्रोत्र प्रमा १ त्वाच प्रमा २ चाक्षुष प्रमा ३ रासन प्रमा ४
प्रमा ५ सो हम पूछैं हैं ब्रह्मज्ञानरूप ज्यो प्रमा तसका करण
सो कहो।

जयो कहो कि पूर्व जे पाँच प्रकार की प्रमा कही ते तो बाह्य
उनके करण तो बाह्य इन्द्रिय हैं काहेतैं कि इन इन्द्रियों द्वारा अन्तःकरण
वृत्ति शरीरके बहिर्देश में जाकरिकैं बाह्यविषयाकार होय है और
रूप जयो प्रमा सो शरीर के भीतर होय है यातैं ये आन्तर प्रमा है
करण कोई तो मनकूं मानैं हैं और कोई शब्द कूं करण मानैं हैं॥
मतमैं मन इन्द्रिय है उनके मतमैं मन जयो है सो करण है और
मतमैं मन ज्यो है सो इन्द्रिय नहीं है उनके मत में शब्द जयो है सो
है ऐसें प्रत्यक्षप्रमा षट् प्रकारकी है और ऐसेंहीं इस षट्प्रकारकी प्र
प्रमाका करण भी षट् प्रकारके हैं।

तो हम पूछैं हैं कि तुमनैं ब्रह्मज्ञानरूप जयो प्रमा ताके करण
भेदतैं दोय कहे हैं तिनमैं एक मत में तो मनकूं करण कहा है और
मत में शब्दकूं करण कहा है सो ये और कहो कि ये मन तें अथवा श
जयो प्रत्यक्ष प्रमा होय है सो कैसें होय है॥ जयो कहो कि अन्तःक
जैसें साभास सहित है तैसें अन्तःकरणकी वृत्तिभी साभास सहित हो
है तब साभासवृत्ति विशिष्ट जयो चेतन सो तो प्रमाण है और अन्तःकरण
घटादि विषयाकार जयो वृत्ति तामैं आरूढ जयो चेतन सो प्रमा है
ताका साधन इन्द्रिय है यातैं इन्द्रियकूं प्रमाण कहैं हैं यद्यपि
जयो है सो स्वरूप सें नित्य है यातैं इन्द्रिय जन्य नहीं तो ताका
इन्द्रिय ही कछु नहीं तथापि वेदान्त में प्रमा व्यवहारको
विषयाकार वृत्ति सो इन्द्रिय जन्य है यातैं प्रमाका उपाधि जयो वृत्ति
इन्द्रियजन्य होवे तें प्रमा कूं इंद्रियजन्य कहे हैं॥ और इन्द्रियकूं प्र
साधन कहै हैं यातैं इन्द्रियकूं प्रमाण कहै हैं॥ औरवृत्ति जयो है
प्रमा चेतनका उपाधि है यातैं वृत्तिकूं प्रमा कहै हैं॥ जयो
प्रमाण चेतनका उपाधि जयो वृत्ति ताकूं हूं प्रमाण कहो इन्द्रियकूं
प्रमाण कहवे में मुख्य तात्पर्य कहा है तो हम कहैहैं कि इन्द्रिय देशतैं
[illegible] विषयके समीप देश पर्यन्त जो घटाकार वृत्ति सो प्र
चेतनका उपाधि है वा ही वृत्ति [illegible] है यातैं विषय [illegible]

य है से विषयाकार वृत्ति प्रमा है उससें प्रमाण चेतनका उपाधि जयो वृत्ति ताका अत्यन्त भेद नहीं यातें हम इन्द्रिय कूं प्रमाण कहैंहैं ॥तात्पर्य ये है कि प्रमाण चेतनोपाधि वृत्ति श्रोर प्रमाचेतनोपाधि वृत्ति इनका ज्यो भेद है से देश भेद तैं भेद है वस्तुगत्या भेद नहीं काहे तैं कि प्रमाण चेतनोपाधि जयो वृत्ति से ही विषयाकार होय है ऐसें बाह्य घटादिविषयक प्रमा जहाँ होवै तहाँ तो अन्तःकरणकी वृत्ति ज्यो है से इन्द्रिय द्वारा निकसिकैं विषय सम्बद्ध हो करिकैं विषयाकार होय है उस वृत्ति तैं तो विषयका आवरण दूर होवै है श्रोर वृत्तिमें ज्यो आभास है तिस करिकैं विषयका प्रकाश होय है ये तो बाह्य विषयके प्रत्यक्ष स्थलका प्रकार है ।

श्रोर शरीरके भीतर जब आत्माका साक्षात्कार होय है तब अन्तःकरण की वृत्ति बाहरि आवै नहीं किन्तु शरीरके भीतर ही वृत्ति आत्माकार होवै है उस वृत्तिसें आत्माके आश्रित ज्यो आवरण से नष्ट होवै है श्रोर आत्मा ज्यो है से स्वप्रकाशता करिकैं उस वृत्तिमें प्रकाश करे है ऐसें वृत्तिका प्रयोजन आत्माके आश्रित जयो आवरण ताका भङ्ग है यातें तो आत्मा जयो है से वृत्तिका विषय है श्रोर वृत्तिमें चिदाभासरूप जयो फल ताका प्रकाश आत्मामें होवै नहीं यातें साक्षी आत्माका स्वप्रकाशता करिकैं भान होवै है से ये आत्माकार वृत्ति वेदान्त वाक्यों के श्रवण सें होयहै यातें ये वृत्तिरूप जयो प्रमा ताका करण शब्दकूं मानैं हैं ।

श्रोर जे वृत्ति रूप प्रमाका करण मनकूं मानैं हैं वे ऐसें कहैं हैं कि प्रत्यक्ष ज्ञानका करण इन्द्रियों तैं भिन्न पदार्थ होवै नहीं ये नियम है जैसें बाह्य जे प्रत्यक्ष हैं उनके करण बाह्य इन्द्रिय ही होय हैं तैसें आत्म ज्ञान रूप ज्यो आन्तर प्रमा ताका करण आन्तर इन्द्रिय ज्यो मन से है श्रोर वेदान्त वाक्य जे हैं ते सहकारि कारण हैं ऐसें ब्रह्मज्ञान रूप ज्यो प्रमा ताका करण कोई तो शब्दकूं मानैं हैं श्रोर कोई मनकूं करण मानैं हैं यहाँ भाष्यकार तो शब्दकूं करण मानैं हैं श्रोर वाचस्पति मिश्र ज्यो है से मनकूं करण मानै है ।

तो हम कहैं हैं तुम एकाग्र हो करिकैं श्रवण करो हम तुमारे कथन का निर्णय करैं हैं तुमनें पूर्व ज्ञान दो प्रकार के कहे तिनमें एक तो प्रमा ज्ञान कहा श्रोर दूसरा अप्रमाज्ञान कहा तिनमें अप्रमाज्ञान तो भ्रम ज्ञान है उसकूं तो साक्षीके आश्रित कहा श्रोर प्रमाज्ञानकूं प्रमाताके आश्रित

कहा और इन दोनूं ज्ञानोंतैं विलक्षण तुमनैं यथार्थ ज्ञान और कहा उस का स्वरूप ये कहा है कि अबाधित अर्थकूं तो विषय करै और प्रमाताके आश्रित नहीं रहै सो वो यथार्थ ज्ञान तुमनैं स्मृतिज्ञान सुखदुःखज्ञान और ईश्वरकूं जयो ज्ञान है सो बताया है इन ज्ञानों मैं अप्रमाज्ञानका विचार तो द्वितीय भागमैं होगया यातैं तो इसके निर्णयकी आवश्यकता नहीं है और ईश्वरकूं जयो ज्ञान है उसका निर्णय तुम कर सको नहीं काहेतैं कि ईश्वरका ज्ञान तुमारै परोक्ष है और तुम उस ज्ञानकूं आवरणभञ्जक भी नहीं मानों हो तो सुखदुःखोंका ज्ञान और स्मृति ज्ञान और तुमकूं जयो प्रमाज्ञान होय है इनका विचार करणा चाहिये सो इन ज्ञानोंमैं सुखदुःखों का ज्ञान और स्मृति ज्ञान इनकूं तुमनैं साक्षीके आश्रित कहे हैं और इन ज्ञानोंकूं प्रमाताकि आश्रित नहीं मानें हैं तो ये सिद्ध हुवा कि जीवकूं सुख दुःखोंका ज्ञान तथा स्मृति ज्ञान ये नहीं हैं ॥ और प्रमाज्ञानकूं तुमनैं जीवाश्रित कहा है तो ये सिद्ध हुवा कि साक्षी मैं प्रमाज्ञान नहीं है॥ तो तुमारी व्यवहार की व्यवस्था तो सर्व निवृत्तिकूं प्राप्त भई काहेतैं कि इष्ट साधनता ज्ञान विना प्रवृत्ति होवै नहीं तो इष्ट नामहै सुखका उसका ज्ञान जीवमैं रहा नहीं तो जीव जयो है सो व्यवहार मैं प्रवृत्त कैसे हो सकै ॥ और वो सुखज्ञान साक्षी मैं रहा सो यो साक्षी व्यवहार करै नहीं काहेतैं कि तुम साक्षीमैं व्यवहार मानों नहीं तो व्यवहार का तो लोप ही हुवा॥

और विचार करो कि स्मृति ज्ञानकूं तुमनैं साक्षीके आश्रित कहा है और प्रमाज्ञानकूं तुमनैं प्रमाता के आश्रित कहा है तो प्रमाज्ञान जयो है सो अनुभव है और अनुभव जयो है सो स्मृतिका कारण है और जिसकूं जिस पदार्थ का अनुभव होय उसकूं उस पदार्थकी स्मृति होवै है अन्य कूं होवै नहीं ये नियम है तो जीवका अनुभव किया जयो पदार्थ उसका स्मरण साक्षीकूं कैसे हो सकै॥ और विचार करोकि संशय ज्ञान और भ्रमज्ञान इनकूं तुमनैं सर्व के मत मैं साक्षीके आश्रित कहे हैं और प्रमाज्ञानमैं इन की निवृत्ति मानों है सो प्रमाज्ञान जीवाश्रित कहा है तो जीवकूं ज्ञानसैं साक्षीके धर्मकी निवृत्ति कैसे होसके इसका विचार द्वितीय भाग मैं हुवा है यातैं यहां किंचित लेखतैं पुनरुक्ति दोष है।

अब प्रथम मुख इन विरोधोंका परिहार कहा पीछै अन्य विचार करैं वे करो कहोकि कैसे तो इन ज्ञानोंका व्यवस्था विचारणाय है वहूं तो

मैं और वृत्तिप्रभाकरके प्रथम प्रकाश मैं लिखी है सो कही है यहाँ तो इन विरोधूँका परिहार कुछ वी लिखा नहीं यातें मैं कुछ वी कह सकूँ नहीं परन्तु ये तो लिखा है कि यद्यपि

अहं ब्रह्म ॥

ये ज्ञान जवो है सो आभासकूँ होवैहै कूटस्थकूँ ये ज्ञान होवै नहीं तथापि आभास जवो है ताकूँ कूटस्थका अभिमान होवै है इस कथनका तात्पर्य्य ये है कि

अहं ब्रह्मास्मि ॥

इस वाक्य का अर्थ ये है कि मैं ब्रह्मरूप हूँ तो यहाँ मैं शब्द का अर्थ साभास अन्तःकरण विशिष्ट चेतन है तिसमैं विशेष्य जवो चेतन तिसका तो ब्रह्म के साथ मुख्य सामानाधिकरण्य है अर्थात् सदा अभेद है जैसें घटाकाश जवो है ताका महाकाश सैं सदा अभेद है और आभास जवो है तिसका ब्रह्म के साथ बाधसामानाधिकरण्य है अर्थात् आभासका अपणे स्वरूप का बाध करिकैं ब्रह्मसैं अभेद है अथवा जैसें स्थाणु मैं पुरुषका भ्रम होय है तहाँ स्थाणु के ज्ञान के अनन्तर पुरुष स्थाणु है ऐसें पुरुषका स्थाणु मैं बाधसामानाधिकरण्य है तैसें आभासका बाध हो करिकैं ब्रह्म सैं अभेद है यातैं मैं शब्द मैं भान होवै जवो आभास सो ब्रह्मसैं भिन्न नहीं है॥ तो हम कहै हैं कि आभासवाद मैं आभासकूँ मिथ्या कहा है जैसें रज्जु मैं सर्प जवो है सो कल्पित है तैसें ब्रह्ममैं जीव जवो है सो कल्पितहै ये आभास वादका सिद्धान्त है तो तुमहीं विवेक दृष्टितैं देखो मिथ्या कल्पित मैं अभिमान कैसें होसकै जवो मिथ्याकल्पितमैं अभिमान होय तो जहाँ स्थाणु मैं पुरुष कल्पित है तहाँ कल्पित पुरुषकूँ वी ये अभिमान होवाँ चाहिये कि मैं स्थाणु हूँ परन्तु उस पुरुषकूँ ऐसें अभिमान होवै नहीं ये अनुभव सिद्ध है यातैं आभास मैं अभिमान का असम्भव है, याहीतैं स्वुद्दी नैं मूल मैं, तो ये कही कि आभासकूँ मैं कूटस्थ हूँ ऐसें अभिमान होयहै और जब टीका लिखी तब आभासका कूटस्थ सैं अभेद तो युक्तितैं सिद्ध किया और ये नहीं लिखा कि आभासकूँ कूटस्थका अभिमान होय है इसमैं कारण ये है कि आभासवाद की प्रक्रियातैं आभासमैं कूटस्थका अभिमान युक्तितैं सिद्ध हो सकै नहीं यातैं आभास मैं कूटस्थ का अभिमान माननाँ अयुक्त है॥

और देखो कि यहाँ सद्गुरुही नैं कैसी चतुरता किई है कि आभ
का कूटस्थ सैं अभेद तो आचार्य नैं सिद्ध किया और आभास मैं अभि
होयेकी कोई युक्ति कही नहीं इसके मध्य मैं शिष्यका ये प्रश्न रि
दिया है कि अहङ्वृत्ति मैं साक्षी और आभास दोनूंका भान होय है
क्रम तैं होय है अथवा क्रम विना होय है सो आप मोकूं कहो ऐ
इस प्रश्नका उत्तर लिखा है तो इस लेखतैं ये सिद्ध होय है कि आप
अपनें शिष्यकूं आभास मैं अभिमान होयेकी युक्ति कहते तो सही पर
शिष्य नैं आचार्यके उत्तर के मध्य मैं अन्य प्रश्न कर दिया यातैं प्रथम
के उत्तर सैं शिष्यकूं सन्तुष्ट जाणिं करिकैं प्रथम प्रश्नका उत्तर अपूर्ण
रहा तो यो अन्य प्रश्नके उत्तर दानतैं प्रक्रिया मैं न्यूनता किञ्चित्
भई नहीं ऐसे स्थल मैं ऐसी चतुरता सैं लेख करणाँ इसमैं सामान्य पंडि
का सामर्थ्य नहीं है देखो आभास मैं अभिमान होणैं की युक्ति यो न
कही और प्रसङ्ग यो विरुद्ध हुवा नहीं यातैं आभास मैं अभिमान होवै
असम्भव ही है और आभास मैं साक्षीकै आश्रित अज्ञानका अभिमान हो
है ये जयो तुमनैं द्वितीयभाग मैं कही तहाँ जयो हमनैं दोष कह्या है सो
स्मृत कर लेणाँ चाहिये यातैं यो आभास मैं कूटस्थका अभिमान मान
असङ्गत ही है ॥

और प्रमाताके स्वरूप के मानणैं मैं तुमनैं तीन मत कहे तो य
ये सिद्ध होयहै कि प्रमाता वस्तु नहीं है जयो प्रमाता होता तो जैसे मा
कूं शुद्ध चिद्रूप मानणैं मैं किसी आचार्यकै विवाद नहीं तैसे प्रमाताके
स्वरूपकूं मानणैं मैं भी सर्वकी सम्मति होती यातैं प्रमाता वस्तु नहीं है
और जयो तुमनैं ये कही कि प्रमाता के विशेष्य भाग मैं तो मं
भय है नहीं किन्तु साभास अन्तःकरणरूप जयो विशेषण तार्में भ
साक्षी विशिष्ट मैं प्रतीति होय है तहाँ हम ये पूछैं हैं कि ये प्रतीति कि
कूं होय है अर्थात् साक्षीकूं होय है अथवा आभासकूं होय है ॥
कहोकि आभासकूं होय है तो हम पूछैं हैं ये प्रतीति जयो है सो प्र
है अथवा भ्रमारूप है ॥ जयो कहो कि भ्रमरूप है तो हम कहैं हैं कि
रूप जो प्रतीति तिस कूं तो तुमनैं अविद्या की वृत्तिरूप मानी है
अविद्याकूं तुम साक्षी कै आश्रित मानों हो यातैं आभास मैं इस
का मानणां असङ्गत है ॥

ओर ज्यो कहो कि इस प्रतीति का अभिमानी है आभास तो हम
हैं हैं कि आभास मैं अभिमान सिद्ध तो हुवा है नहीं ओर ज्यो हठ
रिकैं अभिमान मानों तो हम ये पूछैं हैं कि साक्षी मैं इस प्रतीतिकूं
ानि करिकैं आभास मैं इस प्रतीति का अभिमान मानोंगे तो ये कहो
ाक्षी मैं इस प्रतीतिका अनुभव करिकैं ओर आभास आप अभिमान करै
अथवा इस प्रतीतिका अनुभव कियें बिना हीं आभास अभिमानकरै है ।
ज्यो कहो कि साक्षी मैं संसार की प्रतीति का अनुभव करिकैं ओर
ाभास अभिमान करै है तो हम कहैं हैं कि जिस मैं संसार की प्रतीति
है उसकूं हीं संसारी कहैं हैं तो साक्षी कूं संसारी मानणां पड़ैगा सो
ति विरुद्ध है ओर विद्वानों के अनुभव तें वी विरुद्ध है काहेतें श्रुति मैं
हीं वी साक्षी कूं संसारी कहा नहीं किन्तु नित्य मुक्त कहा है ओर वि॰
ानोंकूं वी साक्षी नित्य मुक्त ही प्रतीत होय है यातें साक्षी मैं संसार
ी प्रतीति मानणीं ये असङ्गत है ।

ओर ज्यो कहो कि साक्षी मैं इस प्रतीति का अनुभव कियें विनाहीं
ाभास अभिमान करैहै तो हम कहैंहैं कि आभासनैं अनन्त पदार्थोंका अ॰
भव नहीं कियाहै तिनका वी इस आभासकूं अभिमान होणां चाहिये सो
ाहै नहीं यातें अनुभव के विना अभिमान मानणां असङ्गत ही है ।

ओर ज्यो कहो कि ये प्रतीति ज्यो है सो प्रमारूप है तो हम कहैंहैं
ि ये प्रमारूप है तो अन्तःकरणकी वृत्तिरूप है ओर प्रमाताके आश्रित
 काहेतें कि तुमनैं पूर्व प्रमाज्ञानकूं प्रमाता के आश्रितही कहाहै ओर इस
ानकूं अन्तःकरणकी वृत्तिरूप ही कहाहै तो ये प्रतीति ज्योहैसो प्रमाता
ि विशेष्य भागमैं तो बाधित है काहेतें कि प्रमाता के स्वरूप मैं विशेष भाग
ो है सोही साक्षीहै साक्षीकूं तुम प्रमाज्ञानका आश्रय मानों हो नहीं तो
 प्रतीति विशेषण भाग मैं होगी सो प्रमाताका विशेषण भागहै साभास अ॰
तःकरण तो ये प्रतीति साभास अन्तःकरण मैं होगी अबज्यो इस प्रतीति
ा विशिष्टमैं व्यवहार होगा तो इस व्यवहारकूं अन्तःकरणसहित आभा-
 करैगा तो ज्यो पुरुष विशेषण के धर्मका विशिष्टमैं व्यवहार करैहै उसकूं॰
स विशेषण विशेष्य जे हैं तिनकी प्रतीति व्यवहार करणें के पूर्वकालमैं रहैहै
ैसें घटके नाश का व्यवहार घटाकाश मैं होय है तहां व्यवहार कर्त्ता ज्यो
ुरुष ताकूं व्यवहारके पूर्वकाल मैं घट ओर आकाश इन दोनोंकी प्रतीति

होवैहै यातैं घटके नाशका व्यवहार घटाकाशमैं करैहै तैसैं अन्तःकरण
आभासकूं प्रमाताका विशेषणभाग जयो साक्षी और विशेषणभाग जयो अन्तः
करण सहित आप तिसकी प्रतीति जयो है सो व्यवहारके पूर्वकाल मैं
नहीं काहेतैं कि साक्षी किसीका बी विषय नहीं और अन्तःकरण सं
आभास जयो है ताकूं विषय करैहै ।

जयो कहो कि ये प्रतीति आभास मैं असिद्ध भई तो हम इस प्र
तिकूं साक्षी मैं मानैंगे कहेतैं कि साक्षी ज्यो है सो प्रमाताका स्वरूपमैं
शेषण जयो साभास अन्तःकरण तिसका बी ज्ञाता है और स्वरूप
करिकैं अपणां बी ज्ञाता है तो हम कहैंहैं कि इस प्रतीति कूं साक्षी
मानोंगे तो अविद्याकी वृत्तिरूप मानोंगे ज्यो अविद्याकी वृत्तिरूप मानैं
ये प्रतीति आभास कूं होवै नहीं जयो ये प्रतीति आभास मैं नहीं भई
आभास कूं सुखदुःखका अभिमान करिकैं संसारी नहीं मानणां चाहिये
ये संसारी नहीं हुआ तो साक्षी कूं संसारी मानों ज्यो साक्षी संसारी हु
तो संसारी होयवे तैं जितनें अनर्थ होंगे उनकी प्राप्ति साक्षी मैं मानणीं प
गी सो श्रुति विरुद्ध बी है और विद्वानों के अनुभव तैं बी विरुद्ध है यातैं
प्रतीति साक्षी मैं मानणीं ये बी असङ्गत ही है ।

जयो कहो कि ऐसैं आभासवाद की प्रक्रिया तैं संसार के मानवे
व्यवस्था नहीं भई तो हम अवच्छेदकवाद की प्रक्रियातैं संसार के मानवे
व्यवस्था करैंगे काहेतैं कि अवच्छेदकवादमैं अन्तःकरण विशिष्ट चेतन है
सो तो प्रमाता है और अन्तःकरण उपहित जयो चेतन सो साक्षी है त
इस मतमैं एक ही अन्तःकरण मैं विशेषण की दृष्टि तैं तो चेतनमैं प्रमा
पणां है और सगही अन्तःकरण मैं उपाधि की दृष्टितैं उस ही चेतन
साक्षी पणां है तो प्रमाताके स्वरूप मैं विशेषण भाग ज्यो अन्तःकरण
मैं संसार है उसकी अन्तःकरण विशिष्ट चेतन मैं प्रतीति
होय है तो हम कहैं हैं कि अवच्छेदकवादका तो मानणां हीं असङ्गत है
काहेतैं कि अन्तःकरण ज्यो है सो अवच्छेदकमात्र होवै तैं शुद्ध चेतन
प्रमाता होय तो पट स्यो है सो अवच्छेदक होवै तैं बी शुद्ध चेतन
है सो प्रमाता होणां चाहिये ये सही अवच्छेदकवादका खण्डन है और
विचार सागर मैं विस्तार तैं किया है यही विद्यारण्यस्वामीका मत है
है सो यहां [illegible] और अवच्छेदकवाद मानणें मैं ये दोष और है

स मत मैं अन्तःकरण विशिष्टचेतन जयो है सो प्रमाताहै और विशिष्ट ना
विशेषणयुक्तका है और विशेषणका लक्षण तुमनैं ये कहाहै कि स्वरूप के
विषैं जिसका प्रवेश होवै ऐसा ज्यो व्यावर्त्तक वस्तु सो विशेषण है और ये
दृष्टान्त कहा है कि जैसें नील घट है यहाँ नील रूप जयो है सो घटका
विशेषण है काहेतें कि नीलरूपका घट मैं प्रवेश है पीछैं ये कही है कि ते-
सें हीं अन्तःकरण ज्यो है तिसका प्रमाता के स्वरूप मैं प्रवेश है यातैं अ-
न्तःकरण जयो है सो प्रमाता का विशेषण है सो ये कथन असङ्गत है काहेतैं
घट जयो है सो तो साकार है यातैं इसके स्वरूप मैं तो नीलरूपका प्रवे-
श सम्भवै है ओर साक्षी तो निराकारहै इसके स्वरूपमैंअन्तःकरणका प्र-
वेश सम्भवै नहीं जयो कहो कि हम तो प्रमाताके स्वरूपमैं अन्तःकरणका
प्रवेश कहैंहैं साक्षीके स्वरूपमैं अन्तःकरणकाप्रवेश नहीं कहैं हैं तो हमकहैं
कि दृष्टान्त मैं जैसें नीलपदार्थ तैं घटपदार्थ भिन्न है तिसमैं नील पदा-
र्थका प्रवेश है तैसें अन्तःकरण सें भिन्न प्रमाता पदार्थ नहीं है किन्तु
अन्तःकरणतैं भिन्नतो शुद्धचेतन है सो ही साक्षी है यातैं साक्षीके स्वरूप मैं
अन्तःकरणकाप्रवेशहै ऐसें हीं कहणाँ पड़ैगा सो असङ्गतही है ।। काहेतैं
तुम साक्षीकूँ असङ्गमानोंहो यातैं अवच्छेदवादका मानणाँअसङ्गतहीहै
और जयो हटकरिकैं अवच्छेदवादकाही अङ्गीकारकरो तो भी विशेषणका धर्म
जयो संसार ताकी प्रतीति विशिष्ट मैं सम्भवै नहीं काहेतैं कि विशेषण है
अन्तःकरणतिसका धर्म तो है संसार और विशिष्ट है प्रमाता तो इसप्रमा-
तामैं संसारकी प्रतीति किसकूँ होवै इसका विचार करणाँ चाहिये जयो कहो
कि अन्तःकरण कूँ ये प्रतीति विशिष्ट मैं होय है तो हम कहैं हैंकि येकथ-
न तो असङ्गत है काहेतैं कि अन्तःकरण तो जड़ है जयो जड़कूँ भी प्रतीति
होयतो घटकूँ भी प्रतीतिहोणीं चाहिये और जयो कहो कि ये प्रतीति जयो
है सो अन्तःकरणका विशेष्य जयो चेतन ताकूँ विशिष्ट मैं होय है तो हम
कहैं हैं कि विशेष्य जयो चेतन सो तो प्रतीतिरूप है यातैं इसकूँ प्र-
तीति का आश्रय मानणाँ असङ्गत है ।

जयो कहो कि अवच्छेदवादकी प्रक्रियातैं संसारके मानणेंकी व्यव-
स्था नहीं भई तो हम प्रतिबिम्बवादसें संसार के मानणेंकी व्यवस्था करैं गे
तो हम कहैंहैं कि प्रथम तो प्रतिबिम्ब का मानणाँहीं असङ्गत है काहेतैं कि
इसमैं हीं प्रतिबिम्ब के मानणें मैं पूर्वे दोष कहाहै और जयो हट करिकै

प्रतिविम्ब ही मानौं तो ऐसैं मानौंगे कि जैसैं दर्पणमैं मुखका प्रतिबि
ब है तैसैं अन्त करण मैं शुद्ध चेतनका प्रतिबिम्ब होय है तो ये
करो कि प्रतिविम्बवाद मैं प्रतिबिम्ब मिथ्या तो है नहीं काहेतैं कि
जे मुख का प्रतिबिम्ब मानैं हैं ये ऐसैं कहैंहैं कि चक्षुरिन्द्रिय जो है
का ये स्वभाव है कि ये जब मलिनवस्तु सैं संयुक्त होय तब तो विष
मैं फैल जाय है ग्रोर जब ये शुद्ध वस्तुसैं संयुक्त होय है उस समय मैं उस
पृष्ठ भाग मैं ग्रावरण होवै नहीं तब तो उस शुद्ध वस्तु मैं प्रवेश
उसके पृष्ठ देश के पदार्थ सैं संयुक्त हो करिकैं उस पदार्थका ज्ञान क
ग्रोर जबो उस शुद्ध वस्तुके पृष्ठ भागमैं कललीका ग्रावरण होय तो
उस शुद्ध वस्तु सैं संयुक्त हुया जबो चक्षु सो उलटिकैं मुखकै सन्मुख होय
यातैं विम्बरूप ज्यो मुख ताकूं हीं देखै है दर्पण मैं मुख नहीं है काहे
दर्पणज्यो है सोपाषाणकी तरैंहैं कठोरहै यातैं सावयव जो मुख ताका
दर्पण मैं होसकै नहीं परन्तु दर्पणमैं मुखकूं देखूंहूं ये प्रतीति होयहै सो
तीति भ्रमरूप है।। तो इस कथन तैं ये ग्रर्थ सिद्ध हुया कि दर्पणरूप उप
तैं एक ही मुखमैं बिम्ब प्रतिबिम्ब व्यवहार होय है प्रतिबिम्ब जो है
बिम्ब सैं भिन्न नहीं यातैं मिथ्या नहीं है किन्तु बिम्बरूपही है यातैं
है तैसैं ग्रन्तःकरण रूप उपाधि के होनें तें एकही चेतन जीवरूप
ग्रोर परमात्मरूप करिकैं प्रतीत होयहै यातैं प्रतिबिम्बरूप जीव
है सो परमात्मरूप होनें सैं ग्राभास की तरैंहैं मिथ्या नहीं है किन्तु
है ये प्रतिबिम्बवादका सिद्धान्त है ।

करिकैं और उलटि करिकैं आत्माके सन्मुख होय किन्तु आत्माका तो स्वरूपभूत ज्ञानहीं अन्तःकरणका प्रकाशक है सो ज्ञान निरवयव है यातैं अन्तःकरण का सम्बन्ध हो करिकैं ज्ञानका उलटणाँ सम्भवै नहीं तो प्रतिबिम्बवादकी प्रक्रियातैं शुद्ध चेतन मैं बिम्बप्रतिबिम्ब भाव कैसैं हो सक यातैं प्रतिबिम्बवादका मानणाँ यी असङ्गत ही है ।

अब हम ये पूछैं हैं कि प्रतिबिम्बवाद युक्तिसिद्ध नहीं है तो भी तुम-इसकाही अङ्गीकार करो परन्तु संसार की प्रतीति की व्यवस्था कहो तो तुम ये ही कहोगे कि अन्तःकरण रूप ज्यो उपाधि है तिसमैं संसार है उस संसार की प्रतीति प्रतिबिम्ब मैं होय है जैसैं दर्पणका ज्यो मालिन्य सो दर्पण मैं प्रतिबिम्ब ज्यो मुख तामैं प्रतीत होय है तो हम कहैं हैं कि दर्पण मैं ज्यो प्रतिबिम्ब है उसमैं मालिन्यकी ज्यो प्रतीति होय है सो बिम्ब ज्यो पुरुष ताकूँ होय है और प्रतिबिम्बकूँ ये प्रतीति होवै नहीं ये अनुभव सिद्ध है तो दार्ष्टान्त मैं बिम्बस्थानीय तो ईश्वर है और प्रतिबिम्बस्थानीय जीव है और दर्पणस्थानीय अन्तःकरण है तो अन्तःकरण का धर्म ज्यो संसार सो जीवमैं ईश्वरकूँ प्रतीत होगा ज्यो संसार जीव मैं ईश्वरकूँ प्रतीत होगा तो जैसैं बिम्ब ज्यो पुरुष ताका दर्पण मैं ज्यो प्रतिबिम्ब तामैं मालिन्यकी प्रतीति बिम्बकूँ है तो बिम्ब ज्यो पुरुष सो ही यत्न करिकैं दर्पण के मालिन्यकूँ दूर करै है और पीछैं उस दर्पण मैं अपणाँ यथार्थ रूपकूँ देखै है तैसैं बिम्ब ज्यो शुद्ध सच्चिदानन्द परमात्मा ताका अन्तःकरण मैं ज्यो प्रतिबिम्ब तामैं संसार की प्रतीति बिम्बकूँ होगी तो बिम्ब है शुद्ध सच्चिदानन्द परमात्मा तो येही यत्न करिकैं अन्तःकरण मैं ज्यो संसार है ताकूँ दूर करिकैं और अन्तःकरण मैं अपणाँ यथार्थ रूपकूँ देखैहै ऐसैं मानों ज्यो ऐसैं अङ्गीकार किया तो ये कहो तुम अन्तःकरण मैं प्रतिबिम्ब हो अथवा बिम्ब हो ज्यो कहो कि मैं संसारी हूँ ये प्रतीति होय है यातैं प्रतिबिम्ब हूँ तो हम कहैं हैं कि जैसैं पट नीलरूप वाला है ऐसी प्रतीति होय है तो ये प्रतीति नीलरूप और इसका आधार ज्यो पट ताकूँ विषय करै है और विषय तैं प्रतीति पदार्थ भिन्न होय है ये सर्वानुभवसिद्ध है तैसैं मैं संसारी हूँ ये ज्यो प्रतीति ताका विषय संसार वाला मैं शब्दका अर्थ प्रतिबिम्ब है तो ये प्रतीति संसार और मैं शब्द का अर्थ ज्यो प्रतिबिम्ब इनतैं भिन्न होगी ज्यो ये प्रतीति भिन्न नहीं तो

विम्बरूप ही होगी जरो विम्बरूप भई तो ये ही परमात्मरूप हो
ये परमात्मरूप भई तो ये विचार करो कि तुम इस प्रतीति सैं कोई
पदार्थ हो अथवा ये जयो प्रतीति तद्रूप ही हो जयो क्योंकि हम प्र
तीतिसैं भिन्न हैं तो हम कहैं हैं कि तुम इस प्रतीतिसैं भिन्न हो तो
श्रोर मैं शब्द का अर्थ प्रतिबिम्ब ये इस प्रतीतिके विषय हैं तुमारे
नहीं हैं ऐसैं मानणाँ पडैगा जयो ऐसैं मान्याँ तो अन्यका अनुभव
पदार्थ अन्यकूँ प्रतीत होवै नहीं तो तुमकूँ संसार श्रोर मैं शब्दका
प्रतिबिम्ब ये प्रतीत नहीं होणैं चाहिदे परन्तु ये तो तुमकूँ प्रतीत
हैं यातैं तुम संसार श्रोर मैं शब्दका अर्थ इनकी जरो प्रतीति तद्रूप हो
तुम इस प्रतीतिरूप भये तो इस प्रतीतिसैं भिन्न कोई विषयपदार्थ है
यातैं तुमहीं बिम्बरूप भये जयो तुम बिम्बरूप भये तो प्रतिबिम्बा
बिम्ब ही परमात्मा है तो तुम परमात्मरूप भये अब बिम्बरूप जे
तिनमैं कर्त्तापणाँ है तो अपणे प्रतिबिम्ब मैं ज्यो संसार प्रतीत होय
तिसकूँ निवृत्त करिकैं अपणे प्रतिबिम्बकूँ देखो श्रोर ज्यो तुमारे मैं क
पणाँ नहीं है तो अपणे प्रतिबिम्बकूँ संसार करिकैं युक्त देखो॥ज्यो श्री
मेरे बिम्बरूप मैं तो कर्त्तापणाँ है नहीं यातैं मैं तो प्रतिबिम्ब मैं ज्यो
सार प्रतीत होय है ताकूँ निवृत्त कर सकूँ नहीं आप ही कृपा क
कोई यत्नैं प्रतिबिम्ब मैं प्रतीत होवै ज्यो संसार ताकूँ निवृत्त करो
हम कहैं हैं कि प्रतिबिम्ब मैं संसार प्रतीत होय है उसका स्वरूप ये
कि वैराग्य क्षमा उदारता काम क्रोध लोभ यत्न प्रालब्ध धन तं
इत्यादिक तो इनके विषय मैं श्रीकृष्ण महाराज ऐसैं आज्ञा करैं हैं कि

प्रकाशं च प्रवृत्तिं च मोहमेव च पाण्डव।
न द्वेष्टि संप्रवृत्तानि न निवृत्तानि कांक्षति ॥२॥

ताथे हो काहेतें कि तुमारे कथन तैं हमकूं ये निश्चय होय है कि तुमकूं अपणाँ स्वरूप प्रकाश साक्षी प्रतीत होय है यहाँ श्रुतिके उपदेश की समाप्ति है ।

अब हम येपूछें हैं कि तुमनें ब्रह्मज्ञानरूप ज्यो प्रमा ताके करणमत भेदतें दोय कहे हैं तिनमें शङ्कर स्वामीके मतसें तो शब्दकूं करण कह्या है और वाचस्पति मिश्रके मतसें मनकूं करण कहा है तो जे शब्दकूं करण मानें हैं ये वाचस्पति के मतमें दोष कहा कहैं हैं ॥ ज्यो कहोकि

यन्मनसा न मनुत ॥

ये श्रुति है इसका अर्थ ये है कि जिसकूं मनसें नहीं जाणें है तो इस श्रुति में मन करण नहीं है ये अर्थ स्पष्ट प्रतीत होय है यातें मनकूं करण नहीं मानें हैं और

तमेतं वेदानुवचनेन ब्राह्मणा विविदिषन्ति ॥

ये श्रुतिहै इसका अर्थ ये है कि वेदवचन करिकें ब्राह्मण इस आत्माकूं जाणवें की इच्छा करें हैं तो इस श्रुति में आत्माके ज्ञानमें वेदवाक्य करण है ये अर्थ स्पष्ट प्रतीत होय है यातें शब्दकूं करण मानें हैं ये वेद वाक्य दोय प्रकार के हैं एक तो अवान्तर वाक्यरूप है और दूसरा महावाक्यरूप है ज्यो वाक्य परमात्माकूं अस्तिरूप करिकें अर्थात् है ऐसें बोधन करै सो अवान्तर वाक्य है और ज्यो वाक्य जीव ब्रह्मकी एकता का बोधन करै सो महावाक्य है ये अवान्तर वाक्य बी दोय प्रकार के हैं तिनमें एक तो स्वरूपलक्षण रूप है जैसें

सत्यं ज्ञानमनन्तं ब्रह्म ॥

ये वाक्य स्वरूपलक्षणरूप है काहेतें कि ये वाक्य परमात्माके स्वरूप का प्रतिपादन करै है ब्रह्म ज्यो परमात्मा सो सत्य है ज्ञानरूप है और अनन्तरूप है ये इस श्रुतिका अर्थ है और दूसरा तटस्थलक्षणरूप वाक्य है जैसें

यतोवाइमानि भूतानि जायन्ते येन जातानि
जीवन्ति यत्प्रयन्त्यभिसम्विशन्ति तद्ब्रह्म॥

चक्रं सेव्यं नृपः सेव्यो न नृपश्चक्रवर्जितः
नृपचक्रविरोधेन भारविर्भूततां गतः ॥१॥

इस का अर्थ ये है कि राजा का चक्र वी सेवन करवे योग्य है और राजा वी सेवन करवे योग्य है और चक्रतें विपरीत हो करिकें राजाका सेवन करणों उचित नहीं है राजाके चक्रसें विरोध करिकें भारविनाम कवि ज्योहै सो भूत पणेंकूं प्राप्त हुवा १ इसकी वार्तासर्व विद्वज्जनों में प्रसिद्ध है तो जैसें अपरोक्ष ज्यो भारवि तामें विपरीत भावना दूर भई नहीं तैसें महावाक्य करिकें ब्रह्मका अपरोक्ष ज्ञान हीं होवे है परन्तु जिनके अन्तः करण में असम्भावना और विपरीत भावना ये दोष होवें तिनके महावाक्यतें हुवा ज्यो ज्ञान सो निष्फल है यातें इन दोषों की निवृत्ति के अर्थ श्रवणादिक कर्त्तव्य हैं ऐसें ब्रह्मज्ञानरूप ज्यो प्रमा ताका करण शब्दकूं मानें हैं ये मनकी करणताको निषेध करें हैं ।

तो हम कहें हैं कि ये कथन तो असङ्गत है काहेतें कि श्रुति ज्यो है सो जैसें शब्दकूं करण कही है तैसें मनकूं वी करण कही है देखो

मनसैवेदमाप्तव्यम् ॥

ये श्रुति है इसका अर्थ ये है कि ये ब्रह्म मनसें हीं जाणयो जाय है ॥ इस श्रुति में मनहीं ब्रह्मज्ञानरूप ज्यो प्रमा ताका करण है ये अर्थ पष्ट प्रतीत होय है और ज्यो ये कही कि

यन्मनसा न मनुते ॥

ये श्रुति मन करण नहीं है ऐसें कहे है यातें हम मनकूं करण नहीं मानें हैं ॥ तो हम कहें हैं कि

यतो वाचो निवर्तंते ॥

ये श्रुति शब्द ज्यो है सो ज्ञानका करण नहीं है ऐसें कहे है जिस तें वाणी निवृत्त होय हैं ये इस श्रुतिका अर्थ है यातें शब्द ज्यो है सो करण नहीं है ।

ज्यो कहोकि शाब्दी ज्यो प्रमा उसका करण शब्द है सो शाब्दीप्रमा दोय प्रकार की है एक तो व्यावहारिकी प्रमा है और दूसरी पारमार्थिकी प्रमा है

यो व्यावहारकी प्रमा यी दोय प्रकारकी है एक तो लौकिक वाक्यसैं होवै और दूसरी वैदिक वाक्य सैं होय है पदोंके समुदायकूं वाक्य कहैं हैं शक्ति सहित वर्ण रूप होय उसकूं पद कहैं हैं पद के श्रवण सैं पदार्थ स्मृति होय है उस पदार्थ की स्मृति द्वारा शाब्दी प्रमा होय है ऐसैं पदार्थस्मृति द्वारा शाब्दी प्रमाका करण शब्द है उसकूं हीं पद कहैं हैं यो पद दोय प्रकारका है एक तो शक्त और दूसरा लाक्षणिक है पदका और पदार्थका ज्यो सम्बन्ध सो वृत्ति है वो वृत्ति दोय प्रकार की है एक तो शक्ति है और दूसरी लक्षणा है शक्ति वृत्ति करिकैं पद जिस अर्थका बोधन करै उस अर्थकूं शक्यार्थ कहैं हैं और उस पदकूं शक्त कहैं हैं और लक्षणा वृत्ति करिकैं पद जिस अर्थका बोधनकरै उस अर्थकूं लक्ष्यार्थ कहैं हैं और उस पदकूं लाक्षणिक कहैं हैं यो लक्षणा तीन प्रकारकी है जहती १ अजहती २ और जहदजहती ३ इसकूं हीं भागत्याग लक्षणा कहैं हैं जहां शक्य अर्थका सर्वका त्याग होय तहां जहल्लक्षणा होय है जैसैं किसी नें प्रश्न किया कि तुमारा ग्राम कहां है तो उत्तरदातानें कहा मेरा ग्राम गङ्गा जी में है तो यहां गङ्गा शब्दका शक्य अर्थ प्रवाह है उसमें तो ग्राम होसके नहीं यातें गङ्गा पदकी तीर में लक्षणा है अर्थात् गङ्गापद जो है सो तीररूप अर्थकूं कहै है यहां जहतीलक्षणा है काहेतें कि यहां गङ्गा पदका प्रवाहरूप ज्यो अर्थ ताका त्यागहै और जहां शक्य अर्थका तो त्याग होवै नहीं और अन्यअर्थकाभी ग्रहण होय तहां अजहल्लक्षणा होय है जैसैं छत्री पुरुष जावैं हैं यहां छत्री पुरुष और इनतें भिन्न जे पुरुष छत्री शब्दतें लिये जाय हैं यहां छत्री शब्द ज्यो है सो छत्रधारी पुरुष और इनतें भिन्न जे पुरुष तिनका बोधन करै है यातें यहां अजहती लक्षणा है और जहां शक्य अर्थमें एक भाग का त्याग होय तहां भागत्याग लक्षणा होयहै जैसें

भागत्याग लक्षणा सें होय है तैसें हीं महावाक्य वी भागत्याग लक्षणा करिकें जीव और ब्रह्मकी एकता बोधन करैं हैं देखो

तत्वमसि ॥

ये महा वाक्य है यहाँ तीन पद हैं एक तो तत् पद है और दूसरा त्वम्पद् है और तीसरा असि पद है तत्‌पदका शक्य अर्थ मायाविशिष्ट चेतन है और त्वम्पदका शक्य अर्थ अविद्या विशिष्ट चेतन है और असिपद का अर्थ सत्ता है तो इस का अर्थ ये हुआ कि वो तू है तो इस वाक्य में तत्‌पदशक्यार्थ और त्वम्पदशक्यार्थ इनकी एकता प्रतीत होयहै सो सम्भवै नहीं काहे तें कि तत् पदका शक्यार्थ ईश्वर है सो सर्वज्ञ है और त्वम्पदका शक्यार्थ जीव है सो अल्पज्ञ है सर्वज्ञ और अल्पज्ञ इनकी एकता हो सकै नहीं यातैं ईश्वर में सर्वज्ञता मायाकृत है और जीवमें अल्पज्ञता अविद्याकृत है तो ये दोनूं धर्म औपाधिक हैं स्वरूपतें, ये चिद्रूप हैं यातैं उपाधि भाग का त्याग करिकें महावाक्य शुद्ध चिद्रूप में दोनूं की एकता का बोधन करै है सो भागत्याग लक्षणा करिकें बोधन करैहै तो इस कथन सें ये अर्थ सिद्ध हुआ कि

तमेतं वेदानुवचनेन ब्राह्मणा विविदिषन्ति ॥

ये श्रुति ज्यो शब्दकूं करण कहै है सो लक्षणा वृत्ति करिकें शब्दकूं शाब्दी प्रमाका करण कहैहै और

यतो वाचो निवर्त्तन्ते ॥

ये श्रुति ज्यो शब्दकी करणताको निषेध करैहै सो शक्ति वृत्ति करिकें शब्द ज्यो है सो शाब्दी प्रमा का करण नहीं है ऐसें कहैहै यातें हम ब्रह्मज्ञानरूप ज्यो प्रमा ताका करण शब्दकूं मानैं हैं।

तो हम कहैं हैं कि ज्यो मनकूं करण मानैं है सो ऐसें कहैहै कि जैसें घटादिपदार्थोंका प्रत्यक्ष होय है तहाँ अन्तःकरण की वृत्ति नेत्रादि द्वारा निकसि कैं घटादिक विषयके समानाकार होय है तहाँ वृत्ति तो आवरणभङ्ग करैहै और आभास ज्यो है सो विषय को प्रकाश करैहै इस आभासकूं फल चेतन कहैहै तो घटके प्रत्यक्षमें तो वृत्तिव्याप्ति भी रही और फलव्याप्तिभी रही काहेतें कि वृत्ति में तो आवरण भङ्ग रूप [illegible]

ओर चिदाभासनें प्रकाश रूप उपयोग किये ओर जब आत्माका मनतें सा-
क्षात्कार होय है तहाँ वृत्ति सें आवरण भङ्ग होय है यातें व्याप्ति मने
तो है परन्तु चिदाभास ज्यो है सो आत्मा का प्रकाश करे नहीं जैसें दीप
ज्यो है सो सूर्यका प्रकाश करे नहीं यातें आत्मा का ज्यो प्रत्यक्ष तहाँ फल
व्याप्ति नहीं है तो इस कथन तें ये अर्थ सिद्ध हुवा कि

यन्मनसा न मनुते ॥

ये ज्यो श्रुति सो मन की करणताको निषेध करेहे सो तो
व्याप्ति को निषेध करेहे ओर

मनसैवेदमापितव्यम् ॥

ये ज्यो श्रुतिसे मनकूँ करण कहेहे सो वृत्तिव्याप्ति करिकें मनकूँ
रण कहेहे ऐसें ब्रह्मज्ञान रूप ज्यो प्रमा ताका करण मनकूँ मानें है जब
शब्द की करणता श्रुतिसिद्ध भई तैसें मन की करणता भी श्रुतिसिद्ध भई
भाष्यकार शब्द कूँ तो करण मानेंहें ओर मनकूँ करण नहीं मानें हैं या
गूढ तात्पर्य कहाहै सो कहो ।

ज्यो कहो कि मन ज्यो है सो इन्द्रिय नहीं है काहेतें कि चक्षु आ
इन्द्रियों के जैसें रूपादिक जे हैं ते असाधारण विषय हैं तैसें मनका के
असाधारण विषय नहीं है १ ओर श्रीकृष्ण महाराज ऐसें आज्ञा करें हैं।

इन्द्रियेभ्यः परं मनः ॥

कर्त्ता है और मन जो है सो अन्तःकरणका परिणाम है यातैं करण है तौ तृतीय हेतु कहा सो भी असङ्गतहै ॥जो कहो कि मनकूं करण मानोंगे तो ब्रह्मप्रमाकूं दोयप्रमाणौं सैं जन्य माननी पडैगी काहेतैं कि भाष्यकार तो शब्दकूं करण कहैंहैं और आपके कथनतैं मन जो है सो करण सिद्ध होय है आप ही देखो न्यायवाले भी चाक्षुषादि प्रमाका करण बाह्य इन्द्रियकूं हीं मानैं हैं और मनकूं करण नहीं मानैं हैं किन्तु मनकूं सहकारी ही मानैं हैं और सुखादिकौं के प्रत्यक्षमें मनकूं हीं करण मानैं हैं और जहां दोय इन्द्रियों करिकैं वस्तु जाणयाँ जाय तहाँ दोय प्रमा मानैं हैं जैसैं घट ज्यो है सो चक्षुसैं भी जाणयाँ जाय है और त्वक् सैं भी जाणयां जाय है तो यहाँ चाक्षुष प्रमा त्वाच प्रमा ऐसैं दोय प्रमा मानैं हैं अब यहाँ शब्द प्रमाण करिकैं और मनःप्रमाण करिकैं ब्रह्मज्ञान रूप एक प्रमा मानैं तो दृष्ट विरोध होय है यातैं हम मनकूं करण नहीं मानैं हैं ॥ तो हम कहैं हैं कि प्रत्यभिज्ञाप्रत्यक्ष दोय प्रमाणौं सैं होय है यातैं दृष्टविरोध नहीं है देखो

सोयं देवदत्तः॥

अर्थात् वो ये देवदत्त है येप्रतिभिज्ञा प्रत्यक्ष है यहाँ संस्काररूप व्यापार द्वारा अनुभव करण है और सम्बन्ध रूप व्यापार द्वारा इन्द्रिय करण है तो ये सिद्ध हुवा कि दोय प्रमाणौं सैं भी एक प्रमा होय है यातैं दृष्ट विरोध नहीं है तो मनकूं करण माननाँ असङ्गत नहीं हुवा यातैं मनकूं करण मानों ॥ जो कहो कि प्रतिभिज्ञा प्रत्यक्ष मैं करण तो इन्द्रिय ही है और अनुभवजन्यसंस्कार तो सहकारि कारण है यातैं ये ज्ञान तो एक प्रमाण जन्य है तो इस के दृष्टान्त तैं ब्रह्मज्ञानरूप प्रमा दोय प्रमाणौं सैं जन्य हो सकै नहीं ।।तो हम कहैं हैं कि ब्रह्मज्ञान रूप प्रमाका करण भी मनकूं हीं मानों शब्द लो सहकारि कारण है ॥ जो कहो कि प्रत्यक्षज्ञानका करण इन्द्रिय होय है और मनकूं इन्द्रिय माननें मैं विवाद है यातैं हम मनकूं करण नहीं मानैं हैं तो हम कहैं हैं कि मनकूं कोई आचार्य तो इन्द्रिय मानैं हैं शब्दकूं तो कोई भी आचार्य इन्द्रिय मानैं नहीं तो शब्द ज्यो है सो ब्रह्मज्ञानरूप प्रमाकूं कैसैं उत्पन्न कर सकै ये तुमहीं विचार करो और श्रुति ज्यो है सो तो जैसैं शब्दकूं करण कहै है तैसैं मनकूं भी करण कहै है और जैसैं मनकी करणता को निषेध करै है तैसे शब्द की करणताको भी निषेध करै है और जैसैं शब्दकी करणता और शब्दकी करणता को निषेध

इनकी व्यवस्था तुम करो हो तैसें ननकी करणता ओर ननकी कारण
निषेध इनकी व्यवस्था ननकूं कारण मानवे वाले करें हैं तो यहां यु
हृदय गुरुगम्य है ॥

ओर देखो कि तुमनें लक्षणावृत्ति करिकें शब्दकूं कारण कहा है
ये दोष ओर है कि शक्यका लक्ष्य चेतन सें सम्बन्ध मानों तो

असंगो ह्ययं पुरुषः ॥

ये श्रुति है इसका अर्थ ये है कि ये पुरुष ज्यो है सो असङ्ग है
श्रुतिसें विरोध होगा ओर ज्यो शक्य का लक्ष्यचेतन सें सम्बन्ध नहीं
तो लक्षणा हो सके नहीं काहेतें कि शक्यका सम्बन्ध ज्यो है सो ही लक्ष
ज्यो कहोकि वाच्य अर्थके विषें दोय भाग हैं एक तो जड भाग है ओर दू
चेतन भाग है वाच्य भागमें हीं केवल चेतन ज्यो है सो लक्ष्य है यातें व
चेतन का लक्ष्य चेतन सें तादात्म्य सम्बन्ध है सो कल्पित है कल्पित स
म्ब करिकें वस्तुके स्वरूप की हानी होवे नहीं यातें श्रुतिनें ज्यो भा
कूं असङ्ग कहा उसकी हानि नहीं है तो हम कहें हैं कि ऐसें महावाक्य
लक्षणा मानोंगे तो तत् पद ओर त्वम्पद इनका अर्थ एक प्रतीत
होगा तो पुनरुक्ति दोष होगा ज्यो पुनरुक्ति दोष होगा तो घट ज्यो है
घट है इस वाक्यकी तरहें महावाक्य अप्रमाण होगा ओर ज्यो दोनूं प
का लक्ष्य अर्थ चेतन भिन्न मानोंगे तो महावाक्यों की अभेदबोधकता न

कूं निवृत्त करणें के अर्थ तो तत्पदके अर्थ में त्वम्पदके अर्थके अभेद का विधान है और त्वम्पदके अर्थ में परिच्छिन्नता भ्रम निवृत्त करणें के अर्थ त्वम्पदके अर्थ में तत्पदके अर्थके अभेदका विधान है तो हम कहैं हैं कि महावाक्यतें ज्यो ज्ञान हुवा उस करिकैं तत्पदके अर्थ में परोक्षता निवृत्त भई और त्वम्पदके अर्थ में परिच्छिन्नता निवृत्त भई तो आत्मज्ञानीकूं अपणाँ स्वरूप अपरोक्ष पूर्ण प्रतीत होय है ऐसैं मानणाँ पड़ैगा ज्यो अपणाँ स्वरूप अपरोक्ष पूर्ण प्रतीत हुवा तो जितनें आत्मज्ञानी हैं वे सारे सर्वज्ञ होणें चाहिये ।

ज्यो कहो कि आत्मज्ञानी सर्वज्ञ ही होय हैं तो हम पूछैं हैं इस समय में कोई आत्मज्ञानी है अथवा नहीं ज्यो कहो कि नहीं है तो हम कहैं हैं कि अपरोक्ष ज्ञान होणें के अर्थ महावाक्यके उपदेशका ग्रहण ज्यो है सो व्यर्थ हुवा काहेतें कि महावाक्यके उपदेशतें ज्यो

अहं ब्रह्मास्मि ॥

ये वृत्ति होय है इसकूं तुम ज्ञान मानों हो सो वृत्ति जिनकूं महावाक्योपदेश करो हो उनकूं सर्वकूं होय है ये तुम पूर्व कहि आये हो और इसकूं हीं तुम ज्ञान कहो हो और इससें हीं तुम अज्ञानके आवरणका भङ्ग मानों हो सो नहीं मानणाँ चाहिये काहेतें कि

अहं ब्रह्मास्मि ॥

इस वृत्तिसें ज्यो आवरणभङ्ग हुवा सो जीवसाक्षी के आश्रित ज्यो आवरण उसका ही भङ्ग नहीं मान सकोगे किन्तु ईश्वरसाक्षीके आश्रित ज्यो आवरण ताका भी भङ्ग मानणाँ हीं पडैगा ज्यो ईश्वरसाक्षीके आवरणका भङ्ग नहीं मानों तो त्वम्पदार्थ के अभेदका भान तत्पदार्थ में कैसें मान सकोगे ज्यो ईश्वरसाक्षीके आवरणका भङ्ग मान्याँ तो ईश्वरसाक्षी है ब्रह्म उसके आवरणका भङ्ग सिद्ध हुवा ज्यो ईश्वरसाक्षीके आवरणका भङ्ग हुवा तो त्वम्पदार्थ में परिच्छिन्नता भ्रम निवृत्त होवें के अर्थ ईश्वरसाक्षीके अभेदका भान जीवसाक्षीमें मानणाँ हीं पड़ैगा अब जीवसाक्षीमें ज्यो ईश्वरसाक्षीके अभेदका भान हुवा तो तुम ईश्वरसाक्षीकूं ईश्वरके उपाधिका प्रकाशक मानों हो तो जीव साक्षी ही ईश्वरके उपाधिका प्रकाशक हुवा ऐसैं ईश्वरके उपाधिका प्रकाशक जीवसाक्षी हुवा तो जीवसाक्षीकूं जैसें जगत्

करण की वृत्तियाँ प्रतीत होय हैं तैसें सर्व अन्तःकरणोंका समष्टिरूप ईश्वरका उपाधि ताका भान होणाँ हीं चाहिये सो होवै नहीं यातैं म वाक्योपदेश करिकैं ज्ञानका होणाँ कहा और जीव ईश्वर जे हैं तिन परस्पर अभेदका बोध महावाक्यसैं होय है ऐसैं कही ये दोनूं व्यर्थ भये ॥

और ज्यो कहो कि इस समय मैं आत्मज्ञानी है तो हम कहैं हैं जिसकूं महावाक्योपदेशसैं जीव ईश्वर मैं परस्पर अभेद भान हुआ है पुरुष हमकूं दिखाणाँ चाहिये कि ज्यो हमारे अन्तःकरणका वृत्त कहै परन्तु ऐसा पुरुष मिलणाँ ये असम्भव है यातैं महावाक्य मैं जीव श्वर की परस्पर अभेदबोधकता कही सो कैसैं होसकै ॥

ज्यो कहो कि ये अर्थ मैनैं अपणीं कल्पना तैं तो कहा है नहीं न्तु वृत्तिप्रभाकरके तृतीय प्रकाश मैं महावाक्यकूं परस्पर जीव ईश्वर के तिनका अभेदबोधक कहा है यातैं मैनैं कहा है तो हम कहैं हैं कि नैं ज्यो ऐसें अभेदबोधकता माननें मैं दोष कहा तिसका समाधान समर्मैं सैं हीं कहो ॥ ज्यो कहो कि जैसैं मठाकाश मैं घट है उस घटमैं मठाकाश और घटाकाश दोनूं एक हैं काहेतें कि दोनूं के उपाधि एक देशमैं स्थित होणे तें परन्तु घटाकाश मैं मठाकाश से होवै का कार्य होये नहीं अर्थात् जितना अवकाश मठाकाश मैं है उतन अवकाश घटाकाश देवै नहीं सो यद्यपि घटदेशमैं घटाकाशका जो

नहीं है तो यहाँ जीवदेश में तुमकूं अभेदका भान कैसें हो सके ।॥. ज्यो कहो कि जैसें इस शरीर में यद्यपि ज्ञाता एक है तथापि चरण में कण्टक की पीडा ओर घ्राण देशमें पुष्पका गन्ध ये भिन्न स्थानों मेंहीं प्रतीत होय हैं तैसें सारे जगत्का प्रकाशक यद्यपि एक ही ब्रह्म है तथापि अन्तःकरणों के धर्म सुखदुःखादिक जे हैं तिनका भान तत्तद्देशों में हीं होयहै तो हम कहेंहैं कि इसमें तो हमारे विवाद ही नहीं तत्तद्देशों में हीं भान होवो परन्तु महावाक्योपदेश तैं तुमारे आवरणभङ्ग हो गया ओर जीवसाक्षी में तो परिच्छिन्नताभ्रम निवृत्त होगया ओर ईश्वरसाक्षीमें परोक्षता भ्रम निवृत्त होगया ओर जीवसाक्षी तथा ईश्वरसाक्षी इनका अभेद होगया तो जीवसाक्षी ही ईश्वरसाक्षी हुवा अब जीवसाक्षी ही ईश्वरसाक्षी हुवा तो ईश्वरसाक्षी सर्वका प्रकाशक है यातैं जीवसाक्षीकूं एक अन्तःकरणकी वृत्तियों की तरैंहं सर्वका भान होणाँ हीं चाहिये ।

ज्यो कहो कि शुद्धचेतनमें साक्षीपणाँ अन्तःकरणके होणें तैं है ओर अन्तःकरण हैं नाना तो साक्षी नाना भये यातैं तो जा साक्षी कूं जिस अन्तःकरणका भान होय है उस साक्षीसें भिन्न ज्यो साक्षी ताकूं उस अन्तःकरणका भान होवै नहीं ओर साक्षी सर्व ही परमार्थतैं ब्रह्मचेतनतैं भिन्न नहीं यातैं महावाक्य तैं अभेद ज्ञान होणें में कोईवी हानि नहीं ।। तो हम कहैं हैं कि तुमारे अन्तःकरण देश में हीं महावाक्यजन्य ज्ञान तैं आवरणभङ्ग मानों ओर अन्य देश में आवरण है ऐसें मानों ज्यो ऐसें मान्यां तो ब्रह्मचेतन आवृत वी हुवा ओर अनावृत वी हुवा ज्यो ब्रह्मचेतन ऐसा हुवा तो इसका अभेद तुमनें जीवसाक्षी में मान्यां है तो तुमारा जीव साक्षी आवृत अनावृत प्रतीत होणाँ चाहिये ओर जीवसाक्षी आवरणभङ्ग भयें अनावृत ही प्रतीत होय है ये तो तुमारे अनुभवसिद्ध है ओर इसका अभेद तुम ईश्वरसाक्षी में मानों हो तो ईश्वरसाक्षी तुमकूं अनावृत प्रतीत होणाँ चाहिये ज्यो ईश्वरसाक्षी अनावृत प्रतीत हुवा तो ये ही तुमारा स्वरूप है यातैं तुमकूं सर्वअन्तःकरणों का भान होणाँ हीं चाहिये यातैं महावाक्यों की अभेदबोधकता तुमनें कही सो असङ्गत है ।

अब कहो आत्मज्ञानरूप प्रमाका करण तुमनें शब्दकूं मान्यां सो भङ्गत हुवा अथवा नहीं ज्यो कहो कि महावाक्यों कूं अभेदबोधक माननेंका तात्पर्य ये है कि जड पर्यन्त जगत तैं भिन्न परमात्मामैं

जानैं तब पर्यन्त कृतार्थ होवै नहीं यातैं सर्वप्रमाणोंमैं शिरोमणि
वेद सो अभेद कहि करिकैं जिज्ञासु पुरुष कूँ कृतार्थ करै है यातैं अं
न्मुक्ति के आनन्दकी प्राप्ति होयहै तो हम कहैं हैं कि तुम तो जीवन्मु
का आनन्द इसका फल कहो हो और हम तो शब्दजन्यज्ञानतैं
पणेकूँ कृतार्थ मानवे वाले पुरुषोंकूँ ऐसे देखैं हैं कि अपणे मैं ज्ञानी
मानिकरिकैं पापके भयकूँ त्यागि करिकैं निरन्तर अनर्थ करणे मैं प्रवृत्त हो
य रहैहैं और हम कहैं कि भाई तुम तुमारे अन्तःकरणकी वृत्तिकूँ अन्तर्मु
ख करिकैं अपणे निज आत्मस्वरूपका साक्षात्कार करो तो वे ऐसे कहैं
कि मनतैं आत्माका प्रत्यक्ष होय तो ज्ञानका विषय होणे तैं आत्मा घट
तरैंहू अनित्य होजावै यातैं आत्माका तो केवल शब्दजन्य ही प्रत्यक्ष होय
है जब महावाक्य

———

ने कहीकि आपनैं साक्षीका अनुसन्धान कौनसे प्रकार तैं किया है तब काकभुशुण्डजी नैं कही कि मैंनैं प्राणायाम मैं साक्षीका अनुसन्धान किया है उसका प्रकार ये है कि ये प्राण द्वादश अङ्गुल तो वाहिर आवैं हैं और इतनैं हीं भीतर जाय हैं प्राणों का वाहिर ज्यो आगमन सो तो रेचक [प्र]ाणायाम है और भीतर जगे गमन सो पूरक प्राणायाम है अब जब प्राण [व]ाहिर आये तब उनकी रेचक संज्ञा है अब जब प्राणोंको रेचक पणौं [त]ो निवृत्त भयो और पूरकपणौं उनमैं भयो नहीं तब यो प्राणोंकी अवस्था कु[म्]भकहै और जब प्राण भीतर जाय तब इनकी पूरक संज्ञा है अब ये द्वादश [अ]ङ्गुल भीतर गये और पूरक पणौं तो इनको निवृत्त भयो और रेचक पणौं [भ]यो नहीं वो प्राणोंकी अवस्था कुम्भक है इन दोनों कुम्भक अवस्थाओं [क]ा प्रकाशक साक्षीका मैंनैं अनुसन्धान किया है यातैं मैं योगसिद्धिकूं [प्र]ाय करिकैं सर्वज्ञ हुवा हूं यातैं तुमकूं उचित है कि तुम बी ऐसैं हीं [स]ाक्षी का अनुसन्धान करो।

ज्यो कहो कि आपके कथन तैं ये सिद्ध होय है कि सर्वज्ञता ज्यो है [स]ो योगजन्य होवै है सो योग साक्षी के अनुसन्धान तैं होय है परन्तु [ऐ]सैं तो काकभुशुण्ड ही भये हैं और ऐसे आत्मज्ञानी बहुत भये हैं कि [ज]िनकूं आत्मसाक्षात्कार हुवा और जीवन्मुक्त भये उनका निश्चय कहा है [स]ो कहो तो हम कहैं हैं कि ये अत्यन्त रहस्य है यातैं कहवे योग्य नहीं [य]ाही तैं ग्रन्थकारों नैं लिखा नहीं ओर ये लिखा है कि तत्त्व साक्षात्कार [व]ाले गुरु सैं उपदेश ग्रहण करै तो इसका ये तात्पर्य है कि केवल शास्त्रके [ब]ल तैं जे उपदेश करैं हैं उनकी अपेक्षा तैं तत्त्वसाक्षात्कारवाले पुरुषों [क]ा उपदेश विलक्षण होय है।

ज्यो कहो कि उनके उपदेश की विलक्षणता कहा है तो हम कहैं हैं कि वे जब कृपा करैं तब प्रथम तो महावाक्योपदेशके विना हीं आत्मसाक्षात्कार करायदेवैं हैं ओर श्रवणादि साधनोंका उपदेश पीछैं करैं हैं जे आत्मज्ञान नित्य सिद्ध बतावैं हैं ओर ये वृत्तिकूं ज्ञान नहीं मानैं हैं ओर वृत्तिका फल अज्ञानके आवरणका भङ्ग नहीं कहैं हैं ओर अज्ञान के विना हीं आवरण बतावैं हैं ओर वृत्तितैं आवरणका तिरोधान बतावैं हैं ओर ज्ञान के साधन स्थिरतीव्र बुद्धि१ उत्कट जिज्ञासा २ ओर आत्मसाक्षात्कार वाले पुरुषका कृपादृष्टि तैं उपदेश ३ ये तीन हीं कहैं हैं ओर

इन साधनों करिकें युक्त जयो पुरुष ताकूं स्वतसिद्ध ज्ञानका उपदेश हैं ॥ वे ऐसें कहें हैं कि

आत्मा वारे द्रष्टव्यः श्रोतव्यो मन्तव्यो निदिध्यासितव्य

ये श्रुति है इसका अर्थ ये है कि हे मैत्रेयि रे आत्मा देखवे ये है श्रवण करवे योग्य है मनन करवे योग्य है निदिध्यासन करवे योग्य इस का अन्वय ग्रन्थकार तो ऐसें लिखें हैं कि

आत्मा श्रोतव्यः मन्तव्यः निदिध्यासितव्यः द्रष्टव्यः

अर्थात् श्रवण मनन निदिध्यासन इन साधनों करिकें आत्मसाक्षात्कार करवे योग्य है और अनुभव वाले पुरुष ऐसें कहें हैं कि इस श्रुति में

द्रष्टव्यः॥

ऐसें प्रथम कहा है यातें प्रथम आत्माका साक्षात्कार करवे योग्य है पीछें श्रवण मनन निदिध्यासन ये करवे योग्य हैं ॥ जयो कहो कि इस श्रुति का प्रथम जयो अन्वय सो शङ्कुरस्वामी नें लिखा है आचार्योंका कथन असङ्गत कैसें मान्यों जाय तो हम कहें हैं कि आचार्यों के हृदय का अभिप्राय समुझणों कठिन है ॥ जयो कहोकि यहां शङ्कुरस्वामीका अभिप्राय कहा है तो हम कहें हैं कि

श्रवणायापि बहुभिर्यो न लभ्यः शृण्वन्तोऽपि बहवो यन्न विद्युः आश्चर्यो वक्ता कुशलोऽस्य लब्धाऽऽश्चर्यो ज्ञाता कुशलानुशिष्टः ॥१॥

ये श्रुति है इसका अर्थ प्रथम भाग में लिखा है इस श्रुति में

आप वक्ताकूँ दुर्लभ कैसैं बतायो हो तो हम कहैं हैं कि उन पण्डितौं मैं कदाचित् कोई तत्वसाक्षात्कार वाले गुरुका अनुग्रह पात्र होय तो आश्चर्य नहीं परन्तु बहुधा तो इस समय के पण्डित ऐसेही हैं कि वे जिज्ञासु पुरुषकूँ ऐसैं कहैं हैं कि प्रथम तो तुम भाष्यसहित तीनूँ प्रस्थानौं का श्रवण करो और पीछैं तुम आपही मनन करो पीछैं निदिध्यासन करो तब तुमकूँ आत्मसाक्षात्कार होगा जब जिज्ञासु पुरुष तीनूँ साधनौंकूँ करिकैं कहै कि महाराज अब मोकूँ साक्षात्कार करावो तब ऐसैं कहैं हैं कि आत्मा का तो शब्द ही प्रत्यक्ष होय है महावाक्यके श्रवण तैं ज्यो

अहं ब्रह्मास्मि ॥

ये वृत्ति होय है येही ज्ञान है ॥ और विचारवाला पुरुष ज्यो उन तैं ऐकान्त मैं प्रश्न करै और सत्य उत्तर देणें की प्रतिज्ञा कराय लेवै तब वे कहैं सो सत्य है ॥

एक समयका वृत्तान्त ये है कि हम एक पण्डित सैं मिले सो कैसा कि षट् शास्त्रौंका पढा हुआ और जिसकेकथनकूँ श्रवण करिकैं और आचरणकूँ देखि करिकैं लोक जिसकूँ ब्रह्मश्रोत्रिय और ब्रह्मनिष्ठ जाणैं हमनैं उससैं सत्य उत्तर देणेंकी प्रतिज्ञा कराय करिकैं एकान्त मैं ये प्रश्न किया कि ग्रन्थकारौंनैं

अहं ब्रह्मास्मि ॥

इस वृत्तिकूँ ज्ञान मान्या है सो वृत्ति हमकूँ समुझावो और करावो तब उसनैं उत्तर दिया कि तुमारै तत्वमसि इस वाक्य के श्रवण तैं

अहं ब्रह्मास्मि ॥

ऐसा अन्तःकरण का परिणाम होय है ये ही वृत्ति है हमकूँ ज्ञान समुझो तब मैंनैं कही कि ये तो अन्तःकरणका परिणाम नहीं है किन्तु वाणीका भेद है वाणी च्यार प्रकारकी है परा १ पश्यन्ती २ मध्यमा ३ वैखरी ४ पराका स्थान नाभि है और पश्यन्ती का स्थान हृदय है और मध्यमा का स्थान कण्ठ है और वैखरी का स्थान मुख है जब हम

अहं ब्रह्मास्मि ॥

ऐसैं आवृत्ति करैं हैं तब ये हमकूँ पटकी नांई स्पष्ट प्रतीत होय है सो कोई समय मैं तो हृदय मैं प्रतीत होय है सो तो सूक्ष्म प्रतीत होय है

इन साधनों करिकैं युक्त भयो पुरुष ताकूँ स्वतस्सिद्ध ज्ञानका उपदेश हैं ॥ वे ऐसें कहैं हैं कि

आत्मा वारे द्रष्टव्यः श्रोतव्यो मन्तव्यो निदिध्यासित

ये श्रुति है इसका अर्थ ये है कि हे मैत्रेयि ये आत्मा देखवे है श्रवण करवे योग्य है मनन करवे योग्य है निदिध्यासन करवे यो इस का अन्वय ग्रन्थकार तो ऐसें लिखैं हैं कि

आत्मा श्रोतव्यः मन्तव्यः निदिध्यासितव्यः द्रष्टव्यः

अर्थात् श्रवण मनन निदिध्यासन इन साधनों करिकैं आत्मसा त्कार करवे योग्य है और अनुभव वाले पुरुष ऐसें कहैं हैं कि इस श्रुति

द्रष्टव्यः॥

ऐसें प्रथम कहा है यातैं प्रथम आत्माका साक्षात्कार करवे यो पीछैं श्रवण मनन निदिध्यासन ये करवे योग्य हैं ॥ जो कहो कि इस का प्रथम जयो अन्वय सो शङ्करस्वामी नैं लिखा है आचार्योंका व असङ्गत किसैं मान्या जाय तो हम कहैं हैं कि आचार्यों के इस अभिप्राय समुझणां कठिन है ॥ जवो कहोकि यहां शङ्करस्वामी अभिप्राय कहा है तो हम कहैं हैं कि

श्रवणायापि बहुभिर्यो न लभ्यः शृण्वन्तोऽपि बहवो यन्न विद्युः आश्चर्यो वक्ता कुशलोऽस्य लब्धाऽऽश्चर्यो ज्ञाता कुशलानुशिष्टः ॥१॥

ये श्रुति है इसका अर्थ प्रथम भाग में लिखा है इस श्रुति में

आश्चर्यो वक्ता ॥

ऐसा कथन है इसका अर्थ ये है कि इसका कहवैवाला आश्चर्य है हजारों मनुष्यों में कोई ही कहवै वाला है अब जयो इसका कहवै दुर्लभ हुवा सो आत्मविचारका उच्छेद ही हुवा मानैं ... अपने शङ्करस्वामी नैं पूर्वोक्त प्रकार करिकैं

आत्मा वारे ॥

ाप वक्ताकूं दुर्लभ कैसें बतावो हो तो हम कहैं हैं कि उन पण्डितों मैं
दाचित् कोई तत्वसाक्षात्कार वाले गुरुका अनुग्रह पात्र होय तो आश्च-
र्य नहीं परन्तुं बहुधा तो इस समय के पण्डित ऐसेही हैं कि वे जिज्ञासु
रुषकूं ऐसें कहैं हैं कि प्रथम तो तुम भाष्यसहित तीनूं प्रस्थानों का
वण करो और पीछें तुम आपही मनन करो पीछें निदिध्यासन करो। तब
मकूं आत्मसाक्षात्कार होगा जब जिज्ञासु पुरुष तीनूं साधनोंकूं करिकैं
है कि महाराज अब मोकूं साक्षात्कार करावो तब ऐसें कहैं हैं कि आ-
मा का तो शाब्द ही प्रत्यक्ष होय है महावाक्यके श्रवण तैं ज्यो

अहं ब्रह्मास्मि ॥

ये वृत्ति होय है येही ज्ञान है ॥ और विचारवाला पुरुष ज्यो उन
ऐकान्त मैं प्रश्न करै और सत्य उत्तर देणें की प्रतिज्ञा कराय लेवै तब
कहैं सो सत्य है ॥

एक समयका वृत्तान्त ये है कि हम एक पण्डित सें मिले सो कैसा
क षट् शास्त्रोंका पढा हुआ और जिसके कथनकूं श्रवण करिकैं और आचर-
ाकूं देखि करिकैं लोक जिसकूं ब्रह्मश्रोत्रिय और ब्रह्मनिष्ठ जाणैं
मनैं उससें सत्य उत्तर देणेंकी प्रतिज्ञा कराय करिकैं एकान्त मैं ये प्रश्न
िया कि ग्रन्थकारोंनैं

अहं ब्रह्मास्मि ॥

इस वृत्तिकूं ज्ञान मान्या है सो वृत्ति हमकूं समुझावो और करावो
ब उसनैं उत्तर दिया कि तुमारै तत्वमसि इस वाक्य के श्रवण तैं

अहं ब्रह्मास्मि ॥

ऐसा अन्तःकरण का परिणाम होय है ये ही वृत्ति है हमकूं ज्ञान
मुझो तब मैंनैं कही कि ये तो अन्तःकरणका परिणाम नहीं है किन्तु वा-
णीका भेद है वाणी च्यार प्रकारकी है परा १ पश्यन्ती २ मध्यमा ३ वैखरी४
पराका स्थान नाभि है और पश्यन्ती का स्थान हृदय है और मध्यमा का
स्थान कण्ठ है और वैखरी का स्थान मुख है जब हम

अहं ब्रह्मास्मि ॥

ऐसें आवृत्ति करैं हैं तब ये हमकूं पटकी तरैं स्पष्ट प्रतीत होयहै
सो कोई समय मैं तो हृदय मैं प्रतीत होय है सो तो सूक्ष्म प्रतीत होय है

ओर वस्तुका कथन देशमें प्रतीत होय है सो स्थूल प्रतीत होय है तो ।। इसकूं ज्ञान कैसें मानें ये तो वाच्य है ज्ञानके स्वरूप नैं तो वर्ण प्रतीत होवे नहीं जैसें घटका ज्ञान होय है तो ज्ञानके स्वरूप नैं कोई भी वर्ण प्रतीत नहीं होय है ऐसें हमारे कथनकूं श्रवण करिकें यो पण्डित तूष्णीम्भावकूं प्राप्त हुवा ।

तब मैंनें कही इस प्रश्नके उत्तरकी स्फूर्त्ति इस समय में नहीं होय तो ये कहोकि शरीरके भीतर ज्यो

अहं ब्रह्मास्मि ॥

ये वाक्य प्रतीत होयहै सो साक्षीका विषय है अथवा अन्तःकरण वृत्तिका विषय है यह सुणिकें करिकें यो पण्डित नैं कुछ उत्तर दिया नहीं तब मैंनें कही कि मेरे प्रश्नोंका उत्तर नहीं देणें का कारण कहा है सो कहो तब उस पण्डित नें हमकूं ये कही कि ज्ञानी दोय प्रकारके होय एक तो शास्त्रीयज्ञानवाला होय है ओर दूसरा अनुभववाला होय है हम तो शास्त्रीयज्ञानवान् हैं इन प्रश्नोंका उत्तर तो अनुभव वाला पुरुष कह सके है ।। तब मैंनें कहीकि तुम तो लोकमें अनुभववाले प्रसिद्ध जिज्ञासु पुरुषकूं उपदेश कहा करो हो तब पण्डितनें उत्तर दिया कि

अहं ब्रह्मास्मि ॥

ये ज्यो देहके भीतर प्रतीत होय है सो अन्तःकरणकी वृत्ति अथवा वाच्य है इसकूं तो हम ज्ञान बतावें हैं ओर ये जिसका विषय यो साक्षी है अथवा प्रमाता है उसकूं साक्षी कहें हैं ओर हमारे पुरुषा सिद्धान्त ये है कि

पराञ्चि खानि व्यतृणत्स्वयम्भूस्तस्मात् पराङ् पश्यन्ति नान्तरात्मन् ॥

ये श्रुतिहै इसका अर्थ ये है कि स्वतन्त्र ज्यो परमात्मा सो बहिर्मुख जे इन्द्रिय तिनैं हिंसा करते भये या कारणतैं बाहिर देखैं हैं अन्तरात्माकूं नहीं देखैं हैं तो इस श्रुतिका ये तात्पर्य हुवा कि अन्तरात्माके अदर्शन मैं बहिर्दृष्टि ज्यो है सो कारणहै ॥ ज्यो कहो कि अन्तरदृष्टि कहा श्रोर बहिर्दृष्टि कहा तो हम कहैं हैं कि जैसें किसीनैं काष्ठके अश्वगज नरपक्षी इत्यादिक बणाये हैं उसही पुरुषकै उनमैं अश्वादि दृष्टि होयैं के काल मैं काष्टका तिरोधान होय है ये अश्वादि दृष्टि ज्यो है सो तो बहिर्दृष्टि है श्रोर काष्ठदृष्टि तैं अश्वादिकका तिरोधान होय है ये काष्ठदृष्टि ज्यो है सो अन्तर्दृष्टि है ॥ अब तुमहीं विचार करो अश्वादिक सर्व काष्ठ ही हैं श्रोर काष्ठ बुद्धि होयै नहीं इसमैं कार्यदृष्टितैं काष्ठदृष्टि नहीं होय है अथवा वहाँ तुमकूं कार्य दृष्टितैं भिन्न कोई काष्ठका आवरक प्रतीत होय है तो तुमकूं ऐसैंहीं मानणाँ पड़ैगा कि काष्ठबुद्धिके नहीं होयैं मैं कार्यदृष्टिही कारणहै तो ए सेंहीं अनुभव वाले पुरुष कहैं हैं कि ये जगत् परमात्मा हीं है परन्तु जगद्दृष्टि होयैं तैं अनावृत ही सच्चिदानन्द रूप परमात्मा आवृत प्रतीत होय है ॥

अब कहो ज्यो तुमनैं पूर्व ये कही कि अज्ञान प्रलीन हुवा तो ज्ञान निष्फल हुवा इस आपत्तिका उद्धार हुवा अथवा नहीं ज्यो कहोकि ज्ञान मैं निष्फलताकी आपत्ति रही उसका उद्धार हुवा क्योंहैंतें कि जैसें काष्ठबुद्धिके भयें अश्वादि बुद्धि नहीं रहे है तैसें ब्रह्मबुद्धि भयें जगद्बुद्धिका लय होय है ये ही ज्ञानका फल है ये आपका कथन अत्यन्त समीचीन है परन्तु मैं ये कहूँ हूँ कि आत्मा प्रकाशरूप है श्रोर निरावरण है तथापि वृत्तिके उदय भयें तैं पूर्व प्रकाशरूप प्रतीत होयै नहीं श्रोर वृत्तिके उदय भयें प्रकाशरूप प्रतीत होय है यातैं प्रकाशरूपता करिकैं आत्माकी प्रतीतिकूं हीं वृत्तिका फल मानैं तो कहा हानि है ॥

तो हम पूछैं हैं कि तुम यहाँ वृत्ति शब्द करिकैं वृत्ति सामान्य लेवो हो अथवा वृत्ति विशेष लेवो हो ज्यो कहो कि हम वृत्ति विशेष लेवैं हैं अर्थात् ब्रह्माकार वृत्ति लेयैं हैं तो हम पूछैं हैं कि आत्मा तो प्रकाशरूपता करिकैं सर्व वृत्तियोंमैं प्रतीत होय है यहाँ ब्रह्माकार वृत्तिके

ग्रहणका तात्पर्य कहा है सो कहो ज्यो कहोकि इस प्रश्नका उत्तर तो दृष्टि में कहीं वी आया। नहीं तो हम कहैं हैं कि जिनसैं तुमनैं ग्र अध्ययन किया है उननैं उत्तर दिया सो कहो ज्यो कहोकि उपदेष्टा नैं वी इस विषय मैं तो कुछ कहा नहीं यामैं कारण क सो आप कहो तो हम कहैं हैं कि उपदेष्टा केवल शास्त्र रहा ये ही कारण है ॥

एक समय का वृत्तान्त है कि एक पुरुष धनसम्पन्न श्रोर प्रसिद्ध रसज्ञी रहा हम उस के पास गये तो वहाँ एक पण्डित वेदान्त की कहता रहा उस समय मैं वृत्तिका विचार होता रहा जब कथा समाप्त तब मैं नैं प्रश्न किया कि जैसैं घटका ज्ञान होय है तैसैं हीं वृत्तिका ज्ञा होय है श्रोर जैसैं घटज्ञान के अनन्तर पुरुष कूँ ये ज्ञान होयहै कि मे घटका ज्ञान हुवा है तैसैं हीं वृत्तिज्ञानके अनन्तर वी पुरुषकूँ मोकूँ वृ का ज्ञान हुवाहै ये ज्ञान होय है ये अनुभवसिद्ध है काहेतें कि सबै पु ऐसैं कहैं हैं कि आजके दिनमैं तो मेरै सङ्कल्प बहुत भये तो घटका ज्ञा तो प्रमाताकूँ कहे हो श्रोर वृत्तिका ज्ञाता साक्षीकूँ बतावो हो इस अनुभव कहा है सो कहो ।।ये हमारा प्रश्न श्रवण करिकैं पण्डितनैं कही कि इस प्रश्नका उत्तर हम एकान्तमैं कहैंगे जब हमनैं एकान्त मैं प्रश्न कि तब पण्डित नैं कही कि महाराज ऐसे प्रश्न सभामैं करबे योग्य नहीं काहेतें कि आत्मसाक्षात्कार वाले पुरुष जगत् मैं दुर्लभ हैं हम तो शास्त्रज्ञ हैं।

चेतनतें पदार्थका प्रकाश होयहै और जब आत्माका ज्ञान होय है तब वृत्तितैं आवरणभङ्ग मात्र होवैहै और फलचेतन का प्रकाश होवै नहीं किन्तु आत्मा अपणे प्रकाशसैं हीं प्रकाशता है यातैं साक्षी ज्यो आत्मा तामैं फल, चेतनकी अविषयता होणें तैं दृश्यताकी आपत्ति होवै नहीं और वृत्ति की विषयता होणें तैं आत्मा अज्ञात होवै नहीं ऐसैं आभासकूं साक्षी का अज्ञातता करिकैं ज्ञान होय है।

तब हमनैं च्यार प्रश्न किये कि वृत्ति अन्तर्मुख नहीं होवै तो आवरण भङ्ग होवै नहीं यातैं उस आवरणभञ्जक वृत्तिका स्वरूप कहो १ और फलका अविषय होणें तैं घट अज्ञात कहावैहै तो ऐसैं हीं आत्मा बी फल का अविषय होणें तैं अज्ञात होगा अब ज्यो आत्मा ऐसैं अज्ञात होगा तो जैसैं मेरे घट अज्ञात है इस प्रतीतिसैं घटमैं अज्ञान का आवरण मानों हो तैसैं आत्मा मेरै अज्ञात है ऐसा प्रतीति का आकार श्रवण करिकैं शिष्यकूं आत्मामैं अज्ञान के आवरणका भ्रम हो जायगा यातैं प्रतीति के आकार मैं भेद कहो २ और ज्यो तुमनैं ज्ञान की अविषयता तो साक्षीमैं कही और इस अविषयता का ज्ञान अभास मैं कहा तो साक्षी मैं ज्ञानकी विषयता बलात्कार तैं सिद्ध होय है काहेतैं कि धर्मी तो है साक्षी इसका धर्म है अविषयता तो धर्मीके ज्ञान बिना धर्मका ज्ञान धर्मी मैं सम्भवै नहीं यातैं अविषयता के ज्ञानतैं पूर्व साक्षीका ज्ञान मानों जबो साक्षीका ज्ञान मान्यों तो साक्षी मैं ज्ञानकी अविषयता का मानणों असङ्गत हुया इसका समाधान कहो ३ और अविषयता का आश्रय ज्यो धर्मी तिसका ज्ञान लोकमैं परोक्ष मान्यों है अब ज्यो साक्षीका ज्ञानभी ऐसा ही हुवा तो ये अपरोक्ष कैसैं होगा ज्यो कहो कि साक्षीका ज्ञान आवरणके नाशसैं अपरोक्ष है तो हम कहैंहैं कि जैसैं परोक्षघटका ज्यो ज्ञान ताका आकार ये है कि घटअज्ञात है तैसैं हीं साक्षी के ज्ञानका आकार बी ये ही है साक्षी अज्ञात है तो एकाकार प्रतीतिसैं जे ज्ञान सिद्ध हैं तिनमैं एक ज्ञानकूं परोक्ष और दूसरे ज्ञानकूं अपरोक्ष कैसैं मान्यों जाय सो कहो ४ ये प्रश्न श्रवण करिकैं पण्डितकी बुद्धि चकित होगई ॥ और ऐसैं कहणैं लगा कि ऐसे ऐसे सन्देहस्थान तो शास्त्रमैं बहुत हैं अब मैं आपतैं प्रश्न करूंहूं कि

मनसेव ॥

इत्यादिक ज्यो श्रुति सो मनकूं प्रमाका करण कहै है सो तोकूं अ
युक्त प्रतीत होय है काहेतैं कि ज्यो मन आत्मज्ञानरूप प्रमाका क
होय तो आत्मा प्रमाका विषय होवैं तैं अप्रमेय नहीं हो सकैगा और

यन्मनसा ॥

इत्यादिक ज्यो श्रुति सो मनकी करणता को निषेध करै है ज
ज्यो निर्मलता और मलिनता इन धर्मनतैं मनमैं भेदमानि करिकैं व्यवस्था
करोगे और फलव्याप्ति के निषेध करिकैं आत्मामैं अप्रमेयता सिद्ध करो
तो मैं मे पूछूं हूं कि मनोवृत्ति के द्वार मानैं जे चक्षुरादिक तिनकूं प्रत्य
मैं करण मानें हैं यातैं मनकूं करण मानणों अनुचित है और मानों
घटादिकन के निमित्त कारण जे दण्डादिक तिनकूं हीं करण मानें हैं घटा
दिक की उत्पत्तिमैं मृत्तिकाकूं करण कोई भी पण्डित नहीं मानें है इ
तो वृत्ति का उपादान करण है मे करण कैसे हो सकै अब ज्यो मन क
रण नहीं हुआ तो श्रुति मैं

मनसा ॥

यहां तृतीया विभक्ति सङ्गत कैसें हो सकै

जानिकर्तुः ॥

इस सूत्रसें मनमैं उपादानता प्राप्त होय है तो श्रुतिमें मनस् इस
सें पञ्चमी होवणीं चाहिये और ज्यो हठ करिकैं मनकूं करण मानोगे तो
जिनके मतमैं आत्मज्ञानरूप प्रमाका करण शब्दकूं मान्यों है उनकी व्य
र्था क्यों होगी से कहो ।

जार्वों सो न्यायवालों का और व्याकरणवालों का साम्याँ हुवा करणका लक्षण मनमें है यातें श्रुतिमें मनस् शब्दतें तृतीया विभक्ति है ।। जयो कहो कि

जनिकर्तुः ॥

इस सूत्रकी कहा गति होगी सो कहो तो हम कहैं हैं कि जहाँ कारणसैं कार्य की उत्पत्ति का कथन होय तहाँ कारण वाचक शब्दसैं पञ्चमी विभक्ति होय ये

जनिकर्तुः ॥

इस सूत्रका तात्पर्य है याहीतैं

यतो वा इमानि भूतानि जायन्ते ॥

यहां कारण वाचक शब्दसैं पञ्चमी है और

येन जातानि जीवन्ति ॥

यहाँ कारणसैं कार्य की उत्पत्तिका कथन नहीं यातैं कारण वाचक शब्दसैं तृतीया विभक्ति है ऐसैं मनकूं करण मानणैं मैं किञ्चित् भी हठ-हुया नहीं यातैं शब्दकूं करण मानणे की व्यवस्था तुमहीं करो ।

ऐसैं हमारा कथन श्रवण करिकैं पण्डित लज्जित होगया यातैं हम कहैं हैं कि शास्त्रके हृदयकूं जाणैवे वाले यी पुरुष जगत में बहुत नहीं हैं तो अनुभव वाले पुरुष दुर्लभ होवैं इसमैं कहा आश्चर्य है॥इस समयमैं तो जेपुरुष तीन प्रस्थान पढ़े हैं और दम्भ करिकैं शील सन्तोपादिक गुणोंकूं अपणें मैं दिखायते रहैं हैं उनकूं तो लोक याज्ञवल्क्यके सदृश मानैं हैं और जे पुरुष सम्पन्न हैं और आत्मविद्या के ग्रन्थों का श्रवण करैं हैं और पण्डितों कूं कुछ देवैं हैं उनकूं लोक जनकके सदृश कहैं हैं और जे पुरुष अकिञ्चन हैं और जिनके यथालाभ सन्तोष है और जे समर्थ पुरुषोंके समीप जावैं मैं इच्छा नहीं करैं हैं और आत्मानुभवतैं आनन्दमग्न हैं और जिनके विवादकी कामना नहीं है और जे अपणें मैं ज्ञानीपणाँ विदित करैं नहीं और जब कृपा करैं तब शीघ्र ही कृतार्थ कर देवैं हैं लोक उनकूं मूर्ख और उन्मत्त जाणैं हैं ।

अब हम अनुभव वाले पुरुषों के किये हुवे उपदेश में ज्यो सिद्ध
पता है वो किञ्चित दिखावें हैं जब हम वेदान्त के ग्रन्थ पढते रहे तब

नायमात्मा प्रवचनेन लभ्यः ॥

इत्यादिक उपे श्रुति तिसका तात्पर्य बहुत पण्डितों से पूछा परं
हमारा हृदय निःसन्देह हुया नहीं एक समय में हमकूं किसी महात्मा
दर्शन हुया तब इस श्रुतिका तात्पर्य उनसें पूछा तब उननें कही कि
तुमारे इसमें सन्देह कहा है सो कहो तब मैंनें प्रार्थना किई कि महात्मा
ये श्रुति शब्दमें तथा बुद्धिमें और बहुत श्रुतमें ज्ञानकी हेतु ताको निषे
करे है और ये कहे है कि जिसकूं ये आत्माहीं अङ्गीकृत करे है वहकूं
इसकी प्राप्ति होय है उसकूंहीं ये आत्मा अपणे स्वरूपका साक्षात्कार क
वे है इसमें मेरे ये सन्देह है कि आत्मामें तो कर्त्तापणां नहीं है ये किस
पुरुषकूं कैसें अङ्गीकृत करे और कैसें अपणों साक्षात्कार करावे तब उनने
हमकूं ये कही कि श्रुति ज्यो है सो परमात्मा का अनुभव है यातें अनुभव
वाले पुरुष ही श्रुति के अर्थमें सन्देह होय उसकूं निवृत्त कर सकें हैं
श्रुति के व्याख्यानमें भाष्यकारकी अक्षरार्थही लिखें हैं येही प्रश्न हमनें हमारे
प्रसिद्ध आचार्यों से किया तब उननें उत्तर दिया सो कहें हैं उननें हमकूं
ये कही कि इस श्रुति की एकवाक्यता

आचार्यवान् पुरुषो वेद ॥

इस श्रुतिसें है देखो

ब्रह्मविद्ब्रह्मैव भवति ॥

ये श्रुति ब्रह्मवेत्ताकूं ब्रह्म वर्णन करे है और

नायमात्मा ॥

ये श्रुति शब्दादिकों में ज्ञानकी हेतु ताको निषेध करिके

यमेवैष वृणुते तेन लभ्यः ॥

ये श्रुति ब्रह्मवेत्ताकूं ब्रह्म वर्णन करै है तो इस श्रुतिका ये तात्पर्य हुवा कि ब्रह्मवेत्ता आचार्य ही जिसकूं अङ्गीकृत करै है उसकूं हीं आत्म लाभ होय है ॥ ऐसें इस श्रुतिका तात्पर्य श्रवण करिकैं हमारा हृदय सन्तुष्ट होगया यातैं हम कहैंहैं कि अनुभववाले पुरुषसैं उपदेश होय तबही आत्मज्ञान होय है ।

ज्यो कहो कि आत्मज्ञान तो स्वतः सिद्ध है आप ऐसें कहो हो तो ये उपदेशतैं कैसें हो सकै तो हम कहैं हैं कि यद्यपि वृत्तिसामान्य के उदय भयें आत्मा स्वप्रकाशता करिकैं अपणां प्रकाश करता हुवा वृत्तिप्रकाशकता करिकैं स्वतः प्रतीत होय है यातैं ज्ञान स्वतःसिद्ध है ये आचार्य के उपदेशतैं होवै नहीं ओर आचार्यभी ऐसैंहीं कहैहै तथापि जैसें जगत् के अनन्त पदार्थांकूं पुरुष देखै है परन्तु जब पर्यन्त आप्त पुरुष के वाक्यतैं उनका उपदेश होवै नहीं तब पर्यन्त उन पदार्थांसें व्यवहार होवै नहीं यातैं ये पदार्थ कार्यकर नहीं हैं तैसें हीं आत्मा यद्यपि सर्वकै ज्ञात है तथापि जब पर्यन्त आचार्य के वाक्यतैं इसका उपदेश होवै नहीं तब पर्यन्त जीवन्मुक्ति सिद्ध होवै नहीं यातैं ये ज्ञान आचार्य के उपदेशतैं होय है श्रुति ऐसें कहै है ।

ज्यो कहो कि अज्ञातज्ञापकता करिकैं शास्त्र ज्यो है सो प्रमाण होय है ज्यो आचार्य का उपदेश ज्ञातज्ञापक होगा तो अप्रमाण होगा तो हम कहैं हैं कि आचार्यका उपदेश अप्रमाण नहीं है काहेतैं कि आचार्य ज्यो उपदेश करै है सो ऐसें करै है कि आत्मा ज्यो है सो इन्द्रिय मन वाणी इनका विषय नहीं है अर्थात् इन करिकैं ज्ञात नहीं है किन्तु इनका प्रकाशक है यातैं आचार्य का उपदेश अज्ञातज्ञापक होवै तैं प्रमाण है ।

ज्यो कहो कि आत्मा अज्ञातता करिकैं ज्ञात है इसमें मेरे किञ्चित् भी सन्देह रहा नहीं परन्तु दुःखप्रतीति की निवृत्ति भयें जीवन्मुक्ति सिद्ध होय यातैं दुःखप्रतीति की निवृत्तिका उपाय कहो तो हम कहैंहैं कि इसकी निवृत्ति का उपाय स्वरूपस्थिति है ज्यो कहो कि आत्मा तो सदा ही स्वरूपस्थित है इसकी स्वरूपस्थिति कैसें होयहै तो हम कहैंहैं कि

तदा द्रष्टुःस्वरूपेऽवस्थानम् ॥

ये योग सूत्र है इसके भाष्यमैं व्यासजीनैं ऐसैं कही है कि ज्ञानअरु की परिणाम हीन ज्यो वृत्ति तामैं साक्षी को स्वरूप करिकैं स्थिति होवे यातैं वृत्तिकूँ परिणाम रहित करो।

ज्यो कहो कि वृत्तिकूँ अचल करणेका उपाय कहा है सो कहो तो हम कहैं हैं कि वृत्तिकूँ अचल करणें के उपाय पतञ्जलि महाराजनैं योग सूत्रमैं अधिकारि भेद तैं बहुत लिखेहैं सो वहाँ देखलेवो और ज्यो ये उपाय नहीं होसकैं तो

यथाभिमतध्यानाद्वा ॥

ये सूत्र उननैं लिखा है इसका अर्थ ये है कि परमात्मा का जैसा स्वरूप अपने इष्ट होय तैसे स्वरूपका ध्यान करिकैं वृत्तिकूँ अचल करो

ज्यो कहो कि अर्जुननैं भी कृष्ण तैं कही है कि

चञ्चलं हि मनः कृष्ण प्रमाथि वलवद्दृढम् ।

तस्याहं निग्रहं मन्ये वायोरिव सुदुष्करम् ॥

इसका अर्थ ये है कि हे कृष्ण ये मन चञ्चल है और प्रमादि अर्थात् आप ही चञ्चल नहीं है किन्तु शरीर इन्द्रिय इनकूँ भी चञ्चल देवे है और प्रबल है और दृढ है इसका ज्यो रोध है तिसकूँ वायु रोधकी तरैं दुष्कर मानूँ हूँ १ और श्री रामचन्द्रनैं वशिष्ठजीतैं भी कहे है कि

इसका अर्थ ये है कि हे कुन्तीके पुत्र अभ्यास करिकैं और वैराग्य करिकैं मनको दमन होय है और पतञ्जलि सूत्र भी येही कहै हैकि

अभ्यासवैराग्याभ्यां तन्निरोधः ॥

और वशिष्ठजीनैं ये कही है कि

दृश्यं नास्तीति बोधेन मनसो दृश्यमार्जनम्
सम्पन्नं चेत्तदुत्पन्ना परा निर्वाणनिर्वृतिः ॥

इसका अर्थ ब्रह्मतैं भिन्न जगत् नहीं है किन्तु सर्व परमात्माहीं है इस ज्ञान करिकैं जिसके मनतैं विषयोंका निवारण हुवा अर्थात् विषयबुद्धि निवृत्त भई उसके मोक्षसुख सिद्ध हुवा १ ये है परन्तु यहाँ ये और समझो कि पुरुष जब मनकूँ एकाग्र करै है तब च्यार उपद्रव होयहैं उस समय मैं सावधान रहै लय १ विक्षेप २ कषाय ३ और रसास्वाद ४ ये च्यार मनकी एकाग्रता करै तब उपद्रव होय हैं अब हम इन च्यारोंके स्वरूप कहैं हैं जब पुरुष मनकूँ थिर करै तब ये सुषुप्तिकूँ प्राप्त होजाय है याकूँ तो लय कहैं हैं १ और जब याकूँ थिर करये लगै तब ये एकाग्र तो होवै नहीं और विषयोंमैं प्रवृत्त होवैहै याकूँ विक्षेप कहैं हैं २ और लय तथा विक्षेप इनकी मध्य अवस्थामैं ये मन समभावकूँ प्राप्त होवै नहीं उसकूँ कषाय कहैं हैं ३ और एकाग्रताकूँ प्राप्त हुवा ज्यो मन तामैं एक विलक्षण आनन्द होय है उसकूँ रसास्वाद कहैं हैं ४ इन उपद्रवों करिकैं रहित ज्यो मन ताकी अवस्थाकूँ सम अवस्था कहैं हैं सो या अवस्था करिकैं मनकी स्थिति करै ॥ ज्यो कहो कि इन उपद्रवों की निवृत्तिके उपाय कहा तो हम कहैं हैं कि इनकी निवृत्ति के उपाय गौडपादाचार्य मैं कहे हैं कि

लये सम्बोधयेच्चित्तं विक्षिप्तं शमयेत्पुनः
सकषायं विजानीयात्समप्राप्तं न चालयेत्
नास्वादयेत्सुखंतत्र निः सङ्गः प्रज्ञया भवेत् ॥१॥

इसका अर्थ ये है कि जब लय होय तब ज्ञानाभ्यास और वैराग्य इन उपायों करिकैं चित्तकूँ बोध करावै और जब काम भोगों मैं विक्षिप्त होय तब इसकूँ शान्त करै और लय लय और विक्षेप इनके मध्य की

अवस्था होय तब रागके बीज करिकें युक्त इसकूं जाणि करिकें इस अवस्था तें बी निवृत्त करै और जब सम अवस्था की प्राप्तिके सन्मुख होय तब अचल करै अर्थात् विषयाभिमुख नहीं करै और ज्यो यहां समाधि सुख होय है उसमें आसक्त होवै नहीं ये इन उपद्रवोंको निवृत्तिके उपाय हैं ॥

जब इन उपद्रवों कूं निवृत्त करदेवै तब अपणे स्वरूपभूत ज्ञान करिकें अपणेकूं जाणैं है यातें हम कहैंहैं कि आत्मज्ञान वृत्ति नहीं है याही तें वृत्तिकूं प्रमा मानैं हैं वे पुरुष अनुभवशून्य हैं ऐसें जाणो इस ज्ञानका स्वरूप गौडपादाचार्यनें लिखा है कि

अकल्पकमजं ज्ञानं ज्ञेयाभिन्नं प्रचक्षते ।
ब्रह्मज्ञेयमजं नित्यमजेनाजं विबुध्यते ॥१॥

इस का अर्थ ये है कि ज्ञान ज्यो है सो अकल्पक है अर्थात् कल्पनायोंतें वर्जित है और वै उत्पन्न होवै नहीं और ब्रह्मवेत्ता इस ज्ञेयरूप कहैं हैं अज और नित्य ऐसा ज्यो ब्रह्म सो ज्ञेयहै यो आत्मरूप ज्ञान करिकें आप ही अपणे कूं जाणैं है ॥ १ ॥

ज्यो कहो कि ऐसा स्वरूप तो मेराही है मोतें भिन्न तो ऐसा स्वरूप प्रतीत होवै नहीं तो हम कहैं हैं कि तुमहीं ब्रह्महो तुमतें भिन्न ब्रह्म ना है ॥ अब हम ये कहैं हैं कि तुम शब्दकूं वृत्तिका कारण मानों अथवा मनकूं वृत्तिका कारण मानों अथवा दोनूं कूं वृत्तिके कारण मानों परन्तु वृत्ति ज्यो है सो ज्ञान नहीं है ये निश्चित जानों ज्ञान तो जिन शब्दादिक विषय और श्रोत्रादिक इन्द्रिय और अन्तःकरण इनसें उत्पन्न भई वृत्तियां इनका प्रकाशक होय है सो है ये ही तुमारो निजरूप है सो आपमें ही आप जाण्यो जाय है ॥ देखो कठोपनिषद् की श्रुति यहां कहै है कि

येनरूपं रसं गन्धं शब्दान् स्पर्शांश्च मैथुनान् ।
एतेनैव विजानाति किमत्र परिशिष्यते एतद्वैतत् ॥१॥

और इस ही उपनिषद्की ये श्रुति है कि

स्वप्नान्तं जागरितान्तं चोभौ येनानुपश्यति ।
महान्तं विभुमात्मानं मत्वा धीरो न शोचति ॥२॥

इनका अर्थ ये है कि रूप रस गन्ध शब्द स्पर्श और मैथुन सुख इन कूँ इससैं हीं जाणैं हैं इसके अविशेष कुछ बी नहीं है ये ही वो है अर्थात् देवादिकौंकूँ बी जिसमैं सन्देह है सो ये ही आत्मा है इससैं भिन्न कोई विष्णुपद नहीं है १ स्वप्न के पदार्थ और जाग्रत के पदार्थ इनकूँ जिससैं देखैहै उस विभु आत्माकूँ जाणिं करिकैं निःशोक होय है २ यातैं हम कहैंहैं कि वृत्ति ज्यो है सो ज्ञान नहीं है ॥ और तुम अपणैं अनुभव तैं बी देखो वृत्ति ज्योहै सो ज्ञान होय तो वृत्तितैं आत्माकी प्रतीति होवै और वृत्ति की प्रतीति होवै नहीं परन्तु जब वृत्ति को उदय होय है तब वृत्ति ही प्रतीत होय है यातैं वृत्ति ज्यो है सो ज्ञान नहीं है।

ज्यो कहो कि साक्षिस्वरूपके निर्णयमैं मेरे कुछबी सन्देह रहा नहीं अब हम भोक्ता किसकूँ मानैं सो कहो तो हम कहैं हैं कि इससे भिन्न कोई भोक्ता नहीं है ये ही भोक्ता है गीता के नवमाध्याय के दशम श्लोकके व्याख्यान मैं भाष्यकार श्री शङ्कर स्वामी नैं कही है कि

सर्वावस्थासु दृक्कर्मत्वनिमित्ताहि सर्वा प्रवृत्तिः

इसका अर्थ ये है कि सर्व अवस्थावौंमैं सर्व प्रवृत्ति परमात्माके प्रकाश मात्र करिकैं है तो ये अर्थ सिद्ध हुवा कि परमात्मातैं भिन्न कोई प्रकाश नहीं है यातैं ये परमात्मा ही भोक्ता है।

ज्यो कहो कि आचार्य ऐसैं लिखैं हैं तो हम एकजीववादमत मा-
ंगे ज्यो कहो कि एक जीववाद की प्रक्रिया कहाहै तो हम कहैं हैं कि
स मत मैं ब्रह्म ज्यो है सो ही प्रधान करिकैं जीव भावकूँ प्राप्तहुयाहै और
गत् के पदार्थौंका परस्पर कार्यकारणभाव नहीं है किन्तु सारे पदार्थ सा-
ात् अविद्याके कार्यहैं जैसैं स्वप्न अथवा शुक्तिरजतादिक हैं अविद्याकी
ृत्तिकरिकैं उपहित ज्यो साक्षी तातैं इनका प्रकाश होय है यातैं सारे प-
ार्थ साक्षिभास्य हैं और ज्ञानाकार तथा ज्ञेयाकार अविद्याका परिणाम एक
ी काल मैं उपजै है यातैं जबपदार्थकी प्रतीति होवै तब ही प्रतीतिका वि-
ष पदार्थ होवैहै या पक्षमैं पदार्थों की अज्ञातसत्ता नहीं है किन्तु ज्ञात
ता है अद्वैतवादिनका ये सिद्धान्त पक्षहै या पक्षमैं सता दोष हैं तीन
ीं हैं काहेतैं कि अनात्मपदार्थ सारे स्वप्नकी तरैंह प्रातिभासिक हैं

यातैं इनकी तो प्रातिभासिकी सत्ता है और ब्रह्म जो है सो परमार्थ सत्य है यातैं ब्रह्मकी परमार्थसत्ता है और प्रतीतितैं भिन्न कालमैं कोई अनात्मपदार्थ नहीं है यातैं इस मतमैं व्यावहारिकी सत्ता नहीं है इस मतमैं प्रमाता और प्रमाण इनका विषय कोई भी नहीं है अन्तःकरण इन्द्रिय और घटादिक सर्व त्रिपुटी एक कालमैं उपजै है तिनका विषयविषयिभाव बनै नहीं जो घटादिक विषय और नेत्रादिक इन्द्रिय ये ज्ञानतैं प्रथम होवैं तो अन्तःकरणकी वृत्तिरूप ज्ञान प्रमाण जन्य होवै सो ये ज्ञानतैं पूर्वकालमैं होवैं नहीं किन्तु ज्ञान समकालमैं हीं त्रिपुटी स्वप्नकी तरहँ उपजै है यातैं त्रिपुटी जन्य ज्ञान कोई भी नहीं परन्तु ज्ञानमैं स्वप्नकी तरहँ त्रिपुटी जन्यता प्रतीत होय है यातैं जाग्रतके प प्रातिभास्य हैं प्रमाणजन्य ज्ञानके विषय नहीं यातैं स्वप्नके समान मिथ्या इस मतमैं वेद गुरु इनका अङ्गीकार नहीं किन्तु चेतन नित्यमुक्त है चेतन अविद्या के परिणाम नानाविध विवर्त होय हैं आत्मा सदा असङ्ग एक है आज पर्यन्त कोई मुक्त हुवा नहीं और अग्रिम काल में कोई भी मुक्त होवै नहीं अविद्या और ताके परिणाम इन का चेतन सें किसी कालमैं सम्बन्ध नहीं यातैं वेद गुरु श्रवणादिक समाधि मोक्ष इनकी प्रतीति स्वप्न की तरहँ मिथ्या है ये इस मतका सिद्धान्त है।

सो हम कहैं हैं कि इस मतमैं जैसे स्वप्न के दृष्टान्ततैं व्यावहारिक सत्ता का त्याग किया तैसैंहीं इस प्रातिभासिकी सत्ताका भी त्याग हो जावैहै कि द्वितीय भागमैं श्रुति युक्ति और अनुभव इन करिकैं प्रविद सिद्ध भई नहीं यातैं प्रातिभासिकी सत्ता भी नहीं है किन्तु एक परमार्थ सत्ता ही मानौं विचार तो करो देखो अपनौं मत तो अद्वैत कहो हो औ सत्ता तीन मानौं हो ॥ ये एक जीववाद की प्रक्रिया साधुजी नैं विचारसागर के षष्ठतरङ्गमैं लिखी है परन्तु

यदा ह्येवैष उदरमन्तरं कुरुते अथ तस्य भयं भवति ॥१॥

ये श्रुति किञ्चित् भी भेद दर्शन होय तो भय होय है ऐसें कही यातैं आत्मासें भिन्न वस्तु नहीं है ये ही समग्र सिद्धान्त है।

आपही सच्चिदानन्द रूप परमात्मा जगत् हुवा है और जीवरूप करिकैं आपही शरीरमैं प्रविष्ट हुवा है देवतोंमैं प्रविष्ट हुवा आप ही

कूं ग्रहण करै है ओर मनुष्यादि शरीरौं मैं प्रविष्ट हुवा आप ही देवपूजा करै है आपही अपणीं रचनाकूं देख करिकैं मोहकूं प्राप्त हुवा है ओर आपही वेदार्थमनन करिकैं स्वरूपभूत ज्ञान करिकैं स्वरूपानन्दानुभव करै है ओर जीवन्मुक्त होय है ऐसें जाणौं।

अब कहो वृत्ति ज्यो है सो ज्ञान नहीं है ये तुमकूं निश्चय हुवा अथवा नहीं ज्यो कहो कि वृत्ति ज्यो है सो ज्ञान नहीं किन्तु ज्ञान तो वृत्ति का वी प्रकाशक है इसमैं मेरै किञ्चित् वी सन्देह नहीं परन्तु निश्चलदासजी ऐसे प्रसिद्ध पण्डित रहे उननैं वृत्तिकूं ज्ञान सिद्ध करवें के अर्थ वृत्ति प्रभाकर नाम ग्रन्थ की रचना कैसें किई सो कहो॥ तो हम कहैंहैं कि उननैं ग्रन्थ दोनूं बणाये हैं सो केवल मतौंकूं भिन्न भिन्न दिखावें के अर्थ बणाये हैं केवल आत्मसाक्षात्कार करायवेमैं उनका तात्पर्य नहीं ज्यो आत्म साक्षात्कार मात्र मैं उनका तात्पर्य होता तो मतजालतैं ग्रन्थोंकूं परिपूरित नहीं करते उननैं ये ग्रन्थ अपणे मैं बहुशास्त्रदर्शिता का बोध करायवे के अर्थ रचे हैं याहीतैं इन ग्रन्थों मैं ये कहीं वी नहीं लिखी है के अब हम हमारा अनुभव कहैंहैं।

ज्यो इन ग्रन्थौं की रचना केवल आत्मानुभव होवैं के अर्थ होती तो ये अपणां अभिमत एकही प्रक्रिया वर्णन करते ओर अन्य प्रक्रियावौंकूं पूर्व पक्षमैं दिखाय पीछैं खण्डन करिकैं अपणां शुद्धानुभव कहते सो ऐसे प्रकार का लेख इन ग्रन्थों मैं नहीं है परन्तु एक उपकार इन ग्रन्थोंतैं अवश्य होय है कि ज्यो इन ग्रन्थों के पढे हुये पुरुषके उत्कट जिज्ञासा होजाय ओर उसकूं अनुभव वाला पुरुष उपदेष्टा मिलजाय तो अपणीं तीक्ष्ण बुद्धिसैं उपदेशकूं धारण कर सकै है।

अब हम ये ओर कहैंहैं कि हमारा उपदेश प्राचीन आचार्यों के कथनतैं विरुद्ध नहीं है किन्तु अनुकूल है देखो ये ऐसें लिखैं हैं कि

अध्यारोपापवादाभ्यां वेदान्तानां प्रवृतिः॥

इस पंक्तिका ये अर्थ है कि अध्यारोप ओर अपवाद इन करिकैं वेदान्तौं की प्रवृत्ति है तो इस कथन का ये तात्पर्य हुवा कि वेदान्त जे हैं ते सच्चिदानन्दरूप परमात्मामैं अविद्या ओर जगत् त्रिकालमैं नहीं हैं तिनकी कल्पना करिकैं पीछैं उनको निषेध करैं हैं ऐसें आत्मानुभव करावैं हैं यातैं वो हमनैं अविद्यादिकौंकूं अलीक सिद्ध किई हैं॥ ओर उनहीं ग्रन्थकारौंनैं

वृत्तौ ज्ञानत्वोपचारात् ॥

ऐसें लिखा है इसका अर्थ ये है कि वृत्तिमें ज्ञानपनें का उपचार है तो इसका ये तात्पर्य हुवा कि वृत्ति ज्यो है सो ज्ञान नहीं है किन्तु इसमें तो केवल ज्ञानपनें का व्यवहारमात्र है यातें हमनें वृत्ति भिन्न ज्ञान का स्वरूप बताया है ॥ अब तुमारे और कुछ प्रश्न होय सो कहो ।

जयो कहो कि जन्मान्तरके विषयमें कुछ निर्णय कहो तो हम पूछें प्रथम तुम अपणाँ अनुभव कहो जयो कहो कि हम तो ये कहैं हैं कि जन्मान्तर नहीं है काहेतें कि जन्मातर नहीं है इसमें ये अनुभव है कि जाग्रत् १ स्वप्न २ सुषुप्ति ३ मुर्छा ४ मरण ५ ये पाँच अवस्थाईं इनमें उत्तरोत्तर अवस्थामें प्रकाश को ह्रास प्रतीत होय है जाग्रत् की अपेक्षा तो स्वप्न में प्रकाश की अल्पता है और स्वप्न की अपेक्षा सुषुप्ति में प्रकाशकी अल्पता है येतो प्रकट ही है अब हम ये कहैं हैं कि सुषुप्ति की अपेक्षा मुर्छा में प्रकाशकी अल्पता है काहेतें कि सुषुप्ति होय तब तो करायें तें बोध होय है और मुर्छा भयें करायें तें बोध होवे नहीं किन्तु स्वतः बोध होय है अब मरनमें मुर्छा की अपेक्षा ये ही विलक्षणता है कि इस अवस्थाके भयें स्वतः भी बोध होवे नहीं तो हम पूछैं हैं जन्मान्तर का विचार तो पीछें करैंगे प्रथम जन्मका कारण कहो है सो कहो ज्यो कहो कि संसार प्रवाह अनादि है इसमें प्रथम जन्म कबभये नहीं ऐसें शास्त्रोंमें निर्णय लिखा है तो हम कहैं कि जन्मान्तर के विषय में प्रश्न हीं असङ्गत हुवा काहेतें कि प्रथम जन्म द्वितीय ज्यो जन्म ताकूँ जन्मान्तर कहैं हैं ज्यो कहोकि हम इस

का दूसरे शरीर में ज्यो प्रवेश ताकूँ शास्त्रोंमें जन्मान्तर कहा है तो हम पूछेँ हैं तुम अन्तःकरण किसकूँ कहो हो ज्यो कहोकि आन्तर सेसुखादिक पदार्थ तिनके ज्ञानका ज्यो साधन सो अन्तःकरण है तो हम पूछेँ हैं आन्तर पदार्थ सो अन्तःकरण ही है इसके ज्ञानका साधन कौन है सो कहो तो तुम येही कहोगे कि इसके ज्ञानका साधन और इसका ज्ञान ये तो साक्षिरूपही हैं सो हम कहैं हैं कि सर्व आन्तर पदार्थोंके ज्ञानका साधन साक्षीहै यातैं ये ही अन्तःकरण हुवा सो इसका दूसरे शरीरमें प्रवेश सम्भवै नहीं ज्यो कहोकि ये आपका कथन तो मेरे वाक्स्तम्भन मन्त्र हुवा जन्मान्तर है अथवा नहीं है इसका अनुभव कैसें होय सो कहो तो हम कहैं हैं कि इसका उपाय योग है यातैं योग साधन करो ॥

और हमारा निश्चय तो ये है कि जैसें गगन मण्डल मैं मेघ होय है सो दृष्टि-करिकैं गगनमैं हीं लीन होजायहै तैसें हीं इस ज्ञानरूप आत्मामैं अनन्त पदार्थ प्रतीत होयहैं और अपणाँ अपणाँ कार्य करिकैं यामैं हीं लीन होजाय हैं ॥

ज्यो कहोकि आपनैं शुद्ध ब्रह्मसैंही सर्वकी उत्पत्ति और शुद्ध मैं ही सर्वका लय कहा है सो यह कौनसे आचार्यका मत है तो हम कहैं हैं कि यह मत नहीं है किन्तु ब्रह्मसम्पन्न पुरुषोंका अनुभव है देखो श्रीकृष्ण महाराज नैं गीताके त्रयोदश अध्याय मैं कहीहै कि

> यदा भूतपृथग्भावमेकस्थमनुपश्यति
> तत एव च विस्तारं ब्रह्म संपद्यते तदा ॥१॥

इसका अर्थ ये है कि जब भूतौं के पृथग्भाव कौं एक ज्यो ब्रह्म तामैं स्थित देखता है और उससैं हीं विस्तार कहिये उत्पत्तिकूँ देखता है तब ब्रह्म सम्पन्न होता है यातैं हम कहैं हैं कि यह ब्रह्मसम्पन्न पुरुषों का अनुभव है मत नहीं है ॥ ज्यो कहो कि इस श्लोक मैं ब्रह्म तैं उत्पत्ति तो कही है परन्तु ब्रह्म मैं लय कहा नहीं तो हम कहैं हैं कि उत्पत्ति के कथन तैं लय तो स्वतः प्राप्त है जैसें घट पृथ्वी तैं उत्पन्न होय है सो पृथ्वी मैं हीं लीन होय है अब तुम्हारे और कुछ प्रष्टव्य होय सो कहो ।

ज्यो कहो कि ज्ञानवानोंका व्यवहारकहो तो हम कहैं हैं कि देशकाल शरीरादि सामर्थ्य इनकूँ देखि कैं स्वानुकूल सुख सर्व कौं होय तैसें

व्यवहार करैं हैं और आत्मानन्दानुभव तैं अलपभावी होय हैं और सर्वको आत्मरूप समुझि कैं किसीका भी तिरस्कार नहीं करैं हैं ॥

ज्यो कहो कि ज्ञानका फल जीवन्मुक्ति है अथवा विदेहमुक्ति है तो हम कहैं हैं कि विदेहमुक्त तो सर्व हैं ज्ञान का फल जीवन्मुक्ति प्रधान है ॥

ज्यो कहो कि जीवन्मुक्तिका स्वरूप कहो तो हम कहैं हैं कि दुःखादि उपद्रव के कालमैं भी निज स्वरूप की दृष्टि की अनवृत्ति ही जीवन्मुक्ति है ज्यो कहो कि कितनैं ही पुरुष वेदान्त को अभ्यास करिकैं साधु विद्वानों का तिरस्कार करैं हैं और मोद मानैं हैं ये अनुभवी हैं अथवा नहीं तो हम कहैं हैं कि ऐसे पुरुषों के विषय मैं प्राचीन विद्वानों नैं लिखा है तिसका अन्वेषण करो यह लेख ऐसे पुरुषों के अत्यन्त क्षोभ जनक है यातैं कहिये योग्य नहीं परन्तु ये अनुभव शून्य हैं ऐसैं जानो ॥

ज्यो कहो कि आप अदृष्ट मानो हो अथवा नहीं तो हम कहैं हैं कि अदृष्ट यह आत्मा है काहेतैं कि यह दृग्विषय नहीं है किन्तु दृष्टा है ऐसैं जानो ॥

ज्यो कहो कि शरीर मैं प्रवेश से मुख्य क्यो जीवभावापन्न परमात्मा

अबाधकं साधकं च द्वैतमीश्वरनिर्मितम्
अपनेतुमशक्यं चेत्यास्तां तद्द्विष्यते कुतः॥१॥

इसका अर्थ ये है कि परमात्म रचित जगत् बाधक नहीं है गुरु वेदादि प्राप्ति तैं ज्ञान का साधक है और तू इसकूं निवृत्त भी नहीं कर सकै है यातैं तू इससैं विद्वेष काहेकों करै है १ ज्यो कहो कि जीव कल्पित जगत् कहा है तो हम कहैं हैं कि जीव कल्पित जगत् दोयप्रकारका है एक तो अशास्त्रीय है और दूसरा शास्त्रीय है इनमैं अशास्त्रीय भी दोय प्रकार का है एक तो तीव्र दूसरा मन्द, काम क्रोधादिक तीव्र है और मनोराज्य मन्द है ये दोनूं ज्ञान तैं पूर्व त्याज्य हैं और शास्त्र चिन्तनादिक शास्त्रीय जगत है ज्ञान के उत्तर ये भी त्याज्य है इन दोनूं के त्यागतैं जीवन्मुक्ति मानैं हैं और ईश्वरकीमायाकों जीवकी मोहक मानैं हैं और ज्ञान सैं मोह की निवृत्ति मानैंहैं ।। तो हम कहैं हैं कि ये प्रक्रिया पञ्चदशी के द्वैतविवेक में अनुभव सैं लिखी है सो समीचीन ही है परन्तु इसकातात्पर्य ऐसैं समझो कि वेदनैं शरीर मैं परमात्माका प्रवेश कहा तो जीव ही परमात्मा है इनका बनायाँ कार्यब्रह्म कयो जगत् सो ही मायाहै इसनैं याकों मोहित नहीं कियो किन्तु इसकूं देखि कर ये जीवभावापन्न परमात्मा ही स्वयं मोहित भयो है जवो ये याकूं मोहित करै तो इसके मोहनिवृत्ति सम्भवै नहीं काहेतैं कि जो इसके प्रमाद सैं मोह नहीं होतो तो वेद इसकूं मोह निवृत्ति के यत्न को उपदेश नहीं करतो जैसैं भूप नैं बध्द कियो ज्यो पुरुष ताकूं कोई भी छूटवे के यत्न को उपदेश नहीं करै है ज्यो कहो कि कोई आचार्य आत्मा मैं अविद्या का त्रैकालिक अभावभी कहै है और जगत् कों अकारण भ्रम कहै है और दुःखरूप भी कहै है सब का तात्पर्य कहा है सो कहो तो हम कहैं हैं ये वशिष्ठ का मत है योगवाशिष्ठ के निर्वाण प्रकरण मैं पाषाणाख्यायिका स्थल मैं श्रीरामचन्द्र कों वशिष्ठनैं कही है कि

अज्ञानमपि नास्त्येव प्रेक्षितं यन्न लभ्यते
विचारिणा दीपवता स्वरूपं तमसो यथा॥ १॥

इस का अर्थ ये है कि अज्ञानभी नहीं ही है विचार वाला का देखा दीखता नहीं जैसें दीप वाले का देखा तम नहीं दीखता है १ यहीह-

मनें तेरेकूँ यो विचार कह्या है जिस सें अविद्या का त्रैकालिक अभाव सि
द्ध होय है और विचार सागर तथा वृत्ति प्रभाकर ये अनुभव ग्रन्थ नहीं है
यातें हीं इन में ये विचार नहीं है किन्तु ये तो अविद्या की सिध्दि के
विचार सें पूर्ण हैं यातें हम नें स्वानुभव सें इस विचार का ख
रडन किया है और यहाँ हीं वशिष्ठ नें ऐसें कही है कि

अहंभावपिशाचोऽयमज्ञानशिशुना विना
अविद्यमान एवाऽन्तः को कल्पितस्तेन सुस्थितः॥१॥

या श्लोक में अज्ञान विना हीं अविद्यमान अहंभाव की कल्पना क
ही है यातें कितनें हीं वेदान्ती अकारणक जगदुत्पत्ति मानें हैं प
रन्तु कारण विना कार्य संभवै नहीं ये सर्वानुभव सिध्द है यातें
सर्व मूलकारणक है यातें हीं यहां हीं वशिष्ठ नें ऐसें कही है कि

ब्रह्म शान्तं घनं सर्वं क्वाहङ्कारादयः स्थिताः
अहंभावस्य संशान्तिरित्येषा कथिता तव॥१॥

१

जगत् अस्ति ॥

ये प्रतीति होय है तैसें

जगत् भासते ॥

ये बी प्रतीति होय है अब ओर कुछ मन्तव्य होयसो कहो ज्यो कहो कि वेदान्तग्रन्थों मैं दृष्टिसृष्टिवाद लिखा है उस का सिद्धान्त कहा है सो कहो तो हम कहैं हैं कि अविद्यावादी तो दृष्टिसृष्टिशब्द का समास ऐसें करैं हैं कि

दृष्टिसमकालीना सृष्टिः ॥

ओर दृष्टिशब्दार्थ वृत्ति कौं मानैं हैं यातैं संसार कूँ मिथ्या कहैं हैं ओर अनुभवी पुरुष दृष्टिसृष्टि शब्द का समास ऐसें करैं हैं कि

दृष्टिरेव सृष्टिः ॥

ओर दृष्टिशब्दार्थ स्वरूप भूत ज्ञानकूँ कहैं हैं यातैं सृष्टि कौं तद्रूप कहैं हैं सो हमनैं कहा है ज्यो कहो कि अविद्यावाद के ग्रन्थ आप के उपदेश मैं सर्व अनुपयुक्त है अथवा कोई अंश उपयुक्त बी है तो हम कहैंहैं कि अध्यारोपकेविना अपवाद संभवै नहीं यातैं ऐसैंसमुझो कि अविद्यावाद मैं अविद्या सैं आदि लेकैं मुक्तिपर्यन्त आरोपित हैं ओर हमारा उपदेश अपवाद रूप है यातैं सर्व उपयुक्त हैयद्यपि अविद्यावाद के ग्रन्थों मैं कहीं अपवाद बी है परन्तु उस मैं युक्ति अनुभव प्रमाण विस्तार सैं कहे नहीं यातैं अपवाद अनुभवारूढ होवै नहीं यातैं हमारा उपदेश बी अविद्यावाद मैं उपयुक्त है ज्यो कहो कि ऐसें दोनूँ मैं सम प्राधान्य होगा तो हम कहैं हैं कि अनुभवी पुरुष अविद्यावादकूँ मानैं नहीं यातैं अविद्यावाद अप्रधान है ॥

अब हम ये विचार करैं हैं कि कितनैं ही उपासकों का ये सिद्धान्त है कि आत्मज्ञान भयैं तैं पुरुष उपासना का उत्तम अधिकारी है ओर परमात्मा तैं अभिन्न होवै नहीं ज्यो ज्ञान भयैं तैं परमात्मा सैं अभिन्न हो जावै तो जैसें अपणा स्वरूप शुद्ध सच्चिदानन्द अखण्ड नित्यमुक्त प्रतीत होय है तैसें व्यापक बी प्रतीत होणाँ चाहिये सो होवै नहीं इस का उत्तर हम ये कहैं हैं कि जब आत्मज्ञान हो जावै ओर अपणैं स्वरूप मैं व्यापकताकी प्रतीति

चाहै तो उसकों उचित है कि अल्प और स्थिरतो व्यवहार करै और यु
हार विहार रहै और ब्रह्मचर्यका सेवन करै और प्रहर रात्रि शेष रहै
पद्मासनसें स्थित होकर श्वासोच्छ्वास मैं अजपाको अनुसन्धान करै जब
सें वृत्ति स्थिर होय तब नेत्रोंका निमीलन करिकैं भ्रूमध्य मैं ऊपर की त
लगावै और वहाँ शनैः२ दृष्टिके ठहरने का अभ्यास बढावै इस अभ्यास
शीघ्रता उन्मादहेतु है और शिरोव्यथा कारक है और ब्रह्मचर्यका त्य
कम्पजनक है आहारवैषम्य रोगजनक है यातैं पूर्वोक्त नियमों का त्य
नहीं करै जब ये अभ्यास बढै है तब याकूँ प्रथम अन्धकार मैं विस्फुलि
प्रतीत होय हैं पीछैं तनका पास कहां चन्द्रमण्डल प्रतीत होय है पु
शनैः २ अभ्यास बढायें केवल प्रकाश प्रतीत होय है यो प्रकाश नील ह
रक्त शुक्ल पीत ऐसें पञ्चविध अनियत प्रतीत होय है जब यहाँ विघ्नों
संभव है यातैं सावधान रहै भय मोद आश्चर्य इनके वश नहीं हो
भयानक के दर्शनसें नेत्रोंका उन्मीलन नहीं करै और भोग्य स्थान ग
विचित्र भोग सामग्री तथा भोग प्रार्थना करती रूप यौवन सम्पन्न ?
इनकों देखकर आसक्त नहीं होवै इनकों केवल विघ्न ही समुझै ऐसे
रो २ जब ये तो दीखै नहीं और उस प्रकाशमैं स्वेष्ट सगुण मूर्त्तिका दर्श
होय तब वृत्तिकों उस मूर्त्ति मैं स्थिर करै ऐसे करतेरपद्ध साधक पुरुष वीण
सारंगी इनका मधुर शब्द सुनै है ऐसें सुनते २ मेघगर्जन अथवा घण्टानाद
[illegible]

मुक्ति का आनन्द पावै है जिस पुरुष के स्वरूप की पूर्णता मैं सन्देह
ाप वो पुरुष इस अभ्यासकौं करै और जिसके हमारे पूर्वकृत उपदेशसैं
न्देह निवृत्त हो जाय सो इस अभ्यासकौं नहीं करै सन्दिग्ध जीवन दुःख
ा हेतु है ॥

ज्यो कहोकि परलोक है अथवा नहीं तो हम कहैंहैं कि लोकशब्द ज्यो
है सो लोकृदर्शने धातु सैं निष्पन्न है यातैं लोक यही है ये सर्व पदार्थों
ं पर है यातैं परलोक है परलोक शब्द का अर्थ परज्ञान है परज्ञान श-
द् का अर्थ पर कहिये उत्कृष्ट ऐसा ज्यो ज्ञान अर्थात् सर्व का प्रकाशक
यो ज्ञान सो ये है तो परलोक ये आत्मा हीं है अब तुमारे और कुछ प्रष्ट-
य होय सो कहो ।

ज्यो कहो कि आपनैं ज्ञान के साधन पूर्व तीन कहे तिन मैं स्थिर
ील व बुद्धि और उत्कट जिज्ञासा येतो हो सकैं हैं परन्तु तत्त्वसाक्षात्कार
ाले गुरु का लाभ दुर्लभ है यातैं मुक्ति का मार्ग कोई अन्य भी है अथवा
हीं तो हम कहैं हैं

दोहा ।

ज्ञान धरण हरि पद शरण, मरण शम्भु पुर मांहिं ।
अयन तीन हैं मुक्ति के चोथो मारग नाँहिं ॥ १ ॥
हरि पद रति काशी मरण, लहे दोयतें ज्ञान ।
ज्ञान मुक्ति को रूप है ये निश्चय करि जान ॥ २ ॥
ज्ञानसिद्ध उपदेश शुभ शिष्य विमल मति पाय ।
कहन लग्यो कर जोरि कैं, परमानन्द समाय ॥ ३ ॥
वृत्ति प्रभाकर हू पढ्यो, विचार सागर पेखि ।
भयो न तउ कृतकृत्य मैं, निज आतन कों लेखि॥४॥
ताको प्रभु उद्धार करि, दीन्हों आतम ज्ञान ।
अब मोकूँ मैं अरु, जगत होत इहाहीं भान ॥ ५ ॥

चौपाई ।

धर्म नगर को मैं हूँ भूपा । जाकी धरणी परम अनूपा ।
जहाँ धर्मको नित उपदेशा । पट ईतिनको जहाँ न लेशा॥६॥
प्रजा सकल सुख में सरसाई । अपणें अपणें धर्म लगाई॥
नाग वाजि रथ वल अनगिनती ।वहुत भूप नित करते विनती॥७
जीते देव असुर नर नागा । जुधमें कोउ न सम्मुख लागा॥
तीन लोक के धनकूँ लाई । कोपराज को दियो भराई॥८॥
देवनारि मो चँवर दुरावे । नित गन्धर्व मोय गुन गावे ॥
यज्ञ किये मैंनें वहु भांती । भोजन दिये करा दुज पांती॥९॥
देइ दक्षिणा दुजगन पोष्यो ।तऊ न मो मन अति सन्तोष्यो॥
आप कृपा करि किय उपदेशा । तातें मेट्यो सकल कलेशा॥१०॥
गहि उपदेश ज्ञानकूँ पायो । भेट राज ये चरण चढायो ।
ज्ञाव सिद्ध या विध सुनिवानी । शिष्यभक्ति नीकी करिजानी॥११॥

दोहा ॥

गुरु बोले शिष्यकूँ वचन भेट लई मैं मानि ।
नीकी विधि करि राजकूँ याकूँ मेरो जानि ॥१२॥

चौपाई ॥

ज्यो कछु होइ हानि या माहीं। तनकछु सोच चित्तमहिं नाहीं
लाभ होय तो हर्ष न कीजे। कोप हमारे ताहि परीजे॥१३॥
कर्त्ता कर्म क्रिया जे होई । ब्रह्मरूप करि सबहूं जोई ॥
ज्यों दानि अरु लेवन हारो। ब्रह्मरूप ये सुनि निरधारो॥१४॥

दोहा ॥

या विधि सुनि गुरु को वचन शिष्य [illegible]॥
गुरु के चरणन भेटिके गयो आप के धाम ॥१५॥

चौपाई ॥

है जयनगर जगत विख्याता। जहाँ नृपति माधव सुखदाता॥
वसे तहाँ दध्यच ऋषिवंसा। सकल विप्रकुलकोअवतंसा॥१६॥
नन्दराम तामैं उपजायो। हरिभक्तनमैं ज्यो सरसायो॥
गोत्र ताहि काश्यप यह जानौं।डेरोल्या अवटङ्क पिछानौं॥१७॥
मालीराम भयो सुत ताके। भई सुन्दरी वनिता वाके॥
दोनूँ कृष्ण भक्तिरस पाये। तिनतैं दोय पुत्र उपजाये॥१८॥
गङ्गाविष्णु पूर्व सुत जानहु। दूजो गोपीनाथ पिछानहु॥
गङ्गाविष्णु भक्तिपरवीना। दूजो ज्ञान भक्तिरस लीना॥१९॥

दोहा ॥

गुरुतैं आतम बोध लहि रहत सदा आनन्द।
कृष्ण चरण जुग कञ्जको पिवत रहत मकरन्द॥२०॥
तापैं गुरु करिकैं कृपा दियो स्वानुभव ग्रन्थ॥
जहाँ अविद्याको न मल शुद्ध मोक्षको पन्थ॥२१॥
गहि ताकूँ तातैं रच्यो यहै स्वानुभवसार॥
मनन करत थाको पुरुष सहज लहत निसतार॥२२॥
पाँच कोश त्रिपुटी सकल तीन अवस्था ज्योइ॥
तिन्हैं प्रकाशत कृष्ण है मेरो आतम सोइ॥२३॥
दीसत जातैं सकल यह यह जाकूँ न लखात॥
यहै कृष्ण निजरूप है आपहितैं वरसात॥२४॥
उगणीसैं चालीस अरु दोय (१९४२) वर्ष यह जानि॥
पुरुषोत्तम के मासमैं ज्येष्ट कृष्ण पहिचानि॥२५॥

तेरसि (१३) अरु गुरुवारमें नीको ग्रन्थ बणाय ॥
कृष्ण चरण जुग कञ्जमें दीन्हों याहि चढाय॥२६॥

इति श्रीजयपुरनिवासिद्धींचिवंशोद्भवडेरोल्यायटङ्क पण्डित गोपीनाथ
विरचिते स्वानुभवसारे वेदान्त मुख्य सिद्धान्ते श्री
ज्ञान सिद्ध गुरूपदेशे ज्ञानस्वरूप विवेचने तृतीयो
भागः॥३॥ समाप्तोयं ग्रन्थः सम्वत १९७२
का द्वितीय ज्येष्ट कृष्ण १३ गुरुवार
॥ शुभं भवतु ॥

स्वानुभवसारका निष्कर्ष ॥

द्वैत दृष्टि की निवृत्ति वेदान्त शास्त्र का मुख्य रहस्य है सो सर्वत्र चिद्दृष्टिभये बिना हो सकै नहीं यातैं विद्वानों नैं नाना विध प्रक्रियाओं की कल्पना किई है परन्तु जगत् की रचना ऐसी विलक्षण है कि इस के वर्णन मैं बडे२ विद्वान् मोह कों प्राप्त होय हैं और जे अनुभवी पुरुष हैं वे सर्वत्र चिद्दृष्टि सिद्ध करिकैं आनन्द मग्न रहैं हैं और तूष्णीम्भाव राखैं हैं इस मैं कारण यह है कि अज्ञ और तज्ज्ञ इन की दृष्टि समान नहीं होय है अज्ञ की दृष्टि मैं जो जगत् भासै है सो मिथ्या है और तज्ज्ञ की दृष्टि मैं जो जगत् भासै है सो वाग्गोचर अद्वितीय ब्रह्म रूप है देखो योगवाशिष्ठ के निर्वाण प्रकरण मैं उत्तरार्द्ध मैं १९० को रामविश्रान्ति नाम सर्ग है इस मैं वशिष्ठ नैं रामचन्द्र सैं कही है कि

यादृक् स्यादज्ञविषयं जगत्तस्य न सत्यता ।
यादृक् च तज्ज्ञविषयं तदनाख्यं यदद्वयम् ॥

इस का अर्थ यहहै कि जैसा जगत् अज्ञानीका विषयहै सो सत्य नहीं है और जैसा जगत् ज्ञानीका विषय है सो वाणी का अविषय अद्वय ब्रह्म है जो कहो कि सर्व वेदान्त ग्रन्थन मैं जगत् कों भ्रान्ति रूप कहा है और वशिष्ठ नैं जगत् कों सद्ब्रह्म रूप कहा है सो इस मैं अनुभव कहो तो हम कहैं हैं वहां हीं वशिष्ठ नैं ऐसैं कही है कि

अकारणत्वात्सर्वत्र शान्तत्वाद्भ्रान्तिरस्ति नो ।
अनभ्यासवशादेव न विश्राम्यति केवलम् ॥

इस का अर्थ यह है कि कारण के अभाव सैं और सर्वत्र शान्तता सैं भ्रान्ति नहीं है अनभ्यास वश सैं हीं केवल विश्राम कौं पावै नहीं घे वहां हीं ऐसैं कहा है कि

कारणाभावतो राम नास्त्येव खलु विभ्रमः ।
सर्वं त्वमहमित्यादि शान्तमेकमनामयम् ॥

इस का अर्थ यह है कि भ्रमकारण के अभाव सैं भ्रम है ही नां त्वम् अहम् इत्यादिक सर्व जो है सो शान्त निर्दोष एक ब्रह्म है जो कहै कि ऐसैं कहो तो अभ्यास भ्रान्ति कहां सैं उपस्थित भई तो हम कहा कां वशिष्ठ नैं हीं कही है कि

अभ्यासभ्रान्तिरखिलं महाचिद्घनसघतम् ॥

इसका तात्पर्य यह है कि जिस कौं तू अभ्यास भ्रान्ति कहै है सो अखण्ड चैतन्य घन है जो कहो कि अहं त्वं इन कौं बोध रूप मानोंगे तो बोध मैं भेद मानना होगा सो निर्मल आत्मा मैं सम्भवै नहीं तो हम कहैं हैं कि इस का उत्तर वशिष्ठ नैं यह कहा है कि

यत्तद्वोधस्य वोधत्वं तदेवाऽहं त्वमुच्यते ।
द्वित्वमत्राऽनिलस्पन्दद्दशोरिव निगद्यते ॥

इस का अर्थ यह है कि जो बोध को बोधत्व है सो ही अहंत्व है यहां जो द्वित्व है सो अनिल और स्पन्द इन की दृष्टियों की तरह है जो कहो कि चित्त के होनें तें जगत् भासै है और चित्त के नहीं होनें तें जगत् भासै नहीं यातें जगत् चित्तरूप है तो हम कहैं हैं कि

चितश्चेत्योन्मुखत्वं यत्तच्चित्तमिति कथ्यते ।
विचार एव परातो वासना तेन शाम्यति ॥

ऐसैं वशिष्ठनैं हीं कहा है यातें चित्स्वरूप हीं चित्त है यह ही विचार है इसीं हीं वासना की शान्ति होय है जो कहोकि अनिल और स्पन्द यह भिन्न हैं एक नहीं हैं तैसैं हीं बोध और बोध्य जगत् यह भी भिन्न हैं एक नहीं हैं तो हम कहैं हैं कि अनिल और स्पन्द जैसा भासै और जैसा इनमें भेद होता तो वशिष्ठ ऐसैं नहीं कहते कि

न ज्ञानज्ञेययोर्भेदः पवनस्पन्दयोरिव ॥

यातें ज्ञान और ज्ञेय एक हैं जो कहो कि चित्तकों चिरस्फुरण रूप विचारें वासना की शान्ति कैसें होय तो हम कहैंहैं कि जो चित्त चिद्रूप हुवा तो सर्व चित्तमय है यातें सर्व विश्व चिद्रूप हुवा जो सर्व चिद्रूप हुवा तो जगद्रूप विषयके अभावसें वासनाका उदय कैसें होसके जो कहोकि चिद्वासना का तो उदय होगा तो हम कहैं हैं कि चिद्वासना जो है सो जी वन्मुक्ति और विदेह मुक्ति दोनोंकी साधक है यातें इसके होनें तें हानि नहीं है

परंतु यहां यह और समुझो कि यौक्तिक मतमें तो जगत्कों बाधदृष्टिसें ब्रह्म रूप कहाहै और बाधदृष्टिके विना जगत्कों ब्रह्मरूप माना है उसकों प्रतीक उपासना कहीहै इसमें कारण यहहै कि यौक्तिक मतमें जगत्कों जड और अविद्या कल्पित माना है यातें जगत् ब्रह्मरूप हो सकै नहीं और जगत्कों ब्रह्मरूप बहुत श्रुतियोंमें कहाहै यातें वहां ऐसें व्याख्यान किया है कि जैसें शालग्रामका चतुर्भुज विष्णुरूप करिकैं वर्णन है तैसें जगत्का ब्रह्मरूप करिकैं वर्णन है और वस्तुगत्या बाधदृष्टिसें जगत ब्रह्मरूप है सो यह व्याख्यान अनुभवी पुरुषों के संमत नहीं है काहेतें कि वे केवल श्रुति के अनुकूल अनुभव करैं हैं और अविद्याका उन कै त्रैकालिक अभाव है यातें वे जगत् कों चिरस्फुरण मानैं हैं यातें वो यौक्तिक मताभिमानी पुरुषोंसें विवादका त्याग करिकैं जीवन्मुक्तिका आनन्द भोगैं हैं और अपनें सदृश अनुभवी मिल जायहै तो एकान्तमें जिस अनुभव सें अविद्याका त्रैकालिक अभाव है उस अनुभव कों आनन्दपूर्वक प्रकट करैं हैं अथवा योग्य जिज्ञासु पुरुष उपस्थित होय तो उपदेशसें उसकों कृतार्थ करैं हैं ।

और यौक्तिक मत उपासकों के भी संमत नहीं है काहेतें कि जे दृढ उपासकहैं उनके शालग्राममें अथवा मूर्त्तिमें पाषाण बुद्धि होवै नहीं किन्तु उपास्य बुद्धि ही होयहै यातें ही सगुण ब्रह्म के उपासकों कों शालग्रामिं उपास्य रूप सें प्रतीत भई है और पूर्ण उपासकोंकों स्वस्थातिरिक्त चराचर में सच्चिदानन्द बुद्धि होय है और जगद्बुद्धि होवै नहीं जो कहो कि ऐसे उ- होगे तो ज्ञानी और उपासक में भेद कहाहै तो हम कहैंहैं कि भेददर्शन हीं भेद हेतु है तात्पर्य यहहै कि इन उपासकोंके उपास्य और उपासक इन

मैं भेदबुद्धि रहैहै और जे अभेदसें उपासना करैं हैं वे केवल यौक्तिक म
अनुकूल जगत्कों माया कल्पित और जड मानैं हैं और वेदान्तोंके सि
र्सें सर्वकी ब्रह्मरूपतासैं उपासना करैं हैं तो इस लेखका यह तात्प
हुया कि यौक्तिक मत उपासकों की संमत नहीं है।

और अनुभवी पुरुषों का कथन सर्व उपासकों के अविरुद्ध है क्यों
कि वे जिसकें उपास्य मानैं हैं अनुभवी पुरुष भी उसकों चिद्घनही
हैं और वेभी उपास्यकों चिद्घनरूप ही मानैं हैं जो कहो कि इस सम
के पुरुष उपासक हैं उनकों तो तत्तन्मूर्त्ति उपास्य रूपसें प्रतीत होवैंन
इसमें हेतु कहाहै तो हम कहैं हैं कि इस समय मैं तो बहुधा उपास
नहीं हैं किंतु उपासकाभास हैं यातैं हीं केवल तिलक मालाके ही प्रप
मैं लीन रहैं हैं और भक्तिलीन होयैं नहीं और जे उपासनामैं दृढ हैं उ
कूं तत्तन्मूर्त्ति उपास्य रूप ही प्रतीत होय है परंतु वे स्वकीय सिद्धि
प्रकट करैं नहीं और बाह्य चिन्हों के धारणमें आग्रह करैं नहीं और स
त्र उपास्य भाव सैं नम्र रहैं हैं ऐसैं यौक्तिक मत अनुभवी पुरुषों के सं
मत नहीं है तथापि इसके अभ्यास करनें वालेके जैसें अनुभवीका उप
योग हृदयारूढ होय है तैसें अन्यके हृदयारूढ होवै नहीं यह इस मत
परम गुण है यातैं हीं अनुभवी पुरुष इसकी प्रवृत्ति के प्रतिबंधा
नहीं हैं।

और अनुभवी पुरुषों मैं यह विलक्षणता और है कि जे उपासक हैं तो
परिरूपत् [illegible] उपदेशसैं हीं ब्रह्मविद्या करायदेवैं हैं कारण यह है कि
याकृष्णमान्यकों उपनिषद्रूप देखें हैं इसही कारणसैं इस ग्रन्थके प्रथम भा
मैं न्याय मत विवेचन मैं हीं शिष्यकों ब्रह्मविद्याकी प्राप्ति वर्णन किी है
और इस ग्रन्थ के द्वितीय भागमैं तथा तृतीय भागमैं यौक्तिक मतानुयायी
पुरुषोंके अनुभव मैं और अनुभवी पुरुषोंके अनुभवमैं जो वैलक्षण्य है सो
दिखाया है और यौक्तिक मतवादका खण्डन ऐसा विलक्षण प्रकारसैं कि
या है कि जिसमैं मताभिमाननिवृत्तिपूर्वक निःसंशय आत्मसाक्षात्कार हो
कर पुरुष कृतार्थ होजावै और इन भागों मैं अविद्याके [illegible]
[illegible] है इसमैं हेतु यह है कि [illegible]
मतकौ अर्थात् यौक्तिक मतकौ लेकर [illegible] है [illegible]
[illegible]

उन हीं ग्रन्थों में लेखहै तो अविद्याके अवलम्बन सैं तत्वसाक्षात्कार वाले पुरुष कौं उपदेश कैसें हो सकै यातें अविद्याखण्डनपूर्वक उपदेश है ।

और आवरणभङ्ग वृत्तिज्ञानका फल है जो आवरण हीं नहीं तो वृत्ति ज्ञानका मॉंननॉं निष्फलहै यातें वृत्तिज्ञान खण्डन पूर्वक स्वरूप भूतज्ञान कहाहै ।

जो कहोकि चित्स्वरूप प्रकाशक है और जगत् प्रकाश्य है तो इन अभेद कैसें मान्यॉं जाय तो हम कहैं हैं कि सूर्य और जगत् के पदार्थ निमें प्रकाशकत्व और प्रकाश्यत्व इनके होतें भी जड मानों हो तैसें हीं चेतस्वरूप और जगत् इनकौं भी ब्रह्मरूप मानों जो कहोकि प्रकाशकताकी तीति के विना विश्वकौं चिद्रूप मानसकैं नहीं तो हम कहैं हैं कि विश्व ग्रूप स्फुरण विना आत्मा मैं प्रकाशकताकी प्रतीति होवै नहीं यातें वि- कौं आत्मा की प्रकाशकताका प्रकाशक मानि करिकैं संतोष करो ता- पर्य यह है कि जैसें आत्मा विश्वका प्रकाशक है तैसें विश्व आत्मा का प्रकाशक है यातें विश्व ब्रह्मरूप है और यातैंहीं आत्मा स्वप्रकाश है स्व कहिये स्वरूपसैं अभिन्न जो विश्व तद्रूप सैं प्रकाशै है सो स्वप्रकाश यह स्वप्रकाशशब्दका अर्थहै तो यह सिद्ध होगया कि विश्व चित्प्र- काश रूप है जो कहो कि जगत् आत्मामैं जो प्रकाशकता है तिसका प्रका- शक है आत्माका प्रकाशक नहीं है तो हम कहैं हैं कि आत्मा मैं जो प्रका- शकता है सो आत्म रूप ही है जो कहो कि प्रकाशकता तो धर्मरूपहै यातैं जड है और आत्मा चित् है तो प्रकाशकता आत्मरूप कैसें हो सकै तो हम कहैं हैं कि अविद्योपादानक पदार्थ जड होयहै जो अविद्या है ही नहीं तो प्रकाशकता जड कैसें हो सकै यातें चिद्रूपही है ।

जो कहो कि जगत् बाह्य है और ब्रह्म चित् आन्तर है यातें जगत् ब्रह्म होसकै नहीं तो हम कहैं हैं कि बाह्य आन्तर भाव होय तो आत्मा परिछिन्न सिद्ध होवै सो तो यौतिकमतावलम्बियोंकै भी संमत नहीं है यातैंहीं वशिष्ठनैं कही है कि

वाह्यश्चाभ्यन्तरश्चाऽर्थो न संभवति कश्चन ॥

जो कहो कि ऐसें कथनसैं तो यह सिद्ध होय है कि तुम्हारी दृश्य- ताकौं प्राप्त होयहै तो हम कहैं हैं कि

इस वाक्य सें श्री कृष्ण नें दुर्लभ कहेहैं और हमनें इस मतका खण्डन किया है सो अनुभवांश मैं नहीं है किंतु प्रक्रियांश मैं है पूर्व पक्ष के जैना सिद्धान्त होसकै नहीं यातें इसके मतांश की प्रक्रिया पूर्वपक्षमें कही है विरोधसें नहीं कही है यातें हीं रामसौभाग्यशतक मैं वादांश का त्याग करिकैं यौक्तिक मतके सारांश वर्णन सें आत्मसाक्षात्कारका वर्णन हमनें हीं किया है ॥

इस ग्रन्थ की दोय टीका हैं एक तो संक्षिप्त संस्कृत टीका है और द्वितीय भाषा टीका है इस ग्रन्थके आदि मैं यह २० प्रश्नहैं कि

कोधर्मः १ किं फलं तस्य २ हेयं किं ३ ध्येयमस्ति केम् ४ कर्त्तव्यं किं सदा नृणां ५ जेयं ६ ज्ञेयं च किं भवे-[७ का हानिः ८ कः परो लाभः ९ किं ज्ञानं १० तस्य-साधनम् किं ११ ज्ञानं कारयेत्कश्च १२ कस्मिन् दृष्टे कृतार्थता १३ को दुर्जयः १४ सुखं केषां १५ दुःखं किं १६ मुक्ति-रस्ति का १७ कः शिष्यः १८ को गुरुःप्रोक्तः १९ सर्वे कुत्रा-विवादिनः २०

इन मैं एक एक प्रश्न के उत्तर मैं पाँच पाँच शार्दूल विक्रीडित छन्द के श्लोक हैं ऐसें यौक्तिक मत की प्रक्रिया सें आत्मसाक्षात्कार का वर्णन है यह ग्रन्थ टिकट भेजनें सें मुकाम जयपुर ठाकुर सौभाग्यसिंहजीकी हवेलीमैं ठा-हरीसिंह जी के पास मिलैगा सो इस के अभ्यास सें आत्मानुभव सि[द्ध] करि दैं पीछैं इस स्वानुभवसारके अभ्यासवें सर्वत्र सिद्धदृष्टि करिकैं कृता-र्थ होवैं ऐसें दोनों ग्रन्थ जीवन्मुक्ति के साधक हैं यातें उत्तम पुरुषों कों उ-चित है कि ऐसें जीवन्मुक्ति सिद्ध करैं और कल्पित पदार्थों के मनन सें हीं वृथा कालक्षेप न करैं ॥

अब यह और समुझो कि अनुभवी पुरुष तो सर्वकौं आत्म रूप मानि कैं सर्व के हित मैं हीं प्रवृत्त होय है काहेतें कि आत्मा के अहित मैं कोई भी प्रवृत्त होवै नहीं और यौक्तिकमतानुयायि पुरुष वृथा वद्‌ब्रह्मानुभव हो अथवा न हो सर्व कौं मिथ्या मानि कैं अविहित

आचरण में निःशङ्क प्रवृत्त होय हैं यातें लोकनिन्दा के भाजन हो
य हैं देखो श्रीकृष्ण नें आसुरी संपत्ति वाले पुरुषों का वर्णन किया है
तहां ऐसें कही है कि

असत्यमप्रतिष्ठं ते जगदाहुरनीश्वरम् ॥

इसका अर्थ यह है कि वे जगत कों असत्य और अप्रतिष्ठ अर्थात् बिना [illegible] कहें हैं तो इस सें यह सिद्ध होय है कि जगत कों सत्य और अविनाशी मा[नें] नें हैं वे दैवी संपत्ति वाले पुरुष हैं और इन संपत्तियों के फल विषय आज्ञा किई है कि

दैवी संपद्विमोक्षाय निबन्धायासुरी मता ॥

तो विवेकी पुरुष विचार दृष्टिसें देखें कि इन में प्रशंसनीय कौन और सर्वत्र चिद्दृष्टि करनें वाले की निन्दा कहीं भी नहीं है यातें सर्व चिद्दृष्टि का होना हीं कल्याण हेतु है सो इस ग्रन्थ के मनन सें सहज है

अब यह और समुझो कि जिस की वासना दृढ होय है पुरुष उ[सी] स्वरूप कों हीं प्राप्त होय है यह सर्व संमत है जैसें जडभरत मृगवासन सें हरिण भये यह पुराणप्रसिद्ध है तैसें हीं इस ग्रन्थ के मनन सें चिद्वासन के उदय सें चिद्रूपता की प्राप्ति इस ग्रन्थ के मननका फल है और जे मिथ्या मनन सें मिथ्या वासनाका परिपाक करें हैं उनके मिथ्या की प्राप्ति हो[य] है जो कहो कि यौक्तिक मतानुयायि पुरुष तो मिथ्यात्व की वासना कों वैराग्य की कारण कहैं हैं यातें वैराग्य इसका फल है तो हम कहैं हैं कि वे तो वैराग्य कों इसका फल कहैं हैं और हमकों शुद्ध रागवृद्धि इसका फल प्रतीत होय है काहेतें कि बड़े २ विद्वान् जिनों वेदान्त शास्त्र के ग्रन्थों की निवृत्ति करते रहे ऐसे साधु और जिनके संस्कृत भाषायें इतर भाषा बोलनें का परित्याग और मैं एकाकी [illegible] में रहें और जिनकों सर्व पुरुष वीतराग मानें उनके शरीर पात के अनन्तर उनके धन पुत्र इत्या[दि] संबन्ध ([illegible] सिद्ध हुआ यह प्रसिद्ध है हम व्यवहार विरुद्ध मानिकें उनका नाम ग्रहण नहीं करें हैं।

और जिनके सर्वत्र चिद्दृष्टि है उनमें यह दोष संभवे नहीं काहेतें कि जो उनके व्यवहारार्थ संबन्ध भी होय तो उनका सर्व व्यवहार चिद्रूप हीं होय है इसमें विवश प्राचीन आचार्यों नें कहा है कि

सर्वोऽपि व्यवहारोऽयं ब्रह्मणा क्रियते बुधैः ॥

इसका अर्थ यह है कि अनुभवी पुरुष सर्व व्यवहार प्रज्ञसैं हीं करें हैं जैसैं भावनगरमैं गगा ओझा ओर जूनागढमैं गोकलजी झाला यह सर्वत्र ब्रह्म दृष्टिसैं हीं सकल राजकार्य करते जीवन्मुक्त रहे ओर जे व्यवहारकौं मिथ्या देखें हैं उनके व्यवहार संभवै ही नहीं काहेतें कि जो मृगतृष्णा के जलकौं मिथ्या जानें है सो पानकरणें में प्रवृत्त होवै नहीं तो इसकथनका तात्पर्य यह है कि जे जगत् कौं मिथ्या मानें हैं उनके आत्मसाक्षात्कार के अनन्तर व्यवहार संभवै नहीं यद्यपि इननें आत्मसाक्षात्कार के अनन्तर अविद्याकी निवृत्ति तो मानी ओर जगत् की अनिवृत्ति देखिकैं प्रारब्ध तथा अविद्या वासना इत्यादि कारणौं की कल्पना जगत् की अनिवृत्तिमैं किई तथापि यहाँ इन कारणौं का असंभव देखिकैं (जो जगत् अविद्या कार्य होता तो अविद्या की निवृत्तिसैं इसकी निवृत्ति होती ओर जो अविद्या जगत्‌की तरैंहं व्यवहारिक होती तो जैसें आत्मसाक्षात्कार के अनन्तर जगत् की निवृत्ति नहीं भई तैसें इसकी भी निवृत्ति नहीं होती अर्थात् जैसें घट मृत्तिका का कार्य है तो मृत्तिका की निवृत्ति भयें घट की निवृत्ति होय है तैसें जगत् जो अविद्या का कार्य होता तो अविद्या की निवृत्ति सें निवृत्त होता ओर जैसें व्यावहारिक घटकी निवृत्ति नहीं होय है तो उसकी उपादान मृत्तिका भी बनी हीं रहे है तैसें जो आत्मसाक्षात्कार के भयें व्यावहारिक जगत् बना रहा तो जगत् की उपादान अविद्या निवृत्त हो सके नहीं ओर अनुभव करें हैं तो अविद्या प्रतीत होवै नहीं किन्तु आत्मामैं अविद्या का त्रैकालिक अभाव भासे है तो जगत् अविद्याकार्य कैसें हो सके) इनके ऐसी शङ्का होय है सो इनके मत की प्रक्रियासैं इसका समाधान होसके नहीं यातैं यह शरीरपात पर्यन्त सन्दिग्ध ही रहैंहैं।

ओर जिनके सर्वत्रचिद् दृष्टि है उनके इस शङ्का के उत्थानका अवकाश ही नहीं है यातैं शरीरस्थिति पर्यन्त असन्दिग्ध होकर आत्मानन्दानुभव करैं हैं ओर सदा सुखमग्न रहैंहैं यातैं सकल अधिकारी पुरुषोंकों अखण्ड आनन्द होनें के अर्थ हमनें इस ग्रन्थकों बनाया है सो सकल अधिकारी पुरुष इसकों ग्रहण करिकैं इसके मननसें सर्वत्रचिद्दृष्टि करिकैं कृतार्थ होवैं ओर ग्रन्थकर्त्ताके परिश्रमकों सफल करैं यह प्रार्थना है।

अब यह हम ओर कहैंहैं कि इसग्रन्थमैं देखिकैं यौक्तिकमतानुयायि

आचरण मैं निःशङ्क प्रवृत्त होय हैं यातैं लोकनिन्दा के भाजन होय हैं देखो श्रीकृष्ण नैं आसुरी संपत्ति वाले पुरुषों का वर्णन किया है तहाँ ऐसैं कही है कि

असत्यमप्रतिष्ठं ते जगदाहुरनीश्वरम् ॥

इसका अर्थ यह है कि वे जगत् कौं असत्य और अप्रतिष्ठ अर्थात् विनाशी कहैं हैं तो इस सैं यह सिद्ध होय है कि जगत् कौं सत्य और अविनाशी मानैं हैं वे दैवी संपत्ति वाले पुरुष हैं और इन संपत्तियों के फल विषय मैं आज्ञा किई है कि

दैवी संपद्विमोक्षाय निबन्धायासुरी मता ॥

तो विवेकी पुरुष विचार दृष्टिसैं देखैं कि इन मैं प्रशंसनीय कौन है और सर्वत्र चिद्दृष्टि करनैं वाले की निन्दा कहीं भी नहीं है यातैं सर्वत्र चिद्दृष्टि का होना हीं कल्याण हेतु है सो इस ग्रन्थ के मनन सैं सहज है।

अब यह और समुझो कि जिस की वासना दृढ होय है पुरुष उस स्वरूप कौं हीं प्राप्त होय है यह सर्व संमत है जैसे जडभरत मृगवासैं हरिण भये यह पुराणप्रसिद्ध है तैसैं हीं इस ग्रन्थ के मनन सैं चिद्वास के उदय सैं चिद्रूपता की प्राप्ति इस ग्रन्थ के मननका फल है और जे मिथ्या मनन सैं मिथ्या वासनाका परिपाक करैं हैं उनके मिथ्या की प्राप्ति होय है जो कहो कि यौक्तिक मतानुयायि पुरुष तो मिथ्यात्व की वासना वैराग्य की कारण कहैं हैं यातैं वैराग्य इसका फल है तो हम कहैं हैं कि सो वैराग्य कौं इसकाफल कहौ हैं और हमकौं शुद्ध रागवृद्धि इसकाफल प्रतीत होय है काहेतैं कि बड़े २ विद्वान् जिनैं वेदान्त शास्त्र के ग्रन्थों का निरूपण करते रहे ऐसे साधु और जिनके संस्कृत भाषामैं [illegible] बोलनैं का परित्याग और जे एकाकी एकान्तवास मैं रहैं और जिनकौं बड़े पुरुष वीतराग मानैं उनके शरीर पात के अनन्तर उनके पास [illegible] संचय [illegible] सिद्ध हुआ यह प्रसिद्ध है इस व्यवहार विरुद्ध मानिकैं इसका नाम दृष्टा नहीं करें हैं।

इसका अर्थ यह है कि अनुभवी पुरुष सर्व व्यवहार ब्रह्मसैं हीं करैं हैं जैसैं भावनगरमैं गगा ओझा और जूनागढमैं गोकलजी झाला यह सर्वत्र ब्रह्म दृष्टिसैं हीं सकल राजकार्य करते जीवन्मुक्त रहे और जे व्यवहारकौं मिथ्या देखैं हैं उनके व्यवहार संभवै ही नहीं काहेतें कि जो मृगतृष्णा के जलकौं मिथ्या जानैं है सो पानकरणें मैं प्रवृत्त होवै नहीं तो इसकथनका तात्पर्य यह है कि जे जगत्‌कौं मिथ्या मानैं हैं उनके आत्मसाक्षात्कार के अनन्तर व्यवहार संभवै नहीं यद्यपि इननें आत्मसाक्षात्कार के अनन्तर अविद्याकी निवृत्ति तो मानी और जगत् की अनिवृत्ति देखिकैं प्रारब्ध तथा अविद्या वासना इत्यादि कारणों की कल्पना जगत् की अनिवृत्तिमैं करे तथापि यहाँ इन कारणों का असंभव देखिकैं (जो जगत् अविद्या कार्य होता तो अविद्या की निवृत्तिसैं इसकी निवृत्ति होती और जो अविद्या जगत्‌की तरैंहं व्यवहारिक होती तो जैसैं आत्मसाक्षात्कार के अनन्तर जगत् की निवृत्ति नहीं भई तैसैं इसकी भी निवृत्ति नहीं होती अतःत् जैसैं घट मृत्तिका का कार्य है तो मृत्तिका की निवृत्ति भयें घट की निवृत्ति होय है तैसैं जगत् जो अविद्या का कार्य होता तो अविद्या की निवृत्ति सें निवृत्त होता और जैसैं व्यावहारिक घटकी निवृत्ति नहीं होय है तो उसकी उपादान मृत्तिका भी बनी हीं रहे है तैसैं जो आत्मसाक्षात्कार के भयें व्यावहारिक जगत् बना रहा तो जगत् की उपादान अविद्या निवृत्त हो सके नहीं और अनुभव करैं हैं तो अविद्या प्रतीत होवै नहीं किन्तु आत्मामैं अविद्या का त्रैकालिक अभाव भासे है सो जगत् अविद्याकार्य कैसें हो सके) इनके ऐसी शङ्का होय है सो इनके मत की प्रक्रियासैं इसका समाधान होसके नहीं यातैं यह शरीरपात पर्यंत सन्दिग्ध ही रहैंहैं ।

और जिनके सर्वत्रचिद् दृष्टि है उनके इस शङ्का के उत्थानका अवकाश ही नहीं है यातैं शरीरस्थिति पर्यन्त असन्दिग्ध होकर आत्मानन्दानुभव करैं हैं और सदा सुखमग्न रहैंहैं यातैं सकल अधिकारी पुरुषोंकौं अवश्य आनन्द होनें के अर्थ हमनें इस ग्रन्थकौं बनाया है सो सकल अधिकारी पुरुष इसकौं ग्रहण करिकैं इसके मननसैं सर्वत्रचिद्दृष्टि करिकैं कृतार्थ होवैं और ग्रन्थकर्त्ताके परिश्रमकौं सफल करैं यह प्रार्थना है ।

अब यह हम और कहैंहैं कि इसग्रन्थमैं देखिकैं यौक्तिकमतानुयायि

प्रथम आवृत्ति मैं तो इनमैं विषय विभाग करै तात्पर्य यह है कि इ
कल्पितांश और अनुभवांश इनका विभाग करै पीछे कल्पितांशका त
करिकैं अनुभवांशका मनन करै ऐसैं मनन करतैं २ प्रमेय वस्तु मैं सं
निवृत्त होकर इसके स्थिरता होजाय है यह ही निदिध्यासन है इसैं प
त्म साक्षात्कार होय है इसके अनन्तर आभास वाद की प्रक्रिया सैं अ
का मनन करै पीछैं प्रतिबिम्बवादकी प्रक्रियासैं अभेदका मनन करै पी
अवच्छेदकवाद की प्रक्रिया सैं अभेदका मनन करै पीछैं एक जीववाद
प्रक्रियासैं अभेदका मनन करै परन्तु यावत्काल अपनें साक्षिस्वरूप मैं पूर्ण
प्रतीत होवै नहीं तावत्काल आपके अभेद सिद्धि मैं निश्चय नहीं मान
चाहिये यद्यपि इन ग्रन्थों मैं अभेद की साधक युक्तियां तथा प्रमाण बहु
हैं तथापि उनसैं अभेदका भान होवै नहीं काहेतैं कि अभेदभानका प्रका
रहस्य है यातैं परम्परोपदिष्टऔर जिनकों अभेद भान है उनके कहे उपा
सैं जीव और परमात्मा इनके अभेदका भान होय है जैसैं हमनें इस ग्र
के अन्त मैं गुरूपदिष्ट स्वानुभूत एक प्रकार लिखा है ऐसैं जब जीवात्मा औ
परमात्मा इनके अभेदका भान होजावै तब जीव जगत् और परमात्मा
अभेदकी दृष्टि करनें के अर्थ इस ग्रन्थका अभ्यास करै ऐसैं सर्वत्र ब्रह्मदृ
करिकैं पुरुष कृतकृत्य होयहै सो यह दृष्टि यावत्काल नहीं होवै तावत्काल
अपनें इष्टदेवसैं प्रार्थना करता रहै और शङ्कर कों अथवा श्रीहरि कों
इष्टदेव मानैं यह हमारा अनुभव है।

और द्वितीय अभेदभानका प्रकार इस ग्रन्थका मनन है जे ब्राह्मण
नहीं हैं वे तो पूर्वोक्त प्रकार सैं अभेदानुभव करैं और जे ब्राह्मण हैं वे
इस ग्रन्थ के मनन सैं अभेदानुभव करैं हमारे दोनों प्रकार अनुभूत हैं।

अब अनुभवी पुरुषों सैं यह प्रार्थना है कि आप मैं जिन जिनकों
जिस जिस प्रक्रिया सैं गुरुनैं अभेदभान कराया है आप उस उस प्रक्रिया
कों प्रसिद्ध करैं तो अधिकारी पुरुष मुक्ति नामवैं निकसि कैं कृतार्थ होवैं
और आपका तथा आपके उपदेशकों का धन्यवाद करैं जैसैं हमारे इस
ग्रन्थ कों पढ़िकैं हमारे उपदेशकों का धन्यवाद करैंगे यातैं हीं अनुभवी
पुरुषों के विषय मैं विद्यारण्य स्वामी नैं पूर्व कहा है कि

अज्ञानबोधान्नैवाऽन्यत्कार्यमस्त्यत्र तद्विदः ॥

इसका अर्थ यह है कि अज्ञ को बोध करानें तैं भिन्न तद्विद् कों कार्य
नहीं है।

ओर सगुण ब्रह्म की उपासना कहनेका प्रयोजन यह है कि ऐहिक दुःखकी निवृत्ति के विना स्थिरता होवै नहीं ओर स्थिरता के विना आत्मविद्या होवै नहीं सो मौक्तिक मतानुयायि पुरुष ता श्री कृष्ण कों सगुण ब्रह्म मानें हैं ओर उनकी यह प्रतिज्ञा है कि

अनन्याश्चिन्तयन्तो मां ये जनाः पर्य्युपासते
तेषां नित्याभियुक्तानां योगक्षेमं वहाम्यहम् ॥

इस का अर्थ यह है कि जे भेद बुद्धि का त्याग करिकैं मेरी उपासना करैं हैं नित्याभियुक्त जे वे हैं तिनको मैं योग क्षेम करूं हूं यातैं सगुण ब्रह्म की उपासना करना यह हमारा निश्चय है ॥

इति शुभम् ।

सोरठा ॥

हरि नहिँ पूरन होइ तो मैं अरु जग हैं सही ।
हरि है पूरन ज्योइ तो मैं अरु जग एक हरि ॥१॥
आपहि होत उपास्य आप उपासक होइ कैं ।
करै नित्य ही दास्य हरि लीला को जान सक ॥२॥
श्रुति पावत नहिँ पार रैन द्योस वरनन करत ।
जो नर रत धन दार सो किहिँ विधि वरनन करहि॥३॥
अपनी रचना देखि आप हि मोह विवश भयो ।
वेदतत्वकों लेखि सर्वरूप आप हि लह्यो ॥४॥

स्वानुभवसार का शुद्धि पत्र।

पृ०	पं०	शुद्धपाठ
२	१७	अज्ञान
२	२४	सहायतासें
३	१३	पदार्थ
३	१७	दूषण
३	१९	दूर
३	२१	परन्तु
४	३	हुवा
६	१	कर्म
६	५	करैगा
६	७	यातैं
६	१०	का तो
६	१४	पटादिक
८	३	प्रतीति
९	२४	यातैं
१०	२१	दूसरा
१०	२५	अभाव
१६	१९	कहुवाँ
१७	३	अप्रामाणिक
१९	१३	कपाल
२०	९	तैसें
२०	२१	महत्व
२०	२३	द्यणुक का
२२	२४	तो
२२	२८	व्यर्थ
२३	३०	प्रत्येक
२४	२२	आरम्भ
२४	२६	जैसें
२५	३	आरम्भवाद
२६	८	मानैंगे तो
२६	२३	अन्यथा सिद्ध
२७	६	मानौं
२८	१४	क्षिक
२८	३०	दूध ओर कार्य्य है
३०	२	अवयवों मैं
३१	४	स्पर्श
३१	१०	आकाश
३१	१४	अन्तर्मैंसूत्र
३१	१९	शब्द
३२	७	अप्रामाणिक
३२	१५	नित्यपणौं
३२	३०	सिद्ध होगा
३६	२९	बिनिगमना
३८	२८	पक्ष
३९	१९	घट
४०	२४	होगा
४२	७	दुःखों फूं
४३	३०	कहैहैं
४६	६	सम्प्रदाय
४९	२	का यह अर्थ
५०	२४	अनुत्पत्यभाव
६०	१४	उसका
६१	१५	प्रागभाव का
६१	२३	जावै
६६	२५	मीयमाना
७२	८	तात्पर्य
७४	२४	धर्ममन-संयोग
७४	३०	ज्ञानसामान्य
७६	३	ज्ञान विशेष २
७६	८	विशेष

पृ०	पं०	शुद्धपाठ
९७	१	विशेष ज्ञान
९७	२	ये ज्ञान
८१	२७	असद्रूप
८१	२९	सद्रूप
८२	१	असद्रूप
८२	१४	असत्कार्यवाद
८२	१५	असत्
८४	१८	वर्त्तमानकालासत्
८४	१८	पूर्वोत्तरकालासत्
८४	१९	वर्त्तमानकालासत्
८४	२१	पूर्वोत्तरकाल
८६	५	यतायो
८६	१४	हो गये
८६	२७	सद्रूप
८६	२१	सद्रूप
८६	३७	गुणसमुदायरूप
८८	४	आवरण
८८	१५	न्याय के
८८	१९	दो
८९	१४	समुदाय
९१	२९	गुण समुदाय
९२	१७	गुणसमुदाय
९४	२९	निराधार
९५	८	[illegible]
९५	१५	ये को
९५	१७	निर्देश
९६	६	[illegible]
९६	१५	अध्यात्मविद्या के
९६	१७	[illegible]
९६	२८	सद्रूप

पृ०	पं०	शुद्धपाठ
१००	१३	तुम
१००	१४	स्थितिस्थापकी
१०१	१३	इत्यादिक
१०१	१५	मूल १०४।७ सुजाण
१०५	२१	समवाय सम्बन्ध
१०६	१५	तुम
१०७	२	न्यायका
१०८	३७	तद्रूप
११२	१	निरावरण
११२	२९	काव्य प्रकाश
११३	२२	नाश
११४	२३	अभाव
११५	३	नष्ट भी
११५	६	अज्ञान
११५	२९	अज्ञानी
११६	२२	जीवकूं
११६	२२	वस्तुका
११७	७	जीवोंमें
१२१	२७	मूलहूँ
१२२	५	षट्शास्त्र
१२२	१५	आत्मा
१२३	२७	भगवान् के
१२४	२	ईश्वर
१२७	१९	प्रयोग
१२८	२१	पुरुष
१२९	२७	महंतकों
१३०	५	चक्रवर्ती
१३१	२	[illegible]
१३१	११	पूर्वे
१३२	१३	[illegible]

पृ०	पं०	शुद्धपाठ
२०१	२३	वेदान्त
२०१	२८	करैं
२०२	४	बतावा
२०२	६	ध्यान
२०२	७	तुमारे
२०२	८	दुःखौं का
२०२	२९	ग्रव
२०२	३०	चतुर्थ
२०५	८	अभिमान
२०५	८	प्रतीति
२०५	११	किन्तु१६ सो
२०५	२२	विशेष्य
२०५	३०	व्यवहार
२०५	३०	अवकाश
२०६	२	आभासकूँ
२०६	७	काहेतैं
२०६	२०	प्रमाता
[illegible]६	२४	प्रतीति
[illegible]७	१५	प्रवेश
[illegible]७	१६	च्छेदक
[illegible]७	२८	प्रतिबिम्बवाद
[illegible]७	२९	प्रथम
[illegible]७	२९	प्रतिबिम्ब
[illegible]७	३०	ज्योंइठ करिकै
[illegible]८	२	अन्तःकरण
[illegible]८	७	प्रवेश
[illegible]८	८	इस
[illegible]८	१०	ज्यो
[illegible]८	११	दर्पण
[illegible]८	१२	सावयव
२०८	१५	एक
२०८	१८	परमात्म
२०८	२५	दर्पणकूँ
२०८	२६	दर्पण के
२०८	२६	दर्शन का
२०८	२८	उलटयाँ
२०८	२९	दूस
२०९	४	सकै
२०९	६	अब
२१०	२	विचार
२१०	३	हम
२१०	५	और
२१०	८	चाहिये
२१०	११	बिम्बरूप
२१०	११	प्रतिबिम्बवाद
२१०	१६	ज्यो
२१०	२२	प्रवृत्ति
२१०	३०	उपाय
२११	४	करण मत
२११	८	मनुते
२१२	१०	महावाक्य
२१२	१२	यो
२१३	६	वार्त्ता सर्व
२१३	१०	सर्व
२१३	१८	अर्थ
२१३	२५	सो
२१४	१	वाक्य मैं
२१४	२६	यो
२१४	३०	योध
२१५	२०	यो

पृ०	पं०	शुद्धपाठ
१६९	२०	मेरे
१७०	१०	दोष
१७०	१०	मिथ्यात्व
१७०	१२	परमात्म
१७०	१२	कल्पना
१७०	१८	चिद्रूप
१७१	६	क्षुधा
१७१	१३	स्वर्णनं
१७१	१६	करिकैं
१७१	१८	यता
१७१	२०	वाक्य
१७१	२०	करवें
१७२	१६	चेतनाश्रित
१७२	१८	करिकैं
१७२	१९	रज्जुका
१७२	२०	दोनूं
१७३	१	तहाँ
१७३	१०	मानैं
१७३	१२	कारण
१७३	१३	वन्ध्या
१७३	१४	होवें
१७३	१५	ख्यातिका
१७३	१५	अङ्गीकार
१७३	१५	स्वटिक
१७३	१६	होवे
१७३	१९	[illegible]
१७३	२०	पुरुषाकार
१७३	२१	होवें नैं
१७३	२६	[illegible]
१७३	२७	रज्जुसर्प
१७३	२७	अनिर्वचनीय
१७३	३०	पदार्थों
१७३	३०	स्वप्नपदार्थों मैं भी
१७५	५	प्रमाता की
१७६	२३	जिसकूं
१७६	२८	उस ही
१८१	१०	सर्व
१८२	१३	रज्जुका
१८३	१	मानैं
१८६	११	यहाँ
१८६	१४	अदर्शन
१८६	१५	संयत्न
१८६	२१	तौ
१८६	२२	आत्माका विशेष
१८६	२७	कमुक्ति
१८७	२	कलमैं
१८७	२९	उपादान
१८७	३०	अनुभव
१८८	१०	उपासक
१८९	१२	सद्भूत
१९१	७	माँहि
१९१	१०	कपट
१९१	१२	माँहीं
१९२	४	वैरोल्या
१९३	११	नहिं
१९४	६	विवचना
१९५	३२	[illegible]
१९६	५	[illegible]
१९९	२६	[illegible]
२०१	११	[illegible]

पृ०	पं०	शुद्धपाठ
९	१२	व्यावहारिक
९	२६	अखण्ड
१३	१	कहनें का